श्री स्वामी कथा सार

।। गुं गुरुभ्यो नमः।।

श्री स्वामी कथासार

लेखक : दासानुदास
शिवनाथ शर्मा

प्रकाशक: श्री पीताम्बरा संस्कृत परिषद्
दतिया (म. प्र.)

मूल्य : १००.०० रुपये

प्रकाशकीय

श्री स्वामीकथासार एक ऐसी कृति के रूप में हमें उपलब्ध हुई, जिसने स्वामी भक्तों के मन, मस्तिष्क को स्पर्श किया है, उन्हें नवीन जानकारियों, नवीन अनुभवों तथा रहस्यों को न केवल उद्घाटित किया है, बल्कि उनके हृदय में स्थायी स्थान बनाया है।

श्री पीताम्बरा पीठाधीश्वर अनन्त श्री विभूषित श्री स्वामी जी महाराज द्वारा की गई लीलाओं तथा उनके वचनों को इस प्रकार अभिव्यक्त किया गया है, जैसे रामकृष्ण परमहंस की लीलाओं तथा उपदेशों को रामकृष्ण लीलामृत तथा रामकृष्ण बचनामृत में संकलित किया गया है। सुस्पष्ट, सरल, मधुर एवं धारा प्रवाह शैली में लिखा गया ग्रन्थ "श्री स्वामीकथासार" का यह तीसरा संस्करण भक्तजनों को समर्पित करते हुए अपार हर्ष की अनुभूति हो रही हैं।

आशा है, कि प्रस्तुत संस्करण पाठकों के हृदय को भक्ति रूप से अभिसिंचित करता रहेगा एवं गुरू उपदेशों से सतत् मार्गदर्शन प्रदान करेगा।

(रेणु शर्मा)
मंत्री
श्री पीताम्बरा पीठ
दतिया (म.प्र.) 475661

बसंत पंचमी
28 जनवरी 2012, शनिवार

-॥ आमुख ॥

धन्याः खलु महात्मानो मुनयः सत्यसम्मताः।
जितात्मानो महाभागा येषां न स्तः प्रियाप्रिये॥

वे सत्य की उपासना करने वाले जितात्मा, महाभाग, महात्मा, मुनिगण धन्य हैं जिन्हें न तो किसी से अनुराग है और न किसी से द्वेष। जो सभी प्राणियों में समान भाव रखकर सभी को समदृष्टि में देखते हैं वे महात्मा धन्य हैं।

प्रियान्न संभवेद् सौख्यमप्रियादपि न भयम्।
ताभ्यां हि ते वियुज्यन्ते नमस्तेषां महात्मनाम्॥

वे महात्मा धन्य हैं जिन्हें प्रिय की प्राप्ति में न तो सुख होता है और अप्रिय की प्राप्ति में दुःख भी नहीं होता है, जिनकी वृत्ति सुख-दुःख में समान रहती है, ऐसे महात्माओं के चरणों में बार-बार प्रणाम है।

गंगा पापं शशी तापं दैन्यं कल्पतरुस्तथा।
पापं तापं च दैन्य चघ्नन्ति सन्तो महाशयाः॥

श्री गङ्गाजी पापों का क्षय करती हैं, चन्द्रमा ताप को शमन करने में समर्थ है और कल्पवृक्ष दैन्य को नष्ट कर देता है, किन्तु महानुभाव सन्त तो पाप, ताप और दैन्य सभी को नष्ट करने में समर्थ होते हैं। श्री पीताम्बरापीठाधीश्वर श्री स्वामीजी महाराज इन सभी गुणों से सम्पन्न अनन्त ज्ञान के भण्डार दैविक शक्तिमय परम तपस्वी सन्त थे। ऐसे षडैश्वर्य सम्पन्न महात्माओं का

महात्य ही संसार में सर्वत्र व्याप्त है। यहाँ 'श्री स्वामी कथासार' नामक ग्रंथ जिसके विषय में यह कहना भी अतिशयोक्ति नहीं होगा कि उस चारू चरितावली का चित्रण स्वयं विधाता के ही द्वारा लोक कल्याण हेतु किया गया है। उस विधाता द्वारा रचित ग्रन्थ का महात्म्य मेरे जैसे अल्पमति द्वारा अंकित किया जाना सम्भव ही नहीं हो सकता। उस अमित महात्म्य वाले स्वामीजी की कुछ कथाओं के सार का महात्म्य लिखने का भार उनके द्वारा अपने इस कुण्ठित बुद्धि शिष्य को सौंपा गया है जिसके पास अपना कोई शब्द नहीं है। ठीक है, हे स्वामी! आपका यह शिष्य भी परीक्षाकाल में नकल करने वाले विद्यार्थी की भाँति आपके द्वारा ही रचित शास्त्र के आधार पर उलटा-सीधा जैसा बन पड़ेगा, चित्रित करने का प्रयास करता है, किंकर्तव्यविमूढ़ समझ कर इस कर्म के लिए मुझे क्षमा करें।

तत्कर्म हरतोषं यत्साविद्या तन्मतिर्यया।
तद्वर्णं तत्कुलं श्रेष्ठं तदाश्रमं शुभं भवेत् ।।

जिस कर्म के द्वारा स्वामी सन्तुष्ट हो सकें वास्तव में तो वही कर्म श्रेष्ठ कहा जा सकता है। और जिसमें श्री स्वामि-चरणों में मति उत्पन्न हो सके वही सच्ची विद्या है। जिस वर्ग, जिस कुल और जिस आश्रम में रहकर श्री स्वामी जी की कीर्ति का गान करने का सुन्दर सुयोग प्राप्त हो सके, वही वर्ण, कुल तथा आश्रम शुभ और परमश्रेष्ठ है।

मैं नहीं जानता मेरा कर्म कैसा है; परन्तु हे सद्‌गुरुनाथ ! आपकी ही आज्ञा समझकर, आपसे ही मिली बुद्धि द्वारा और आपके अनुग्रह के भरोसे पर ही अब इस दिशा में मेरा यह प्रयास अल्प है। इस ग्रंथ का सर्वोच्च महात्म्य यही है कि इसमें श्रद्धा रखने वाले व्यक्ति के पग भ्रष्ट मार्ग

की ओर नहीं जा सकते।

'रसो वै रसः' इस श्रुति के अनुसार परब्रह्म रसस्वरूप है। रसिक शेखर परब्रह्म दो रूपों में रस का आस्वादन करते हैं- रस अर्थात् प्रेम और ज्ञान के विषद रूप में, दूसरे प्रेम व ज्ञान के आश्रय रूप में। वास्तव में इन दोनों रूपों में रसास्वादन ही रस आस्वादन और रसिक शेखरत्व की चरम सीमा है। प्रेम का विषय होकर रसास्वादन करते समय ब्रह्म ही बृज बिहारी गोपीवल्लभ श्री कृष्ण कन्हैया के रूप में प्रकट होते हैं, ज्ञान का विषय होकर वे ही कैलाशपति शंकर बन जाते हैं। प्रेम का आश्रय होकर रसास्वादन करते समय वे ही राधिका जी हो जाते हैं तो ज्ञान वैराग्य और भक्ति के मिश्रित आश्रय रूप में रसास्वादन करते समय वे ब्रह्म ही श्री पीताम्बराजी की कान्ति और शिवत्व भाव धारण कर श्री स्वामीजी महाराज के स्वरूप में प्रकट होते हैं। रसशेखर महेश्वर ही आश्रय-जातीय रस का आस्वादन करने के लिए मूल आश्रय विग्रह महाभाव स्वरूपा योगमाया श्री बगला भगवती की कांति और लोक कल्याण भाव अङ्गीकृत कर राष्ट्रगुरु श्री स्वामी जी के रूप में प्रादुर्भूत हुए। इस ग्रन्थ के आश्रय से ही प्रभु के चरणों का आश्रय प्राप्त हो सकता है, यही इस ग्रंथ का मुख्य महात्म्य है।

श्री स्वामी जी महाराज के विषय में यह बात कि वे कहाँ के निवासी थे, किस जाति के थे और उनका नाम क्या था इत्यादि बातों का निश्चित ज्ञान न तो उन्होंने स्वयं किसी को दिया ही और न किसी को है ही। किसी के पास इस विषय में यदि कोई जानकारी है तो वह भी अनुमानों के आधार पर ही है। कुछ लोग जो उनके सान्निध्य में रहे और जिन्हें यह सब जानने की जिज्ञासा रही, उन्होंने भाषा और क्षेत्र प्रेम इत्यादि से दो बातों के तो अधिक विश्वसनीय अनुमान लगाए हैं।

एक तो यह कि वे धवल कान्तिवाले चन्द्रशेखर वाराणसी के निकटवर्ती क्षेत्र में ही कहीं किसी महाभागा जननी की कोख से प्रादुर्भूत हुए और दूसरे यह कि जाति से वे ब्राह्मण थे। श्री जगदम्बा के अतुलनीय पूत और शांकर अद्वैत मत के पोषक सन्यासी तथा ज्ञान के सागर उन सद्‌गुरु स्वामी जी को आज विश्व में कौन नहीं जानता। वे भली- भाँति जानते हैं जिन्होंने पूज्य करपात्री जी महाराज, बद्रिकाश्रम ज्योतिर्मठ के शंकराचार्य श्री स्वरूपानन्द जी महाराज, सुमेरुपीठ वाराणसी के शंकराचार्य श्री शंकरानन्द जी महाराज, काञ्ची कामकोटि पीठ के शंकराचार्य स्वामी जयेन्द्र सरस्वती महाराज, शृङ्गेरी मठ, श्री जगन्नाथपुरी और द्वारकापीठ के जगद्‌गुरु शंकराचार्यों, भानपुरापीठ के निवृत्तमान शंकाराचार्य श्री सत्यमित्रानन्द गिरि महाराज आदि वैदिक धर्माचार्यों को घण्टों श्री स्वामीजी महाराज से अपनी समस्याओं का समाधान प्राप्त करते देखा है। वे लोग भी भली-भाँति जानते हैं जिन्होंने अनेक जैन मुनियों, पारसी और ईसाई धर्मगुरुओं, मुसलमान फ़कीरों-सूफ़ी-सन्तों और धर्मगुरुओं तथा सिक्ख सन्तों को उनके सम्प्रदायों सम्बन्धी उन गूढ़तम रहस्यों का जिनको वे स्वयं भी नहीं जानते थे, गुरुदेव श्री स्वामीजी महाराज के मुख से उपदेश लेते देखा है और डा. सम्पूर्णानन्द, महामहोपाध्याय गिरधर शर्मा चतुर्वेदी, सुब्रह्मण्यम भारती वेदाचार्य इत्यादि देश के उद्‌भट विद्वानों, सत्यनारायणसिंह, कमलापति त्रिपाठी, नीलम संजीव रेड्डी, भगवत् दयाल शर्मा इत्यादि अनेक मूर्धन्य राजनीतिज्ञों को तथा रज्जू भैया इत्यादि अनेक अराजनैतिक संगठनों के अध्यक्षों को भी परमपूज्य महात्मा से दिशा निर्देश प्राप्त करते देखा है। श्री स्वामीजी महराज ज्ञान के अनन्त भण्डार थे। विश्व की कई भाषाओं के ज्ञाता उच्च व्यक्तित्ववाले वे गुरुदेव स्वदेश की भी अनेक क्षेत्रीय भाषाओं के अच्छे ज्ञाता थे। प्रत्येक धर्म के

दर्शन के वे अच्छे मर्मज्ञ थे। कहने का तात्पर्य है कि षडैश्वर्य सम्पन्न महात्मा श्री स्वामीजी लोक कल्याण के लिए ही प्रकट हुए थे। पूज्य श्री की धर्म निरपेक्षता, समाज सुधार और अस्पृश्यता निवारण की समानता तो इस युग में मिलना ही कठिन है। उनकी ज्योतिष्मती औषधि से कौन से भयंकरतम रोगों का निवारण नहीं हुआ ? इस ग्रन्थ में वर्णित कथाओं के सत्यापन की आवश्यकता नहीं है क्योंकि उनसे सम्बन्धित प्रायः सभी भक्त और शिष्य आज भी जीवित हैं।

श्री स्वामीजी के स्वरूप में अनेक भक्तों ने परमपुरुष के विराट स्वरूप के दर्शन किए। अनेक बार कैलाशपति शिव के स्वरूप में उनको समाधिस्थ देखा, द्वापुरावत्तार श्रीकृष्ण के रूप में गीता का उपदेश करते, त्रेतावतार श्रीराम के धनुषबाण धारण करते हुए रूप में उनको देखा। श्री पीताम्बरा जी के विग्रह में श्री स्वामी जी के स्वरूप के दर्शन और श्री स्वामी जी के स्वरूप में श्री पीताम्बरा जी के विग्रह के दर्शन तो एक सामान्य तथ्य बन गया था। प्रेम, भक्ति और ज्ञानदान तो श्री स्वामीजी की अलौकिकता का प्रधान लक्षण है। उनका हृदय तो नवनीत से भी अधिक कोमल था जहाँ प्रतिक्षण प्रेम, भक्ति और ज्ञान की सुरसरित् ही प्रवाहि रहती थी। जनकल्याण करते हुए अपने पाञ्चभौतिक शरीर को त्याग कर अपने उस परमतत्त्व स्वरूप को भगवती श्री पीताम्बरा के विग्रह में एकात्म होकर अपनी पावन तपःस्थली, भारत की द्वितीय काशी और द्वितीय वृन्दावन कही जाने वाली दतिया नगरी में आप प्रतिष्ठित हैं। आप सर्वमय हैं, भूमा पद से विख्यात हैं, शास्त्र का भी मत है- 'यो वै भूमा तत्सुखं नाऽल्पे सुखमस्ति।' अर्थात् जो भूमा पद है वही परम सुख का स्थान है। इन्द्र, ब्रह्मा आदि के पद भी भूमा पद की अपेक्षा नगण्य है। वे सब पद अल्प ही हैं। अल्प में भला पूर्ण आनन्द कहाँ? इस विषय में मौज में आकर आप गुनगुनाया भी करते थे-

ज्ञानं मे परमं गुह्यं यद्विज्ञानसमन्वितम्।
सरहस्यं तदंगञ्च गृहाण गदितं मया।। (१०/२)

मेरा ज्ञान परमगुह्य है। परमगुह्य होकर भी यह नित्य चार प्रकार का है- १. ज्ञान, २. विज्ञान, ३. रहस्य और ४. तदङ्ग। तुम जीव बुद्धि से उसे नहीं जान सकते, मेरी कृपा से उसकी उपलब्धि करो। ज्ञान मेरा स्वरूप है, विज्ञान मेरी शक्ति है, जीव मेरा रहस्य है और प्रधान मेरा ज्ञानाङ्ग है।

ज्ञान से ही मुक्ति प्राप्त होती है। परन्तु साथ में इसकी सहयोगिनी भक्ति का भी होना अत्यन्त आवश्यक है। भक्ति और ज्ञान ये जीवरूपी हंस के दो पंख हैं। यदि हंस का एक पंख कटा होगा तो वह उड़ ही नहीं सकेगा। हंस के उड़ने के लिए जैसे दोनों पंखों का होना आवश्यक है, उसी प्रकार मुक्ति के लिए श्रद्धा के आधार पर चलने वाली भक्ति और ज्ञान दोनों का ही होना अत्यावश्यक है। बिना भक्ति के ज्ञान व्यर्थ है। 'श्री स्वामी कथासार' का पठन और श्रवण इन दोनों की प्राप्ति कराता है। क्योंकि इसके पढ़ने से ज्ञान और भक्ति दोनों ही उत्पन्न होते हैं। गुरु, इष्ट और मन्त्र एक दूसरे से अभिन्न स्वरूप वाले हैं। इस स्वरूप की साधक के आत्मस्वरूप में व्यवस्थिति हो जाना ही मुक्ति है। यह मुक्ति साधुसङ्ग को प्राप्त किए पुरुष को ही लभ्य है। मार्कण्डेय पुराण के अन्तर्गत चण्डी महात्म्य में योगमाया के सम्बन्ध में कहा गया है- 'हरेः शक्त्यासम्मोहितं जगत्'। अतः श्री पीताम्बरा जी ही वैष्णवी शक्ति विष्णुमाया हैं। इसलिए बिना विष्णुभगवान् की योगमाया श्री पीताम्बरा जी के ज्ञान के बिना सायुज्य मुक्ति सम्भव नहीं है। यही

ब्रह्मास्त्र विद्या है जो पुरुषार्थ चतुष्टय को प्रदान करती है। संसार को परमार्थतत्त्व का ज्ञान बताने के लिए ही, अपनी योगमाया को अपने में समन्वित कर शिवत्वभाव लिए श्री स्वामीजी महाराज के रूप में स्वयं त्रिलोकी पति भगवान् शिव ही इस धन्य धराधाम पर अवतरित हुए थे। श्री पीताम्बरापीठ की स्थापना कर दतिया में श्री वनखण्डेश्वर आश्रम को उन्होंने भक्ति और ज्ञान के तुमुल घोष हेतु अपना रङ्गमञ्च बनाया था। उन्होंने अनेक लौकिक और अलौकिक लीलाएँ करके सब में दृढ़ विश्वास का संचार किया। सबको शिव और शक्ति के अद्वैतवाद का पाठ पढ़ाया। श्री स्वामी ही जगदम्बा हैं और श्री जगदम्बा ही स्वामी हैं, उनकी लीलाएँ अचिन्त्य होती हैं। यथा-

"कौन जानता जननि ! तेरी लीलाओं को त्रिभुवन में।
कभी पुरुष हो कभी प्रकृति हो कभी मत्त होती रण में।।
रचती सृष्टि विधाता बनकर।
पुनः नाश करती बन शंकर।।

बनकर विष्णु व्यस्त तुम रहती जीवों के परिपालन में।
कृष्ण रूप से वृन्दावन में मुरली बजाई थी उपवन में।।
दतिया में श्री स्वामि रूप से सबहिं लगाया जापन में।

कौन जानता जननि ! तेरी लीलाओं को त्रिभुवन में।।

'पाशबद्धो भवेज्जीवः पाशमुक्तः सदाशिवः।' इस कथन के अनुसार माया से आच्छादित होने से जीव और वही तत्त्व माया से मुक्त होने पर शिव हो जाता है। प्रभु के अवतार का कार्य धर्म प्रसार के साथ ही समाज सुधार भी होता है। त्रेतावतार श्री राम ने सेतुबन्ध रामेश्वरम् में ज्योतिर्लिङ्ग की स्थापना की। इससे दक्षिण भारत में बढ़ते हुए शैव और वैष्णव सम्प्रदायों के मध्य व्याप्त कलह को शान्त कर दोनों मतों में ऐक्य स्थापित किया। द्वापुरावतार श्रीकृष्ण ने कौरव और पाण्डवों अर्थात् बुराई और अच्छाई- सत्य के ऊपर बढ़ते हुए असत्य के प्रभाव को रोकने के लिए युद्ध का मार्ग अपनाया। इसी प्रकार कलिकाल में पावनावतार श्री स्वामीजी महाराज ने भगवान् परशुराम के द्वारा कथित क्षत्रिय विरोधी दृष्टिकोण के कारण ब्राह्मणों और क्षत्रियों के मध्य बढ़ती कटुता को समाप्त करने हेतु श्री पीताम्बरापीठ पर एक क्षत्रिय द्वारा श्री परशुराम का मन्दिर बनवाकर श्री परशुराम जी के विग्रह की स्थापना कराई। उनका इस विषय में मत रहा कि ''ब्राह्मण तो कभी क्षत्रिय विरोधी रहे ही नहीं यह धारणा करना भी असत्य है कि श्री परशुराम जी क्षत्रिय विरोधी थे। ब्राह्मण और क्षात्र धर्म तो एक दूसरे के सदैव पोषक रहे हैं। श्री तुलसीकृत 'रामचरितमानस' में धनुष यज्ञ के समय श्री परशुराम- राम और लक्ष्मण संवाद तुलसीदास जी कृत नहीं है। वह तो किसी ने बाद में इसमें जोड़ दिया है क्योंकि यह प्रसंग वाल्मीकि कृत रामायण में

भी नहीं हैं। इसके अतिरिक्त यदि परशुराम जी क्षत्रिय विरोधी होते तो उन्होंने राजा जनक और दशरथ जैसे पराक्रमी क्षत्रिय राजाओं को क्यों नहीं मारा? वास्तविकता यह है कि भगवान् के आठ कलाओं से अवतार होने के कारण भी परशुराम जी ने केवल अत्याचारी क्षत्रियों का ही संहार किया और दुराचारियों को राज्यपदों से च्युत कर दिया।' ब्राह्मण और क्षत्रियों के आपसी विरोध को समाप्त करने वाली पूज्य श्री स्वामीजी की यह वास्तविक सुन्दर व्यवस्था चिरकाल तक मान्य रहेगी। इसी भाँति ही शुक्ल और कृष्ण यजुर्वेद ब्राह्मणों में घोर विरोध रहता था। इसी भेद विरोध को समाप्त करने के लिए श्री स्वामिपाद ने श्री पीताम्बरापीठ दतिया में ब्रह्मयज्ञ का आयोजन कराया जिसमें देश के दोनों शाखाओं के अनुयायी ब्राह्मणों ने एक साथ भाग लिया था। द्वापर में युधिष्ठिर द्वारा ब्रह्मयज्ञ आयोजित कराए जाने के बाद फिर इस प्रकार का आयोजन कलियुग में श्री स्वामी जी महाराज द्वारा ही दतिया (म. प्र.) में सम्पन्न कराया जा सका।

समग्र विश्व में प्रायः लुप्त तन्त्र साधना को प्रकाशित करने वाले, तन्त्र-आगम और वेद-निगम के समन्वित रूप का मानवमात्र को प्रकाश देने वाले, दीन-दुःखी और असहायों के आश्रयप्रदाता ब्रह्मलीन राष्ट्रगुरु अनन्त श्री विभूषित श्री पीताम्बरापीठाधीश्वर परमहंस परिव्राजकाचार्य और देशिक प्रवर श्री स्वामी जी महाराज की अहेतुकी कृपा से भारत वर्ष में ही नहीं प्रत्युत विश्व के कोने कोने में आज सम्याचारी शाक्त साधना की ध्वनि गूँज रही है। शक्तिमन्त्रों के आघोष

स्पन्दनों, स्तोत्रपाठों तथा अनुष्ठानों की ध्वनितरङ्गों से आकाश की शून्यता में न्यूनता आती जा रही है। यज्ञों से वातावरण सुरभित हो रहा सांसारिक भोगों में प्रमत्त रहने वाले पाश्चात्य देशों के अगणित बुद्धिजीवी युवक-युवतियों की प्रवृत्ति भी शाक्त साधना के रहस्य और दर्शन को जानकर तत्त्वज्ञान की ओर असाधारण गति से बढ़ रही है।

तन्त्र साधना का ज्ञान तो विश्व का अध्यात्मगुरु कहे जाने वाले भारतवर्ष ने संसार को प्रारम्भ से ही दिया है। परन्तु सामयिक विकारों के कारण लोग इसके पारमार्थिक स्वरूप को प्रायः भूल चुके थे और यह ज्ञान भी सूक्ष्म रूप में कुछ ही महात्माओं के हृदयाकाश में सिमट कर रह गया था। केवल अभिचारिक षट्कर्मों जिनमें असामाजिक और निन्दनीय प्रक्रियाओं का समावेश है, को ही तन्त्र समझा जाने लगा था। कृत्या ही आगम की देवी मानी जाने लगी थी। उसके इस वीभत्स स्वरूप को देखकर समाज में तन्त्रविद्या को हेय दृष्टि से देखा जाने लगा था। शाक्त साधना का लुप्त हो जाना विश्व के लिए महाप्रलय से कम नहीं था। ऐसे घोर अन्धकारमय समय में स्वयं करुणावरुणालय महेश्वर ने श्री स्वामीजी महाराज के रूप में प्रादुर्भूत होकर तन्त्रविद्या तथा धर्म को अस्त होने से बचा लिया। तन्त्र साधना के प्रति उन्होंने किस प्रकार की वैचित्रिक घटनाएँ एवं अनुकरणीय चरित्र प्रस्तुत कर जनमानस में विश्वास उत्पन्न कर उसको दृढ़ता प्रदान की, ऐसे ही कुछ वृत्तान्तों का चित्रण इस ''श्री स्वामी कथासार'' नामक ग्रन्थ में हुआ है। यह चित्रण श्री

स्वामी जी महाराज से सम्बन्धित कुछ विशिष्ट घटनाओं का दिग्दर्शन मात्र है। इस ग्रन्थ के पठन और श्रवण से असीम आनन्द की प्राप्ति होती है जिसका वर्णन सम्भव नहीं। गुरु के प्रति शिष्य के अपार श्रद्धाभाव से ही उसका कल्याण सम्भव होता है।

प्रत्येक भक्त शिष्य गुरु के प्रति समर्पित अन्य शिष्यों के द्वारा किए गए कार्यों को जानकर आह्लादित होता है और उन कार्यों को अपना ही समझता है। यह ग्रन्थ पूज्यपाद के अलौकिक व्यक्तित्व और उनके सर्वोच्च मानवीय गुणों, मानवमात्र के प्रति उनकी करुणा और सभी के कल्याण के प्रति उनकी सहृदयता इत्यादि का स्मरण कराता है। पूज्य श्री स्वामी जी महाराज के महानिर्वाण के पश्चात् भी उनकी कृपा की अनवरत वर्षा का दिग्दर्शन भी इस ग्रन्थ में वर्णित कुछ वृत्तान्तों से होता है। यह बात सभी को अनुभव सिद्ध है कि जो भी श्रद्धावनत् होकर आज भी उस महान् विभूति से कुछ याचना करता है तो उसको निश्चय ही मनोवाञ्छित फल प्राप्त होता है। उनकी चरणपादुकाओं के आश्रय से मन्त्रदीक्षा ग्रहण करने वाले शिष्यों को आज भी वे ही अनुभूतियाँ हो रही हैं जो श्री स्वामीजी के स्थूल शरीर में विद्यमान रहते हुए होती थीं। पूज्यपाद का कोई भी श्रद्धावान शिष्य यह कहने का साहस नहीं कर सकता है कि वे अब यहाँ नहीं हैं। इस कल्पना मात्र को भी हटाने के लिए उनकी कृपा धारा आज भी अविरल रूप से यहाँ बह रही है। उनकी कृपा को सहज ही ग्रहण करने के दृष्टिकोण से इस ग्रन्थ का श्रद्धापूर्वक पठन और श्रवण

तथा मनन करना अत्यावश्यक है। यह ग्रन्थ सिर्फ़ साधकों के ही लिए नहीं अपितु सर्वसाधारण पीड़ित और दु:खी तथा सुखी सभी लोगों के कल्याण के लिए समान रूप से श्रेयस्कर है। उनकी कृपा असीम है, अनन्त है, नित्य है और अक्षुण्ण है। मुझे ऐसा लगता है कि ''श्री स्वामी कथासार'' का अनवरत पाठ करता रहूँ ताकि-

"लागी लागी सब कहें, लागी बुरी बलाय।
लागी तब ही जानियो, जब आर पार है जाय।।"

हे प्रभो! किसी प्रकार आपका एक भी उपदेश मेरे अन्तःकरण में घुसकर आर पार हो जाय तो मैं स्वयं को आपके श्री चरणों की सच्ची लगन प्राप्त करने योग्य बना सकूँ।

'श्री स्वामी निवास'
रायभा- आगरा (उ.प्र.)
दिनांक- ११-१०-१९८८ ई.।

श्री स्वामिपादचरणपदम्रजोऽनुरजः
एक चरण सेवक

माता बगलामुखी पीताम्बरा देवी
वनखंडेश्वर, दतिया

मुख्य प्रवेशद्वार

श्री स्वामीजी महाराज के इस चित्र के आधार पर मणिपुर धाम,
स्वामी मंदिरम् में स्थापित विग्रह बनाया गया ।

अनंतकोटी ब्रह्माण्ड नायक श्री स्वामीजी महाराज
दतिया, (म. प्र.)

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथा सार

प्रथम अध्याय

श्री गणेशाय नमः। गुं गुरुभ्यो नमः। हे जगज्जननी, लोक व्यवहार एवं जनजीवन में सीताराम, राधाकृष्ण आदि नामों से सर्वप्रथम आपका ही स्मरण किया जाता है। प्राणी को पहले माता का बोध होता है, और माता के द्वारा ही पिता का ज्ञान होता है, अर्थात् शक्ति के माध्यम से ब्रह्म का बोध होता है। अतएव सर्वप्रथम माता ही पूज्यनीय है। आप एक अनादि घट-घट व्यापी ज्योति हैं। माँ बड़ी करुणामयी है। बच्चे के लिए उसकी माँ ही सर्वस्व होती है। दासों का दास 'श्री स्वामी कथासार' को लिखना चाहता है, जिनके दिव्य चरित्र मही को पावन करते हैं। आपकी स्तुति करता है कि- हे जगन्माता, आप ही परमपिता परब्रह्म परमात्मा हैं। श्री स्वामी जी महाराज सर्व महान जिसने जन्म नहीं, इस धरती पर अवतार लिया, नन्दन कानन, वे दतिया बीच दिखा गए, पीत परिधान वाली देवी दे गए, उनकी कथा का वर्णन आपकी कृपा बिना किंचित् भी नहीं हो सकता। हे माँ ! तू बड़ी त्यागमयी है। भगवान् गणेश को समस्त श्रेय प्राप्त हों इसलिए आप उन्हें अपने आगे करके स्वयं पीछे हट जाती है। मैं सर्वप्रथम पूजनीय श्री गणेश जी की स्तुति करता

हूँ कि वे सब विघ्नों को दूर करने की कृपा करें। हे गणपति! आपका स्मरण किए बिना कोई भी काम नहीं होता, क्योंकि इस जगत् के कर्ता-धर्ता आप ही हैं। हे पार्वतीनन्दन ! आपकी कृपा से सारी विपत्तियाँ और सारी बाधाएँ दूर हो जाती हैं। सभी सन्तों की स्तुति करता हुआ, उनकी आज्ञा से 'श्री स्वामी कथा सार' नामक कथाग्रंथ लिखने का यह निजगुरुचरणरजानुरज प्रयास कर रहा है। करुणामय सन्तों की कृपा से यह भू-लोक स्थिर रहता है। स्वयं भगवान् भी उनकी चरण धूल लेने के लिए उनके पीछे चलते हैं और इच्छा करते हैं- यदि उनकी चरण धूल मुझ पर भी गिर जाय तो मैं भी पवित्र हो जाऊँ। सन्त कथा लिखना बिना सन्त कृपा के अति असंभव है। उनका रहस्य कोई नहीं जानता। उनका आवागमन दिव्य होता है, एवं जीवन लोकोत्तर होता है। किन्तु जब सन्तों की कृपा होती है तब ही काम पूर्ण होते हैं। हे जगन्माता! आपकी कृपा से, और आपकी आज्ञा जानकर यह दासनुदास श्री स्वामी चरित्र का वर्णन करने का प्रयास करता है। परमशिव के साकार व निराकाररूप का वर्णन करके ब्रह्मा भी अपने को दोषी मानते हैं और क्षमा याचना करते हैं। पुनः पुनः क्षमा याचना करता हुआ, सद्गुरुनाथ श्री स्वामीजी महाराज, जिनका तेज़पुंज चारों ओर फैला है, मान और सम्मान जिनको नहीं भाये उनके चरणों की बारम्बार वन्दना करता है और प्रार्थना करता है कि हे देव ! आप प्रसन्न हों तथा अज्ञानवश जो त्रुटियाँ रह गई हों उनके लिए क्षमा करें। ''बैठ गए, बैठे रहे, युग युग बीत जायँ। महातीर्थ बनते गए, पड़े जहाँ भी पाँय।।'' हे निखिल शुभों की खान ! हम आपको प्रणाम करते हैं। आपकी स्मृति से निज भाग्य को पावन करें। आपकी कृपा से हम सब का कल्याण हो। संध्या समय एक युवक सन्यासी झाँसी से ग्वालियर राजमार्ग पर पैदल जा रहे थे, रात्रि में विश्राम करने के लिए वे दतिया नगर की ओर मुड़े। वास्तव

में हे मनुदेव ! यह आपका मोड़ नहीं था। बल्कि सदियों से तिरस्कृत दन्तवक्र द्वारा बसाई गई दतिया नगरी के भाग्य का मोड़ था क्योंकि आपके पदार्पण से दतिया का सौभाग्य उदय होना था। वे चलते-चलते दंतवक्रेश्वर महादेव के मंदिर पर जा पहुँचे। वह शुभ दिन नौ जुलाई उन्नीस सौ उन्तीस का था (९।७।१९२९)। वहाँ के निवासी यह जानने के लिए उत्सुक हो उठे कि दन्तवक्रेश्वर महादेव की मड़िया पर वह कौन साधु ठहरा है ? ऐसा लगता है कि यह कोई असाधारण महापुरुष है, देखने में चेहरा बहुत तेज़स्वी है। क्या परम सुखों का पुंज धरा मध्य भासित हुआ है ? दतिया नगर महाभारत काल में राजा दंतवक्र की राजधानी थी। दन्तवक्रेश्वर का मन्दिर शिशुपाल के भाई राजा दंतवक्र द्वारा स्थापित किया हुआ है। इसी मन्दिर के पास स्वर्गीय श्री पर्वतसिंह फ़ौजदार का मकान था। वे कट्टर शैव तथा विद्या-व्यसनी और साधु-सेवी जागीरदार थे। बलवीर सिंह, मंगतराम पंजाबी, राधेश्याम दुबे, रामचरण मिश्र आदि पंचम टोरिया, केम्प के झरना और ग्वालियर मार्ग पर भ्रमण करने जाते थे। वे मित्रगण एक दिन यह जानकर कि मन्दिर में कोई महापुरुष विराजे हैं, आपके दर्शनों और वार्तालाप करने के लिए पहुँचे। उन्होंने देखा आपके मुख की कान्ति स्वर्ण के समान दैदीप्यमान हैं। अंग का वर्ण पीताम्बरा जी की कान्तिवाला है। चौड़ी छाती, आँखें प्रखर और लुभावनी हैं। बातचीत के दौरान उन्होंने यह अनुभव किया कि आपके वचनामृत हर संशय को समूल नष्ट कर देते हैं। उन्होंने सोचा ज़रूर ये कोई सिद्ध योगी हैं। वे लोग आपके दर्शन कर बहुत प्रभावित हुए और आगे चलकर आपके परम भक्त बने। एक दिन फ़ौजदार पर्वतसिंह ने श्री महाराज के पास आकर विनय की, हे भगवान् ! यहाँ मड़िया में बैठने के लिए जगह समतल नहीं है, बैठने में कष्ट होता होगा। आप दो-तीन दिन के लिए मेरे निवास

स्थान पर ठहर जाएँ तो हमलोग इस जगह को गोबर से लीप पोतकर समतल बना दें। हे योगेश्वर, चाहे तो आप फिर यहीं वापस आ जाएँ। श्री प्रभु ने उत्तर दिया कि ''हमें क्षुद्र स्वार्थ की साधना नहीं करनी है। यह पूजा का स्थान सभी भाँति धनवान और उत्तम है। साधु को मोह से क्या काम ! फ़ौजदार ने विनम्रतापूर्वक कहा- हे सर्वसुन्दर श्याम ! सेवा में ही सेवक जीता है, वही उसका स्वार्थ है। सेवा में ही सारे परमार्थ आ जाते हैं। बहुत अनुनय करने पर दूसरे-तीसरे ही दिन प्रभु दन्तवक्रेश्वर के मंदिर से जो मड़िया के नाम से भी विख्यात है, फ़ौजदार के घर पहुँच गये। श्री प्रभु फ़ौजदार सिंह के घर जाकर तीन-चार दिन रहे। सीता सागर बांध पर निवास करने वाले महात्मा मंगलदास जी ने आपसे अपने मन्दिर में ठहरने का आग्रह किया। श्री महाराज नगर के बीच रहना भी नहीं चाहते थे, इसलिए वे फ़ौजदार के यहाँ से महन्त मंगलदास जी के स्थान पर चले गए। वहाँ पर कुछ दिन ठहरने के उपरान्त आपकी इच्छा वहाँ से जाने की होने लगी। यह जानकर मंगलदास जी ने कहा- हे सिद्धयोगी ! आप थोड़े दिन यहाँ और ठहरते तो बड़ी कृपा होती। आप गुरु रूप हैं, गुरु सेवा ही श्रेष्ठ भगवान् सेवा है। सन्तों की आज्ञा मानने में हित होता है, कल्याण होता है, लेकिन रमते योगी को कौन रोक सका है। आपके भक्तों का भी आग्रह था कि- हे भक्तवत्सल ! आप और कुछ दिन दतिया में ही रुककर उन्हें सेवा का अवसर दें। श्री प्रभु ने मधुर स्वर में कहा कि- संन्यासी को एक ही स्थान पर ज़्यादा दिन तक नहीं रुकना चाहिए। किन्तु अपने भक्तों के प्रेमाग्रह पर मंगलदास जी के स्थान को छोड़कर आप वनखण्डेश्वर मन्दिर में आ विराजे। वनखण्डेश्वर महादेव का स्थान अत्यन्त प्राचीन सिद्धस्थान है, उस समय वह स्थान महाश्मशान भूमि के रूप में था, और निर्जन तथा महाभयावह था। दिन में भी लोग वहाँ जाने से

डरते थे। युगों-युगों से यह भूमि सिद्धों के अवतार धारण करने से अब पवित्र हो गयी हैं। यह महाभारत काल से ही सिद्ध महात्माओं की तपस्थली रही है। अपने समय के महान तांत्रिक हिमकर ओझा ने यहीं पर सिद्धि प्राप्त की थी, और बीसवीं शताब्दी के महान विद्वान अयोध्यानाथ ने भी यहीं सिद्धि प्राप्त की थी। जब आप फौजदार पर्वतसिंह के यहाँ थे, तो उनकी प्रार्थना पर आपने ईश्वरगीता का अनुवाद किया था। आपको प्रभु ! दतिया में रहते हुए दो-तीन महीने गुज़र गये। इसी बीच दतिया राज के राजा ने सुना कि उसकी राज्यसीमा के अन्दर उसकी अनुमति के बिना कोई साधु ठहरा है, किन्तु वह उससे अभी तक मिलने नहीं आया जो उस राज़ा के अपमान की बात है। हो सकता है वह कोई सच्चा सन्त हो, पता करना चाहिए। सन्त को किसका भय? अरब-खरब की राशियाँ भी जिनके आगे तुच्छ होती हैं उनका सामर्थ्य तो सब अभयों के दान में हैं। अज्ञान और अहंकार में डूबे रहकर आपका सन्त स्वरूप कैसे समझा जा सकता है? आप तो निरासक्त होकर निजानन्द में मग्न रहा करते हैं। लोक कल्याण के लिए धराधाम को पवित्र करने हेतु अवतार रूप में आते हैं और अपनी दया, करुणा लुटाकर सुखी करते हैं। त्याग - वैराग्य लेकर जो घूमता है उसका सौभाग्य जगज्जननी के अंक में होता हैं। लेकिन अहंकारी और घमण्डी लोग इन बातों को नहीं समझ सकते। दतिया के राजा गोविंदसिंह ने अपने एक ओहदेदार को आप तेजस्वी तरुण सन्त के पास यह जानने भेजा कि आप कौन है ? कहाँ से आये हैं ? क्या आपको इस व्यवहार का पता नहीं था कि पहले राजा की अनुमति लेकर वहाँ ठहरना चाहिए था? ओहदेदार ने वापस लौटकर राजा को बतलाया कि दतिया नगरी के सौभाग्य का उदय हुआ है। आपने जिस साधु के विषय में जानना चाहा था वह सच्चा सन्त है। यह सुनकर वहाँ का राजा भी

श्री महाराज के दर्शनों के लिए गया और पहली ही भेंट में आपका भक्त हो गया। सन् १६४३ ई. में दतिया रियासत के दीवान पद पर सैय्यद एनउद्दीन आया था। सख्त स्वभाव के कारण उसका आतंक प्रारंभ से ही छाया हुआ था। बहुत बाद में दीवान एनउद्दीन भी जब स्वामी जी के पास पहुँचा तो उनके रूप सौंदर्य और तेज़ को देखकर चकित रह गया। उसने मन में सोचा कि ये तो ज़रूर कोई सिद्ध फ़कीर हैं। आज उसका भाग्योदय हुआ जो स्वामीजी महाराज के दर्शनों का पुण्य लाभ प्राप्त किया। थोड़ी बातचीत के बाद ही उसका सारा भ्रम व संदेह मिट गया और विश्वास हो गया कि यह पुरुष निश्चय ही ज्ञान प्रदीप प्रदानकारी है। सच्चे संत के शरीर से सत्यता और पवित्रता की किरणें विस्तीर्ण होती हैं जिससे शंकाओं का स्वयमेव समाधान हो जाता है। दासानुदास कहता है कि जिससे यह सब जग जाना जाता है, उस स्वामी के विषय में किसने जाना ? देवताओं के भी आप परमपूज्य देवता हैं, प्रजापतियों के भी प्रजापति हैं और प्रकृति से भी परे विश्व के स्वामी हैं। एक ही भगवान् सब रूप धारण करते हैं। उन्हीं को जगत् ने अब स्वामी के रूप में जाना है। वही चैतन्य आत्मा, चित्तशक्ति, भक्ति और ज्ञान का प्रकाश करने के लिए गौर वर्ण श्री स्वामी जी के स्वरूप में समस्त भक्तों के हित के लिए विराजमान हुए हैं। एनउद्दीन काव्य प्रेमी था और उसे उर्दू शायरी की गहरी परख थी। अतः भावुक था, क्रूर होते हुए भी खुदापरस्त और सन्तों तथा फ़कीरों को मानने वाला था। सन्तहृदय स्वामी जी महाराज के मन में दो तरह की बातें नहीं थी, क्योंकि संतहृदय में द्वेष नहीं होता। दीवान को ऐसा अनुभव हुआ जैसे वह पीर-पैगम्बर के सामने खड़ा है। हे परमहंस ! आपने उसे बताया- यात्रा करते हुए विश्राम के लिए यहाँ रुक गये थे, कुछ दिनों बाद रात्रि के समय वनखण्डेश्वरनाथ मंदिर के चौक में उन्हें एक दिव्य पुरुष के दर्शन हुए।

उस महापुरुष ने कहा कि तुम यहाँ ठीक आ गए हो, अब यहीं रहकर अपना काम करो। हमें भी यह जगह पसंद आ गई है, इसलिए अब यहीं रहेंगे। देवदेवेश्वर श्री महाराज यह समझ गये थे कि यह स्थान कृष्ण-कालीन महात्मा अश्वत्थामा की तपस्थली है। दीवान ने श्री प्रभु के तेज़ और निर्भीकता तथा उनसे हुए वार्तालाप के विषय में जाकर राजा को बताया और उनकी विशेषताओं का वर्णन किया। सूरज जब निकलता है तो कोई उसके प्रकाश से अनभिज्ञ रहे यह कैसे सम्भव है। यह सब सुनकर दतिया के राजा गोविंदसिंह जी जो श्री प्रभु के पहले से ही भक्त थे, और अधिक श्रद्धावान बन गए। शीघ्र ही दतिया नगर में चर्चा होने लगी कि एक सिद्ध महात्मा जो कि प्रकाण्ड विद्वान हैं, छोटी काशी कही जाने वाली इस दतिया नगरी को पवित्र करने के लिए वनखण्डेश्वर स्थान पर ठहरे हुए हैं। धीरे-धीरे उनके दर्शन से अपने को धन्य करने के लिए लोगों का समूह उमड़ने लगा। उनके दर्शन से ही तृप्ति मिलती थी, सन्तोष की प्राप्ति और यातना की समाप्ति होती थी। श्री गुरुदेव के दर्शन से ऐसा अनुभव होता था, मानो कि क्लान्ति मिट कर परमशान्ति की उपलब्धि हो गई है। दतिया जैसी छोटी नगरी में महाराज जी ने बहुत से संस्कृत के पण्डितों को पाया। आपका मन वहाँ के वातावरण में रम गया और बड़ी दृढ़ता पूर्वक विरक्तभाव से अपनी उस टूटी-फूटी झोपड़ी में जो वनखन्डेश्वर पर संभवतः किसी के द्वारा शव दाह संस्कार हेतु साथ में आए हुए व्यक्तियों के आश्रय के लिए बनाई गई प्रतीत होती थी, परमात्मा के ध्यान में मग्न होकर आप कठिन साधना में लीन हो गए। एक दिन दीवान एनउद्दीन ने स्वामी जी से कहा- महाराज ! यह जगह आपके लिए बहुत कम है। और बहुत जीर्ण-शीर्ण है। आप स्थान का निर्देश करें तो वहीं पर आपके रहने योग्य मकान बना दिया जाय। तपो निधि श्री प्रभु ने उत्तर दिया- मकान छोड़कर लोग सन्यासी होते हैं। मकान की हमलोगों को क्या ज़रूरत ? दीन-दयाल

की असहमति होने पर भी दीवान एनउद्दीन ने दो कमरे तथा एक बरामदा बनवा ही दिया, परंतु आप उस स्थान पर रहने के लिए नहीं गए। संत असन, वसन और संचरण से वैराग्य लेकर, लोक शिक्षा हेतु स्वधर्म का पालन करता है। हे सर्वेश्वर ! हे महेश्वर ! श्री महाराज ? ऐसी कौन सी जगह है जो आपकी नहीं ? ऐसी कौन सी वस्तु है जिसमें आप नहीं ? सब में आप ही समाये हैं। लोग धन से, मकान से सन्तों की सेवा करना चाहते हैं, यह उनका अहंभाव है। आपकी कृपा किस तरह मिले और आप कैसे प्रसन्न हों यह गुण हम लोगों में आए। इस स्वामी कथासार के पाठ से हे श्रोता गणों, मनुष्यों के मोहरूपी अन्धकार का नाश होकर महान् आनंद की प्राप्ति होती है। हे पंचानन ! हे कृष्ण ! जिस प्रकार महाभारत युद्ध में धर्म के पक्षधर पाण्डवों को विजय दिलाई और अधर्म का नाश कर शान्ति स्थापित की, उसी प्रकार आपने दतिया की जनता को दिवान एनउद्दीन के अत्याचारों से मुक्ति दिलाकर शान्ति की स्थापना की। इस वृतान्त को आप आगे के अध्याय में श्रवण करें। 'स्वामी कथासार' सबको सदैव प्रसन्न रखें, ऐसी भगवान् से प्रार्थना है। श्री स्वामी जी महाराज की जय। इस स्वामी कथासार को श्रद्धापूर्वक श्रवण और पाठ करने से सांसारिक विपत्तियों से छुटकारा मिलता है। ''इस वृत्तान्त को श्री पीताम्बरा माई को अर्पण करें''।

।। इति प्रथम अध्याय समाप्त।।

श्री स्वामी कथासार

द्वितीय अध्याय

श्री गणेशाय नमः । हे जगदम्बा भवानी, जगत्जननी ! खेल-खेल में ही तुमने अनन्त कोटि विश्व रच दिए। तुम्हारा यह बालक स्वामी कथा का वर्णन करना चाहता है, लेकिन अबोध-अज्ञानी होने से लिखने और वर्णन करने की योग्यता नहीं है। इसलिए अब शीघ्र ही तुम कृपा करो, और छोटी-सी रचना ''स्वामी कथासार'' लिखवा दो। क्रूर और भयानक दुष्टों तथा राक्षसों को मारने में तुम कुशल हो, फिर मेरा यह अज्ञान रूपी राक्षस तो मामूली है। चित्त क्रिया न करना चाहे तो चेतन का संयोग रहने पर भी कार्य नहीं हो सकता। जैसे चालक गाड़ी पर बैठा भी रहे, परन्तु चलाने की इच्छा न करे तो गाड़ी नहीं चल सकती। हे जगदम्बा ! आपकी शक्ति से ही जगत् में क्रिया हो रही है। एक समय में दीवान एनउद्दीन के कठोर स्वभाव के कारण दतिया में उसका आतंक छाया हुआ था एनउद्दीन अंग्रेज़ों के द्वारा नियुक्त किया गया था, वह वहाँ के राजा की भी बात नहीं मानता था और ग़रीब प्रजा पर अत्याचार करता था। उसके विरोध में नागरिकों ने एक बड़ी सभा का आयोजन किया जिसमें एनउद्दीन की गिरफ़्तारी और राज्य से निकालने की मांग बहुत ज़ोरों से की गई। दीवान एनउद्दीन ने जनता की आवाज़ को धूर्तता से

भरसक दबाने की कोशिश की। सांप्रदायिक झगड़ों की आशंका हो गई। समय की कठिनाई को देखते हुए नागरिकों के कष्ट निवारण हेतु पीताम्बरापीठ पर एक अनुष्ठान हुआ। भगवती श्री बगलामुखी एवं श्री धूमावती का अनुष्ठान श्री महाराज जी की कृपा से सफलतापूर्वक पूरा हुआ। अनुष्ठान प्रारंभ होने के कुछ समय पश्चात् ही शासन ने चौबीस घण्टे के भीतर दीवान एनउद्दीन को राज्य से निकालने की मांग स्वीकार करली। राजशाही और गुलामी के उस समय में राजा और दीवान निरंकुश हुआ करते थे। किंतु करुणानिधान स्वामीजी तो लोक कल्याण और सर्व साधारण की रक्षा के लिए विराजे थे। लाटसाहब के आदेश से रातोंरात ही दीवान को हटा दिया गया, एनउद्दीन का अहंकार चूर हो गया और उसे अत्यन्त अपमानित होकर भागना पड़ा। हे दयासिन्धु ! इस प्रकार आपकी करुणा पूरित कृपा से ही असहाय प्रजा की उस दैत्य के अत्याचारों से रक्षा हुई। इससे प्रजा को बड़ी राहत मिली। इस प्रकार उस कठिन समस्या को अभूतपूर्व ढंग से अतिशीघ्र और सरलता पूर्वक सुलझा देखकर सभी चकित रह गए और आपका यशगान करने लगे। सन्तों का कार्य कभी अधूरा नहीं होता, वह तो अत्यन्त रहस्यमय होता है। उनकी कृपा से सभी असम्भव कार्य भी संभव हो जाते हैं। देश के स्वतन्त्रता संग्राम में भी श्री प्रभु की कृपा से विजय का बिगुल इस पवित्र स्थान से ही बजा था। सच्चा सन्त ही सच्चा राष्ट्रभक्त भी होता है जिसके दृष्टिकोण में राष्ट्रीय एकता ही स्वतन्त्रता का आधार होता है। सन् १९४८ ई. में हिन्दू महासभा के संगठन कार्य हेतु एक जनसभा का आयोजन कर उसे सम्बोधित करने के लिए हिन्दू महासभा के तत्कालीन राष्ट्रीय महामन्त्री, दतिया आए। इस समय सूर्यदेव श्री स्वामीजी में आस्था नहीं रखते थे, परन्तु श्री स्वामी जी के व्यक्तित्व और कृपा से प्रभावित होकर उनकी वे सभी मान्यताएँ बदल गईं। राजा को जब सभा के आयोजन का पता चला तो उन्होंने दीवान कृष्णपालसिंह को

बुलाकर नगर में किसी बड़े उपद्रव की आशंका से धारा १४४ लगाने का आदेश दिया। इस आदेश से हिन्दू भड़क उठे और उपद्रव बढ़ने के आसार ज़्यादा हो गए। यह देखकर धारा १४४ उठा ली गई और सभा के आयोजन की छूट मिल गई। परन्तु राजा के डर से सभा की अध्यक्षता करने के लिए कोई नागरिक तैयार नहीं हुआ। पं. सूर्यदेव जी, श्री स्वामीजी के पास गए और निवेदन किया- हे संतों के मुकुटमणि ! दतिया में कोई हिन्दू नहीं है ऐसा लगता है, क्योंकि मैं हिन्दू महासभा की सभा करने वाला हूँ परन्तु उसकी अध्यक्षता करने के लिए कोई तैयार नहीं है। संत महात्माओं का यह काम होता है कि वे बुराइयों को दूर करते हैं। मैं आपसे सभा की अध्यक्षता करने की प्रार्थना करता हूँ। तपोधन श्री प्रभु ने उत्तर दिया- ''मैं तो सन्यासी हूँ और सन्यासी की कोई जात नहीं होती, उसकी तो जात भगवान् की होती है। परन्तु समाज का जो वर्ग हमारी देख-रेख करता है, भरण-पोषण करता है, समय आने पर उसकी सहायता करना हमारा कर्तव्य हो जाता है। इसलिए हम तुम्हारी सभा की अध्यक्षता करेंगे।'' अर्जुन को जैसे कृष्ण का कृपा आशीर्वाद मिला, शिवाजी महाराज को समर्थ श्री रामदास स्वामी का वरद हस्त प्राप्त हुआ, ऐसे ही सूर्यदेव को महाराज जी का अभयदान मिल गया। आज का दिन धन्य है, हरेक की आँखें महाराज जी की ओर लगी थी। जीवनमुक्त सच्चा साधु सभा मण्डप में उच्चासन पर बैठा था। श्री महाराज की निर्भीकता, तेजस्विता जल्दी ही प्रखरता को प्राप्त होकर जनमानस में फैल गई। महाराज जी ने बिना किसी भय के उस सभा में कहा- ''अपने पूर्वजों की परम्पराओं व संस्कृति की रक्षा करना परम आवश्यक कर्तव्य है और यह अधिकार सबको प्राप्त है इसके लिए हमें संगठित होना चाहिए।'' भीमलोचन श्री महाराज जी की इस ओजपूर्ण वाणी का आश्चर्यजनक प्रभाव हुआ और जनता में जागृति

आयी। इस प्रकार हिन्दुओं के सोए हुए पुरुषार्थ के प्रति महान विश्वास श्री स्वामीजी ने जगा दिया। हे सच्चिदानंद ! आप तो फिर अपने निजानन्द में ही मग्न हो गए। एक दिन श्री प्रभु ने अपने भक्त फ़ौजदार पर्वतसिंह को बुलाकर कहा- ऐसा लगता है कि दतिया में लोग नास्तिक और आलसी हो गए हैं अपने धर्म-कर्म को भूलते जा रहे हैं। तुम शंकराचार्य जयन्ती मनाओ, जिससे लोगों में कुछ जागृति आए। इस प्रकार प्रभु ! आपकी कृपा से वैशाख सुदी ५ संवत् १९८८ वि. को दतिया में प्रथम बार शंकराचार्य जयंती बड़ी धूम-धाम से मनाई गई। लोगों ने पीताम्बरा माई का उस स्थान पर एक छोटा सा मन्दिर का कमरा बनवा दिया। आपके भक्त सुन्नूलाल पटेरिया ने माई का एक सुन्दर चित्र बनाया और फिर अपने मालिक श्री स्वामीजी महाराज को दिखाया। भूतभावन भगवान् ने कहा- भाई सुन्नूलाल ! लोगों ने मंदिर का कमरा बनवा दिया और तुमने चित्र भी बना लिया, तो इस चित्र की मूर्ति भी बना लो, इसमें पूछने की क्या बात है ? इस प्रकार मूर्ति तैयार होने पर ज्येष्ठ कृष्ण ५ संवत् १९९२ विक्रमी के दिन माई की वह दिव्य मूर्ति भी मन्दिर में आ विराजी। हे महेश्वर ! कालान्तर में आपकी कृपा और प्रेरणा से पीताम्बरापीठ की स्थापना के उपरान्त परशुराम जयन्ती, पीताम्बरा जयन्ती और शंकर जयन्ती के उत्सव लगातार तीन दिन धूम-धाम के साथ हर वर्ष इस पीठ पर होने लगे। संवत् १९९७ में पंचम कवि के पहाड़ पर तारामाई की स्थापना भी हुई। यह सब होता रहा किन्तु आप अपने आत्मानन्द में ही मग्न रहे। दतिया ज़िले में ''श्री रामचरित मानस चतुश्शती'' का आयोजन किया गया। दतिया के कलेक्ट श्री जी.बेनकला ने विचार किया कि यदि स्वामीजी इस समारोह का उद्‌घाटन करें तो इस आयोजन की सफलता में चार चाँद लग जाऐंगे। आयोजक श्री प्रभु के पास आए और कहा कि

आयोजन सम्बन्धी कार्य तो हम लोगों को करना ही है लेकिन हे जनार्दन ! शेष काम सन्त महात्माओं का है। इसलिए उद्घाटन के लिए हम लोग आपसे निवेदन करने आए हैं। यदि नगर में न जाने का कोई संकल्प आप कर चुके हैं तब तो हम विवश हैं किन्तु यदि ऐसा नहीं है तो यह काम आपका ही है। जगमोहन श्री प्रभु मुस्कराये और बोले कि- ''हाँ, है तो काम यह हम ही लोगों का। मैं तो नगर में जाता नहीं हूँ परन्तु मैंने नगर में न जाने का कोई संकल्प भी नहीं लिया है, इसलिए चलूँगा, लेकिन भाषण नहीं दूँगा।'' श्री रामस्वरूप खरे एडवोकेट ने स्वामीजी को समारोह में पहुँचने के लिए वाहन का प्रबन्ध किया। बड़े उत्साह से दुकानदारों ने पुष्पहारों, बन्दनवारों और तोरणों से स्वागत द्वार सजाए। वह दृश्य देखते ही बनता था। बग्गीख़ाने का चौक नर-नारियों से खचाखच भरा हुआ था। मंच पर श्री रामचरित मानस ग्रन्थ के ऊपर पुष्प चढ़ाकर समारोह का उद्घाटन सम्पन्न हुआ। कलेक्टर ने हाथ जोड़कर आशीर्वचन के दो शब्द कहने के लिए प्रभु से निवेदन किया। श्री प्रभु मुस्कराये और बहुत संक्षेप में सरलता से श्री गोस्वामी तुलसीदास जी के राष्ट्र धर्म की मार्मिक सराहना की। तुलसीदास जी को हिन्दू एकता का राष्ट्रीय महात्मा कहा। इस प्रकार श्री स्वामीजी के मार्गदर्शन में यह आयोजन बहुत अच्छे ढंग से सम्पन्न हुआ। इन्हें लोग स्वामीजी के ही नाम से जानते हैं। कोई नहीं जानता कि इनके माता-पिता कौन थे, इनकी जाति क्या थी, रहने वाले कहाँ के थे, उम्र क्या थी और कहाँ से आये थे। सभी नाम परमात्मा के हैं। वे नामी होते हुए भी अनामी हैं। स्वामीजी को इसलिए कोई महाराज कहने लगा तो कोई स्वामीजी कहने लगा। जिसका कोई आदि नहीं, कोई अन्त नहीं उसकी उम्र कौन बता सकता है ? जिसने जात-पाँत का भेद नहीं बनाया, सब उसी की सन्तान हैं, सारा विश्व ही जिसमें रहता है वह कहाँ का रहने वाला है, कौन बता सकता है ? इस सृष्टि के विस्तार में अनेकानेक देव हैं किन्तु एक

गुरुतत्त्व ही सबका केन्द्र बिन्दु हैं, केवल यह तत्त्व ही जानने योग्य है। एक दिन फ़ौजदार ने महाराज जी से विनम्र शब्दों में पूछा, प्रभु ! आपका जन्म स्थल कहाँ है एवं किस वंश जाति से सम्बन्ध रखते हैं ? श्री प्रभु कमलापति ने उत्तर दिया- व्यक्ति का परिचय उसके कार्य से होता हैं न कि उसकी जाति व वंशावली से। महाराज के दतिया आते ही पूरा दतिया तीर्थ स्थान बन गया। असंख्य लोग इस स्थल पर आ-आकर श्री प्रभु के दर्शनों का पुण्य लाभ लेने लगे। आनन्द का मेला वहाँ लगा रहता, उस आनन्द का वर्णन कौन कर सकता है। आनंद ही ईश्वर है और उसका आनंद लेने वाला भी वहीं है। श्री आनन्देश्वर यह कथासार लिखवाकर उसी आनन्द को बाँट रहे हैं। वह आनन्द पं. गौरीशंकर की माँ को मिला। प्रभु की लीला देखिए। गौरीशंकर की बुढ़िया माँ की बड़ी इच्छा थी कि शिवरात्रि के दिन महाराज जी का पूजन करें और उनको पकवान वाला भोजन करावे। इनके पूर्वज बहुत प्राचीन काल से वनखण्डेश्वर महादेव की सेवा में रहे थे। बेचारी ग़रीब बुढ़िया को मन की बात कहने की हिम्मत नहीं थी। सच्चे योगिराज आंतरिक भावना को जान गए। उन्होंने शंकर की माँ से कहा- ''शिवरात्रि को मुझे तुम भोजन कराओ क्योंकि मैंने तुम्हारी इच्छा जान ली है।'' बुढ़िया ने सोचा जो ब्रह्मानंद में मग्न होकर तृप्त हो गया हो उस सच्चिदानन्द को वह खिला ही क्या सकती है? शिवरात्रि के दिन उसने अपना घर फूलों से सजाया। चौक पूरने लगी। बहुत से लोग उसके घर आ गए। आज सुदामा के घर कृष्ण जी आने वाले हैं, भावविभोर होकर वह बुढ़िया सबसे कहती थी। महाराज जी वहाँ शाम को पधारे। घर परिवार में लोगों की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। कोई दौड़कर चरण धोने के लिए जल ला रहा था तो कोई दौड़कर आपके चरणों में फूल चढ़ा रहा था। बुढ़िया ने लोगों से कहा- देखो आज हमारे घर भगवान् आ

गए हैं, मेरी सात पीढ़ियों का उद्धार हो गया। शंकर लड़के ने आपके चरणों में पुष्प चढ़ाये, हल्दी कुंकुम चरणों पर लगाये। महाराज जी स्त्रियों को माता का दर्जा देते थे, इसलिए उस भाग्यवान् बुढ़िया से कहा- ''माई तू तो मेरी साक्षात् माँ है, खुद अपने हाथ से मुझे खाना थाली में लाकर दे, जिससे मेरी तृप्ति हो जाय''। बुढ़िया ने इतने पकवान बनाए थे कि जिनका कोई कहाँ तक वर्णन करें। -मोतीचूर के लड्डू, जलेबी, भात, खोये का हलवा, तरकारी, खोयें-दूध की मिठाई इत्यादि। महाराज जी ख़ूब तृप्ति से भोजन करके वापिस आश्रम को पधार गए। ढोंगी साधु धनवानों के पीछे घूमते हैं लेकिन योगेश्वर तो प्रेम में ही बिक जाते हैं। वे तो अमृत भण्डार का मुक्तहस्त से दान करते रहते हैं। माया तो उसकी सेविका और नित्य सहचरी है। भक्त श्री वासुदेव गोस्वामी को जिनकी बुद्धि कुछ मन्द थी, कृपा प्रसाद मिला। उन्हें एक पुस्तिका देते हुए ज्ञानरूपी अमृत भण्डार श्री प्रभु बोले- ''इस महासरस्वती स्तोत्र का पाठ करो, जिससे तुम्हारी बुद्धि का विकास हो। इसकी प्रतिलिपि करके वापस दे देना।'' गोस्वामी जी ने उसकी प्रतिलिपि स्वयं करके महाराज जी को दिखाई, महाराज जी ने कहा- ''अपने हाथ से तैयार की गई प्रतिलिपि का पाठ नहीं किया जाता। फलतः उसकी दूसरी प्रतिलिपि उन्होंने अपने पिताजी से तैयार कराई और तभी से आपके बताए पाठ एवं मंत्र का ही जप करने लगे। आपकी कृपा के प्रभाव से वे देश के मूर्धन्य कवियों में गिने जाने लगे। श्री गोस्वामी जी द्वारा प्रणीत पुस्तकें विश्वविद्यालयों की स्नातक और स्नातकोत्तर कक्षाओं में पढ़ाई जाने लगीं। तब से श्री गोस्वामी सिद्ध सरस्वती स्तोत्र का सामूहिक पाठ शारदीय नवरात्र में पीताम्बरापीठ पर सरस्वती मंदिर में भी निरन्तर सरस्वती पूजन के समय करने लगे और यह परम्परा तभी से चली आ रही है। सेवा भाव अनन्त, सेवा क्षेत्र अनन्त, सेवा

स्वयं ईश्वरत्व है। और सेवा में ही सारे परमार्थ आ जाते हैं। एक ग़रीब भक्त शीतल मोर, जो महाराज को साक्षात् शिव का अवतार मानता था, श्री महाराज से बोला- हें वामदेव ! मैं आपकी हल्दी-कुंकुम से पूजा अर्चना और एक भण्डारा भी आश्रम पर करना चाहता हूँ। मुझे यह सब करने की आज्ञा दे दें। मेरे मन की साध पूरी करें क्योंकि जब भगवान स्वयं सामने खड़े हैं तो इससे अच्छा अवसर मुझे बाद में कभी नहीं मिलेगा। हे भूतात्मा ! आप जानते थे कि वह बहुत ग़रीब है, और भण्डारे में ख़र्चा अधिक होगा इसलिए उसे मना कर देते थे लेकिन वह मानता नहीं था और बार बार भण्डारा कराने की आज्ञा माँगता रहता। एक दिन उससे पूछा कि- तुम्हारे पास कितना रुपया है? ग़रीब भक्त ने उत्तर दिया कि २० रुपये हैं। महाराज जी ने उसको डाँटा- ''यह रुपया तुम्हारे आड़े वक़्त काम आएगा, ख़र्च मत करो तथा इससे बड़ा भण्डारा भी नहीं हो सकता।'' लेकिन वह भक्त महाराज जी के चरण पकड़कर बैठ गया, कि कुछ भी हो आप भण्डारा करने की आज्ञा ज़रूर देवें। महाराज जी ने उसका विशाल हृदय और भक्ति देखकर उसे भण्डारा करने की अनुमति दे दी। उस ग़रीब भक्त के हर्ष का पारावार नहीं रहा, उसने पहले श्री सद्गुरु समर्थ की फूलों व हल्दी कुंकुम से पूजा की, भण्डारे में बने भोजन का भोग लगाया और भण्डारा किया। उस भण्डारे में सैकड़ों लोगों ने भोजन किया लेकिन सामग्री में कोई कमी नहीं आयी। कुल २० रुपये ख़र्च में इतना बड़ा भण्डारा हुआ इस बात की चर्चा दतिया में लोग करने लगे, लोगों ने आपसे पूछा- हे गोविन्द ! यह चमत्कार कैसे सम्भव हो सका ? आपने उन लोगों को समझाया जब जगन्माता अन्नपूर्णा प्रसन्न हो जाती हैं तो कुछ भी काम असम्भव नहीं होता। ग़रीब होते हुए भी उसकी भक्ति और निष्ठा देखकर स्वयं माई ने उसका काम पूरा किया है। इस रहस्य को साधारण

बुद्धि वाले कैसे समझ सकते हैं ? इस शिवमन्दिर में अन्नपूर्णा देवी की जो मूर्ति है उसे तुमलोग केवल प्रतिमा ही न समझो, वहाँ तो साक्षात् अन्नपूर्णा ही निवास करती हैं। उस भण्डारे के बाद आश्रम पर बहुत भण्डारे होते रहे और हो रहे हैं पर कभी किसी चीज़ की कमी नहीं पड़ी। दासानुदास कहता है, हे गणनायक ! श्रीमुख से जैसा मालूम हुआ, उसे आप सब लोग सुनें। यह गुप्त बात है जिसे सब लोग नहीं जानते। एक दिन भगवान सर्वेश्वर एकान्त में बैठे हुए निजानन्द में मग्न थे, उसी समय बहुत से पिशाच, प्रेत आदि दुष्टात्माओं ने विचार किया कि ऐसे साधु को यहाँ से परेशान करके निकाल देना चाहिए। यह हमारे रहने के स्थान में बाधा कर रहा है। पहले भी कभी-कभी परेशान कर रहे थे, कभी कमण्डलु गिरा देते, कभी पूजास्थल पर हड्डी डाल देते थे, लेकिन महाराज जी ने इस ओर कोई ध्यान नहीं दिया। व्याधियों का भीषण आक्रमण महाराज जी पर रात्रि में होता था। एक दिन उन दुष्ट आत्माओं ने सम्मिलित रूप से एक भयानक ज्योति के रूप में प्रगट होकर महाराज जी पर प्रहार किया, जिससे वे बहुत बीमार हो गए। महापुरुषों पर शैतान अशरीरी आत्माओं के ऐसे कोप प्रकट होते ही रहते हैं। भगवान बुद्ध के ऊपर भी दुष्ट आत्माओं ने इसी प्रकार के प्रहार किए थे। सच्चा साधु वही होता है जो प्रतिकार नहीं करता क्योंकि वीतरागी को शरीर से क्या लेना देना। भक्त लोग पूज्यपाद श्री महाराज को बीमार देखकर आपस में यह विचार करने लगे कि- महाराज जी का रोग अनिष्ट कारक है। इसलिए लोगों ने पूछा- महाराज जी आप बहुत ज़्यादा बीमार हो गए हैं, आपके कोई सगे सम्बन्धी हों तो बतावें। महाराज जी ने कहा कि- ''मेरे तो सगे सम्बन्धी सभी हैं, आप सब भी हैं। लेकिन मैं यहाँ आने से पहले धौलपुर नगर में रहा हूँ, इसलिए वहाँ से जेलर श्री नारायणसिंह और हेडमास्टर बृजमोहन आदि

को बुला दो। धौलपुर तारद्वारा सूचना भेजने पर वहाँ से कई भक्त लोग शीघ्र आ गए। कुछ समय बाद आप स्वयं ही स्वस्थ हो गए और धौलपुर से आए भक्तों से कहा, तुम्हारे सच्चे प्रेम ने ही हमें फिर से मिलाया है। आपके भक्त जेलर नारायणसिंह आदि ने दतियावासियों को बतलाया कि एक दिन स्वामीजी घूमते हुए धौलपुर आकर ठहरे, मेरी प्रार्थना पर उन्होंने वहाँ पर कुछ समय तक रहना स्वीकार किया क्योंकि सच्चे हृदय से की गई प्रार्थना को सन्त कभी नहीं ठुकराते। वहाँ अपने घर के पास मैंने फूस की एक छोटी झोपड़ी बनवा दी वहाँ स्वामीजी दो वर्ष रहे। लोगों को असली-नकली साधुओं को पहचानना चाहिए, क्योंकि हीरे की परख जौहरी ही कर सकता है। आप लोग धन्य हैं, जो आपने इन्हें पहचाना। हम लोगों पर श्री प्रभु ने स्वयं ही कृपा करके अपने स्वरूप को दिखाया। इसके बाद नारायणसिंह जी ने धौलपुर की एक घटना बताई, जिससे सबने जाना कि इस धराधाम पर भगवान् ने लोगों को कष्टों से दूर करने के लिए अवतार ले लिया है। पुराने छात्र नारायणसिंह ने अपने गुरु पं. बृजमोहनलाल जुत्सी से जो कि महाराणा हाईस्कूल धौलपुर (राजस्थान) के हेडमास्टर थे, एक बार कहा कि हमारे यहाँ एक बड़े महात्मा ठहरे हैं, आप भी उनके दर्शन करें। जुत्सी जी ने कहा- आजकल बहुत से साधू घूमते हैं जो कम्बल, लोटा और हरिद्वार का टिकट माँगते रहते हैं। जुत्सी जी का उत्तर जेलर नारायणसिंह ने श्री स्वामी जी को बताया। श्री स्वामी जी महाराज ने नारायण सिंह से कहा कि कल मास्टर साहब से तुम यह कहना कि हम उन साधुओं में से नहीं हैं। हम उनसे कुछ नहीं माँगेंगे। श्रीमुख का आदेश नारायणसिंह ने अक्षरशः पं. ब्रजमोहनलाल जुत्सी जी से निवेदन कर दिया। सद्‌गुरु सच्चे शिष्य स्वयं खोजता है। अतः अपने आप एक दिन उसकी इच्छा भी उन महात्मा से मिलने को हो ही गई। तब उस

दिन उन्होंने अपनी धर्मपत्नी से कहा- ''मैं एक साधु के दर्शन करके कुछ ही देर में वापिस आता

दिन उन्होंने अपनी धर्मपत्नी से कहा- ''मैं एक साधु के दर्शन करके कुछ ही देर में वापिस आता हूँ क्योंकि सच्चे साधु नहीं मिलते हैं वे बाद में कम्बल लोटा और हरिद्वार का टिकट माँगते हैं''। कुछ देरी के लिए कहकर श्री जुत्सी जी दो घण्टे तक वापस नहीं आए फिर आकर अपनी पत्नी से कहा कि- मैं कुछ घण्टे और वहाँ रुकना चाहता था लेकिन तुम कहीं चिन्ता में न पड़ जाओ इसलिए जल्दी वापस आ गया। आज मेरे जन्म जन्मान्तर से सोये भाग्य का उदय हुआ है क्योंकि आज मैंने ईश्वरदर्शन किए हैं। प्रथम ही भेंट में मेरे यह कहने पर कि- यदि तुम सच्चे साधु हो तो मुझे भगवान् के दर्शन कराओ, वरना मैं तुम्हें कम्बल, लोटा और हरिद्वार का टिकट माँगने वाला ढोंगी साधु ही समझूँगा। भगवान् की आड़ में लोग साधु बनकर ठगी का काम करते हैं। बृजमोहन जी का भी क्या कसूर, वे तो बेचारे भक्त थे, लेकिन दुकानदारी करने वाले साधुओं से ही अभी तक उनकी भेंट हुई थी। आज उन पर भगवान् की कृपा होनी थी, इसलिए सच्चे सन्त के दर्शन हुए। महाराज जी ने मन्द-मन्द मुस्कराते हुए कहा- 'तुम पूर्व की ओर दीवाल की तरफ़ मुँह करके खड़े हो, ऐसा लगता है तुमको परमात्मा के दर्शन होंगे, मेरे हाथ में तो कुछ भी नहीं है।' जैसे ही उन्होंने दिवाल की तरफ़ देखा तो भगवान् का दिव्य प्रकाश दिखाई दिया तथा वे कुछ देर के लिए अचेत हो गए और उन्हें पता चल गया कि सच्चे सन्त की कृपा से ही परमात्मा के दर्शन होते हैं। आज यह कहावत उनके अनुभव में सच्ची साबित हुयी। आँख न मूंदूं कान न रुधूं, ध्यान कपाट न लाया। खुले नयन से साहिब देखूं यह गुरु भेद बताया।। हे दतिया वासियों ! तुम लोग धन्य हो, तुम सब लोगों का शुभ समय आया है जो महाराज जी जैसे महासिद्ध सन्त ने आपकी नगरी के बाहर डेरा डाला है। सन्तों पर किसी का वश नहीं चलता, वरना हम इन्हें धौलपुर से कभी न आने देते। श्री स्वामीजी हम सबको रोता बिलखता छोड़कर चले गए थे। इस समय आप लोगों ने हमें

बुलाकर बड़ी कृपा की है जो इनके दुबारा दर्शन हो गए। हम सब आपके आभारी हैं। 'गुरु क्या लेंगे, और हम दे भी क्या सकते हैं; वे ही तो सब रूप धरकर संसार बना रहे हैं'। श्री प्रभु को प्रसन्न करना ही सब साधनाओं का लक्ष्य है। गुरु शासन में शिष्य का रहना अनिवार्य है। श्री प्रभु पूर्ण स्वस्थ हो गए तो धौलपुर से आए भक्तों ने निवेदन किया- हे अविनाशी जनार्दन ! आप कुछ दिनों विश्राम के लिए धौलपुर नगर चलिए, क्योंकि हम लोग आपको लिए बिना नहीं जाएँगे। श्री प्रभु आप ग़रीब नवाज़ हैं, और हम ग़रीबों ने श्री चरणों में अर्ज़ पेश कर दी है। ज़िन्दा रखें या मारें आपके हाथ में है। इस प्रकार भक्ति भावना और प्रेम से ओत-प्रोत वाणी को सुनकर श्री प्रभु अत्यन्त प्रसन्न हुए लेकिन दतिया के भक्त सोच रहे थे कि- श्रीकृष्ण भगवान् को लेने एक ही अक्रूर गए थे लेकिन यहाँ तो अनेक अक्रूर आ गए हैं। ऐसे ही आज धौलपुरवासी महाराज को छीनकर ले जा रहे हैं। इस तरह आप,दतिया वासियों को रोता-बिलखता छोड़कर कुछ दिनों के लिए धौलपुर पधार गए। हे श्रोतागणों ! इस स्वामी कथासार के पढ़ने और सुनने से दुष्टों के अत्याचारों से मुक्ति मिलती है और श्रद्धावान् भक्तों को सहज में ही परमात्मा के प्रकाश का साक्षात्कार हो जाता है। इस स्वामी कथासार के प्रभाव से सबको प्रसन्नता मिले ऐसी भगवान् से प्रार्थना है। श्री स्वामी जी महाराज की जय। ''श्री स्वामी कथासार'' का श्रद्धापूर्वक श्रवण करने और नित्यपाठ करने से जीवन के संघर्षों में विजय प्राप्त होती है। यह कथा श्री पीताम्बरामाई को अर्पण करें।

।। इति द्वितीय अध्याय समाप्त।।

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

तृतीय अध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे सद्‌गुरु समर्थ, हे पूर्ण मनोरथ श्री स्वामी ! आपकी गुणगाथा कहते ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी थक गए हैं। आपके गुण का लवलेश भी कोई नहीं कर सका। रूप आपका परम शिव ! कल्प कल्पनातीत है। मृत्यु रूप भी आप ही हैं और मृत्युञ्जय भी आप ही हैं। आपकी कृपा कटाक्ष का कोई और है ना छोर। जिसे श्री हरि ने दृढ़तापूर्वक हृदय से लगा लिया वही सुशील है, पवित्र है और वेद का ज्ञाता है। जिस पर भगवान् कृपा करते हैं, सारे सद्‌गुण अपना गौरव बढ़ाने के लिए उसके अन्दर स्वयं ही आ जाते हैं। अजामिल ब्राह्मण और इन्द्र के आचरणों के ख़राब होने पर भी आपने उनकी बड़ी सहायता की और उनके हृदय का संताप हर लिया। इन बातों को अपने मन में विचार कर तथा अपनी प्रभुता को समझकर हे स्वामी ! आप हमारे हृदय के संतापों का हरण करें। धौलपुर नगरवासी आपको पुनः अपने समीप पाकर भाँति-भाँति से आपका गुणगान और सत्कार करने लगे। आपका विराजना जेलर नारायणसिंह के घर पर हुआ। पं. छोटेलाल शास्त्री जिनका सम्पूर्ण जीवन आपकी कृपा से सुधर गया था, आपकी स्तुति करने लगे। हे महेश्वर ! समस्त देवों में श्रेष्ठ आपकी जय। समस्त प्राणियों के स्वामी, कल्याण स्वरूप आपकी जय। हे समस्त मुनियों के स्वामी, तप से पूजित आपकी जय। हे अनन्त !

इस जगत् को उत्पन्न करने वाले, पालनकर्त्ता एवं संहार करने वाले आपकी जय। हे ज्ञानेश्वर ! आपकी जय। जैसे दीपक सूर्य की महिमा नहीं जान सकता। और कूप का मेंढक महासागर का अनुमान नहीं लगा सकता इसी प्रकार हे भोलेनाथ महाराज ! आपके ज्ञान, विज्ञान और विद्वता की गरिमा को जानने का सामर्थ्य इन तीनों लोकों में, किसी में नहीं है। आप स्वयं त्रिलोकपति हैं। ज्ञान ही आपका स्वरूप है। जीव ब्रह्म का ही अंश होते हुए भी ब्रह्म और जीव की तुलना नहीं हो सकती। पहले जब श्री महाराज धौलपुर में विराजते थे उस समय पं. छोटेलाल शास्त्री ख्याति प्राप्त संस्कृत और ज्योतिष के विद्वान थे। एक दिन श्री नारायणसिंह ने श्री शास्त्री जी से कहा- हमारे यहाँ सन्यासी रूप में भगवत् स्वरूप एक महान् विद्वान योगी आए हैं। इतना सुनते ही पण्डित जी ने मुँह नाक सिकोड़ते हुए कहा- सन्यासी और विद्वान ? ऐसा नहीं हो सकता। तब जेलर साहब ने कहा- आकर दर्शन तो कीजिए। पं. जी ने श्री महाराज को शास्त्रार्थ में पराजित करने की नियत से कठिन तथा गूढ़तम प्रश्न तैयार किए। शास्त्री जी को यह पता कहाँ था कि प्रातः उन्हें "सत्य ज्ञान मनतं ब्रह्म" से ही साक्षात्कार करना है। प्रातः होते ही अपने दंभ को साथ लेकर श्री शास्त्री जी जेलर साहब के घर पहुँच गए। जेलर साहब उन्हें साथ लेकर, श्री प्रभु के चरणों में आए। हे ज्ञान चूड़ामणि ! आपने, शास्त्री जी से पूछा- क्या आपने व्याकरण का अध्ययन किया है ? मेरी कुछ जिज्ञासाएँ हैं जिन्हें मैं जानना चाहता हूँ। श्री शास्त्री जी ने गर्व पूर्ण उत्तर दिया क्यों नहीं, पूछिए आप क्या जानना चाहते हैं? पंडित जी प्रातःकाल कारक विषय का अध्ययन करके आए थे, उसी विषय की चर्चा श्री स्वामीजी ने प्रस्तुत की किन्तु शास्त्री जी कुछ भी नहीं कह सके अपितु कल्पनातीत ललाट, वक्ष, बड़े-बड़े तेज़युक्त नेत्र, रक्तवर्ण हाथ-पैर के तलवे और होंठ, हृष्ट-पुष्ट गठीले गौरांग एवं शुभ सामुद्रिक चिन्हों से युक्त परम पुरुष को देखकर हतप्रभ हो गए। उनकी

जिव्हा स्तम्भित हो गयी। पुतलियाँ ठहरा गयी। वे चकितावस्था में बहुत देर तक अनादि श्यामसुन्दर के भव्य स्वरूप को निहारते रहे। उन्हें ऐसा लगा, मानो- महाज्ञानी महेश्वर के गौरवर्ण शरीर से श्वेत प्रकाश की धाराएँ निकल रहीं हैं। पं. जी को श्री प्रभु के शरीर में ही पहले त्रिदेव के फिर स्वयं और फिर विराट विश्व के दर्शन हुए। पं. जी चेतनाशून्य होकर श्री प्रभु के चरणों में गिर गए। उनका गर्व खण्ड-खण्ड हो गया। शास्त्री जी को तो जैसे कंगाल को हीरा मिल गया हो, ऐसी स्थिति हो गयी। उन्होंने जेलर साहब से कहा- मैं बहुत भाग्यवान् हूँ, आज मुझे सन्यासी के नहीं वरन् साक्षात् परमात्मा के दर्शन हुए हैं। कभी धौलपुर नरेश महाराज जी के दर्शन करने आते तो कभी कोई गुजरात के राजा श्री प्रभु दर्शन करने को लालायित रहते। श्री नारायणसिंह का घर तीर्थ स्थल हो गया। धौलपुर में पहाड़ी पर एक कुण्ड है जो मुचकुण्ड के नाम से प्रसिद्ध है। श्री प्रभु यहाँ पर बहुधा घूमने आया करते थे। एक दिन कुछ भक्तों के साथ प्रातः घूमने के लिए चम्बल नदी की ओर जा रहे थे। रास्ता घने जंगलों में बीहड़ों का था। इतने में सामने से एक बड़ा विशाल काला नाग फन उठाए चला आ रहा था। साथ के लोगों ने प्रार्थना की, कि प्रभु एक तरफ़ हट जाएँ और कुछ लोग भाग खड़े भी हुए। हे महादेव ! आपने कहा- डरने की कोई बात नहीं, यह बेचारा तो हमें प्रणाम करने के लिए आ रहा है। यह वाणी सुनकर भी सारे भक्त और सेवक डरकर वहाँ से बहुत दूर हट गए। उन्होंने दूर से देखा कि- श्री प्रभु खड़े हैं और उस भयंकर काले नाग ने पास जाकर अपने फन को तीन बार ज़मीन के ऊपर मारा। अपने मालिक विश्वयोनि की परिक्रमा की, और चुपचाप रास्ता छोड़कर एक तरफ़ चला गया। सब लोग यह अद्भुत लीला देखकर अवाक् रह गए। बाद में महाराज जी ने अपने भक्तों से कहा- विपत्ति आने पर ही सच्चे साथी का पता लगता है। संकट आने पर परमात्मा के अलावा कोई साथ नहीं देता। सन्त सेवा

सबसे बड़ी साधना मानी जाती है। कैसी भी स्थिति क्यों न हो, सम्पूर्ण शक्ति और विश्वास के साथ सद्गुरुनाथ की प्रत्येक आज्ञा का पालन करना चाहिए। चाहे वह कैसी भी आज्ञा क्यों न दे। आज्ञा पालन प्रमुख है और अन्य बातें गौण होती है। एक दिन धौलपुर के राजा उदयभानसिंह के एक विशेष पार्षद ने पूछा- श्री प्रभु महाराज ! भगवान् तो निर्गुण है, निरन्जन है, और सर्वमय है तो वह पाषाण की एक मूर्ति में अथवा पंच भौतिक शरीर के रूप में कैसे प्रकट हो सकता है? श्री महाराज ने बतलाया कि वह उसी प्रकार प्रकट हो सकता है, जैसे तुम हुए हो। इसके बाद उसे भगवती के विग्रह के समक्ष ले जाकर कहने लगे- अभी तुम कह रहे थे कि भगवान् सर्वत्र है, व्यापक है तो क्या वह इस विग्रह में नहीं ? पार्षद कुछ झिझकते हुए बोला- हाँ इसमें भी है। श्री महाराज ने आगे कहा भगवान् का सगुण रूप भी है, इसीलिए श्री रामचरित मानस में कहा है- "व्यापक ब्रह्म निरन्जन निर्गुण विगत विनोद। सोअज प्रेम भगति बस कौशल्या के गोद"।। उस परम रूप के दर्शन से हृदय की ग्रन्थियाँ खुल जाती हैं। सारे संशय दूर हो जाते हैं, और सब कर्म नष्ट हो जाते हैं। श्री प्रभु ने अपना उपदेश समाप्त किया तो उन महाशय को भगवती का वह विग्रह कोटि सूर्यों के प्रकाश से युक्त दिखाई दिया और जब मुड़कर उसने श्री प्रभु को देखा तो श्री महाराज के स्वरूप में उसे भगवती के विग्रह के दर्शन हुए। यह देखकर वह श्री चरणों में आश्रय दान के लिए स्तुति करने लगा और श्री भगवान् का भक्त बन गया। धौलपुर में मुचकुण्ड के पास एक कन्दरा है, श्री करुणासिन्धु माधव वहाँ पर बहुधा घुमने जाया करते थे। कभी-कभी श्री नारायणसिंह जी भी आपके साथ चले जाया करते थे। श्री महाराज कहते थे कि इसी स्थान पर मुचकुन्द ऋषि रहते थे। एक बार भगवान् श्रीकृष्ण कालयवन दैत्य को भरमाते हुए इस कन्दरा में आ छुपे क्योंकि कालयवन वैसे भी अत्यन्त बलवान था और फिर उसको यह वरदान था कि जिसके भी साथ वह युद्ध करेगा तो

श्री स्वामी ॥२५॥

विपक्षी का आधा बल उसमें आ जाएगा। बिना युक्ति के कालयवन को युद्ध में जीतना असम्भव था। श्रीकृष्ण भगवान् जब कन्दरा में घुसे तो मुचकुन्द ऋषि समाधि अवस्था में बैठे थे। उन्होंने ऋषि को अपना पीताम्बर उढ़ा दिया और स्वयं आड़ में छिप गए। कालयवन दैत्य ढूँढते-ढूँढ़ते वहाँ आ पहुँचा। उसने जब कन्दरा में प्रवेश किया तो उसकी दृष्टि पीताम्बर पर पड़ी उसने समझा कि यही कृष्ण है। दैत्य ने अपने मुष्टक से मुचकुन्द ऋषि पर प्रहार कर दिया जिससे उनकी समाधि भंग हो गई। ऋषि ने आँखे खोलते ही श्राप दिया कि प्रहार करने वाले तू नष्ट हो जा। ऋषि के संकल्प से कालयवन का अन्त हो गया और भगवान् श्रीकृष्ण की युक्ति सफल हो गई। आप इस घटना का बड़ा सजीव चित्रण करते थे। वे जब मुचकुन्द ऋषि के बैठने स्थान पर बैठकर बताते थे तो मुचकुन्द ऋषि के स्वरूप में ही दिखाई पड़ते थे। इसी प्रकार जब वे एक स्थान पर खड़े होकर बतलाते थे कि भगवान् इस स्थान पर छिपे थे, तो वे साक्षात् श्रीकृष्ण के ही स्वरूप में दिखाई देते थे। ऐसी अलौकिक लीला थी उनकी। हे स्वयंभू ! आपका पावन जीवन श्रुति के महावाक्य ''सर्व खल्विदं ब्रह्म'' का एक जीता जागता उदाहरण था। अपने भक्तों को करुणाकर ने एक लीला दिखाई। दतिया में आपको एक भयानक काले बिच्छु ने काट लिया इससे आपके पैर में सूजन आ गई और अत्यन्त दारुण वेदना होने लगी। किन्तु आपके चेहरे पर वेदना का किंचित भाव नहीं आया। बालक प्रकाश मोहन जुत्सी ने श्री प्रभु से बारंबार कहा कि डॉक्टर आदि को बुलाएँ, लेकिन हे प्रजापति महेश्वर ! आपने उत्तर दिया 'भोग भोगना ही उचित होता है' जो ब्रह्म मुझमें हैं वही बिच्छू में भी है। हे प्रभू! सच्चे सन्त में भेद की दृष्टि नहीं होती। यह सत्य वचन है। नीलकण्ठ स्वरूप श्री प्रभु आप अपने भक्तों के विषयरूपी विष का हरण तत्क्षण करते हैं। गुलाब देवी जैन का बड़ा

लड़का प्रद्युम्न (कप्तान) राजस्थान राज्य के सुखाडिया मन्त्रिमण्डल में उपमन्त्री था। वह नित्य प्रभु एवं माई के चित्र के दर्शन किए बग़ैर कोई भी कार्य नहीं करता था। जब सुखाड़िया मन्त्रिमण्डल भंग हुआ तो हे विरूपाक्ष ! आपने स्वप्न में दर्शन देकर कहा- मैं तो यहीं पर रहूँगा। आश्चर्य जनक घटना हुई कि उसे पुनः बनने वाले मन्त्रिमण्डल में भी मंत्री पद की प्राप्ति हुई। धौलपुर में जेलर नारायण सिंह के यहाँ लेडी डॉक्टर शकुन्तला तलवार को मन्त्र का उपदेश कर निर्भय किया। पुरश्चरण की आज्ञा प्राप्त कर वह साधना में तत्पर हो गई। उन्हें साधना में नित्य ही दिव्य अनुभव होने लगें। एक दिन वह श्री चरणों में प्रणत होकर कहने लगीं कि पूज्य गुरुदेव, कल तो बहुत ही अजीब स्वप्न आया। आज्ञा हुई कि सुनाओ। हे भक्तगणों ध्यान से श्रवण कीजिए। महामहिम प्रभु ने किस प्रकार लीलाकर अपने स्वरूप का दिग्दर्शन कराया। डा. तलवार सहमें-सहमें बोली- हे करुणानिधान ! रात्रि में मैं क्या स्वप्न देखती हूँ कि पीत वस्त्र पहिने स्वर्ण रत्न आभूषणों से युक्त एक अत्यन्त तेजस्विनी अलौकिक स्त्री कमलगट्टे (पद्माक्ष) की माला से जप कर रही हैं और उनके पास ही दिव्य आसन पर आप अत्यन्त तेजस्वी रूप में अत्यन्त प्रसन्न मुद्रा में विराजमान हैं। मैंने प्रणाम करके पूछा कि- हे माता आप कौन हैं और किसका जप कर रही हैं ? मंद मुस्कान से उस दिव्य स्त्री ने कहा कि मैं श्री स्वामी का जप कर रही हूँ। इतने में ही उपाध्याय (शिवकुमार उपाध्याय) स्वप्न में ही प्रकट हो गए और मेरा स्वप्न भंग हो गया। आश्चर्य ! जब डा. तलवार अपना स्वप्न महाराज श्री को सुना रहीं थीं उसी समय उपाध्याय ने भी आकर श्री चरणों में प्रणाम किया। श्री महाराज ने डा. तलवार को चुप रहने का संकेत किया एवं जाने को कहा। दूसरे दिन महाराज श्री ने उन्हें बुलाया और कहा कि मैं सब के सामने तुमसे नहीं कहना चाहता था कि तुम्हें साक्षात् पीताम्बरा माई के दर्शन हुए हैं। श्रीमती तलवार के तो होश हवाश का ठिकाना ही न रहा

कि स्वयं प्रभु ने कृपा कर माई के दर्शन कराए और माई भी इनके नाम की माला फेरती है। शिव-शक्ति के सम्बन्ध कौन जान सकता है ? इष्ट और गुरु की एकता का इससे बढ़िया दृष्टान्त और क्या हो सकता है ? हे गजानन ! आपने निगमागम वाक्यों की सार्थकता अपने भक्तों को किस अद्‌भुत तरीक़े से बतलायी यह कृपा की अत्यन्त ऊँची मंज़िल है, शुभं से भी शुभं बनाकर आपने अपना अद्वैत रूप भक्त को दर्शाया। एक बार भक्तों के आग्रह पर श्री महाराज जी संस्कृत पाठशाला के भवन का शिलान्यास हेतु बाड़ी पधारे। तभी से वैद्य प्रजानाथ शास्त्री, जब उनकी उम्र सोलह वर्ष की थी, महाराज जी की शरण में आ गए। वे पढ़ने में अत्यन्त कमज़ोर थे। एक दिन शास्त्री जी के पिताजी उन्हें आपके दर्शन कराने ले गए वहाँ पर उन्होंने आपसे निवेदन किया कि मेरे पुत्र की मेधा शक्ति अत्यन्त क्षीण है। मैं ब्राह्मण हूँ और अपने पुत्र को संस्कृत तथा आयुर्वेद का अध्ययन कराना चाहता हूँ। आप यह सुनकर अत्यन्त प्रसन्न हुए और बालक प्रजापतिनाथ से बोले ''जो हम कहें क्या तुम उसे करोगे'' बालक ने उत्तर दिया- ''हाँ महाराज''। तब आपने बालक प्रजापतिनाथ को सरस्वती मन्त्र का उपदेश दिया जिसका श्री प्रजापतिनाथ ने मन से जप किया कुछ ही समय में शास्त्री जी कुशाग्र बुद्धि वाले विद्यार्थियों की श्रेणी में आ गए। हे प्रभु, देवभाषा संस्कृत के प्रति आपका अत्यन्त मार्मिक स्नेह था। आपने स्वयं कष्ट उठाकर भी ऋषियों की प्राचीन परम्पराओं को जीवित रखा। संस्कृत अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों के लिए आपका ममतामय वात्सल्य उमड़ता रहता था। उसके बाद लगातार बड़े होने तक प्रजापतिनाथ दतिया में महाराज के दर्शनों को जाते रहे। एकबार मकान के सम्बन्ध में परिवार वालों से झगड़ा हो गया और विवाद न्यायालय में पहुँच गया। वैद्य जी परेशान हालत में महाराज जी के पास गए, परंतु उनको कुछ भी महाराज से कहने का साहस नहीं हुआ। किन्तु अन्तर्यामी सन्त ने सब जान लिया

और बोले- क्यों आया है ? क्या परिवार वालों से झगड़ा हो गया है ? तब श्री वैद्य जी ने महाराज जी को सब बातें सच बता दीं। कृपानिधान अन्तर्यामी महाराज जी ने वैद्य जी को एक स्तोत्र दिया और उसका पाठ करने को कहा। पाठ पूर्ण होते ही बड़ा प्रभाव हुआ, सभी विरोधी परास्त हो गए। क्या आश्चर्य ? जिसने आपसे प्रेम का पाठ पढ़ लिया वह आपके श्री चरणों में सदैव के लिए लीन हो गया। गुरु और शिष्य का भेद ही मिट गया, यह अजब निरालापन, आपकी महिमा और गरिमा का प्रथम और अंतिम पाठ है और भक्त की मंज़िल है। ''मक्तवे इश्क़ का दस्तूर निराला देखा, उसको छुट्टी न मिली जिसको सबक़ याद हुआ।'' हे सर्वेश्वर आप साधना और भक्ति के प्रबल समर्थक होते हुए भी चमत्कार प्रदर्शन और सांसारिक कार्यों में उनके उपयोग के विरुद्ध थे। किन्तु साधकों की आस्था परमात्मा में दृढ़ हो इस कारण लौकिक कामनाएँ भी साधकों द्वारा मंत्र जप अथवा स्रोत पाठ कर्म कराकर पूर्ण करते थे। एक दिन धौलपुर निवासी मदनलाल रस्तोगी को अदालत से किराये की दुकान खाली करने के आदेश मिल चुके थे और खुद की दुकान को किरायेदार खाली नहीं कर रहा था। अपनी समस्या का निवेदन महाराज जी से किया। श्री प्रभु ने आज्ञा दी- कल सुबह चैत्र सुदी पूर्णिमा मंगलवार है, यह माई का दिन है तथा विजय का दिन है और एक स्तोत्र प्रदान कर कहा- कल से नित्य इसके सौ पाठ करने हैं। अगले दिन से पाठ प्रारंभ किया गया। एक माह बाद कोर्ट से स्टे मिल गया। पाठ करना चालू रहा। वे फिर आपके पास आए। आपने पाठों की कुल संख्या पूछकर ज़ोर से उसके सिर पर हाथ रखा और कहा कि- जाओ अपना पाठ करो, तुम्हारा फ़ैसला ऊपर की अदालत से तो हो चुका है। ''ये सांसारिक अदालतें तो बनती बिगड़ती रहा करती हैं। ऊपर की अदालत का फ़ैसला अटल है।'' इस प्रकार कृपा प्राप्ति के बाद मदनलाल धौलपुर लौट आया। न्यायाधीश महोदय ने मदनलाल के वकील

से पहले कहा था- इस मुक़दमे में कुछ भी दम नहीं है, किन्तु उन्हीं न्यायाधीश महोदय ने मदनलाल के पक्ष में फ़ैसला कर दिया। हे श्री सद्गुरु ! यह सब आपकी कृपा का ही फल था। हे आदि देव गणेश ! हे गणनाथ ! हे गौरीसुत ! आपकी कृपा का महाविराट दरवाज़ा खुला दिखाई दे रहा है। ''राजा रंक हुआ जहाँ रंक हुआ सम्राट'' हे अन्नदाता ! आपकी दिव्य गन्ध सारे वायुमण्डल में फैल गयी है और भक्तगण स्वयमेव अपने कल्याण हेतु आपके दर्शनों को आ रहे हैं, इस तरह वहाँ लीलाएँ हो रही थीं कि बहुत से दतिया निवासी आपके भक्त दलबल सहित आपको वापिस लेने के लिए पहुँचे और आपको दतिया ले आए। राष्ट्रगुरु श्री स्वामीजी अन्तः प्रेरणा से लिखा गया यह 'स्वामी कथासार' ग्रन्थ भवसागर पार करने-कराने वाला उनका अहेतुक अनुग्रहरूपी पोत है। हे श्रोतागणों ! इस स्वामी कथासार के पढ़ने और सुनने वाले श्रद्धावान् भक्तों को भगवान् की समीपता बहुत ही आसानी से प्राप्त हो जाती है। श्री स्वामी जी सबका कल्याण करें। श्री स्वामी जी महाराज की जय। यह कथा श्री पीताम्बरामाई को अर्पण करें।

।। इति तृतीय अध्याय समाप्त ।।

।। श्री गणेशाय नमः ।।

श्री स्वामी कथासार

चतुर्थ अध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे आदिदेव ओंकार ! । भरे जलाशय से ही, पानी की प्यास बुझती है, और आपकी ही कृपा से 'बूँद बूँद करि भरहिं तलावा'। हे ज्ञानगम्य, ! आप नव ज्ञान रूपी तालाब को भरेंगे तभी कथा आगे चलेगी। क्योंकि वैखरी वाणी आपकी कृपा पाकर ही काम करती है। निराकार को साकार की सीमा में बाँधने के अपराध के लिए भगवान् वेदव्यास ने क्षमा माँगी थी आपका स्थूल चरित्र नहीं लिखा जा सकता इसलिए यह दास भी पूर्व में ही क्षमा याचना करता है। जिन्होंने छुआछूत और जाति-पाँति पर कुछ भी विचार न करके सर्व साधारण को भक्ति का उपदेश दिया, जिनकी कृपा से जाति के आधार पर अधम माने जाने वाले वाले भी जगत् पूज्य बन गए। जिन्होंने सीताराम की सेवा पूजा का विचार किया, जिन्होंने राधाकृष्ण की उपासना को ही सर्व स्वसिद्ध किया। जिन्होंने नीम के वृक्ष में सूर्य दिखाकर भूखे वैष्णव को भोजन कराया, आपके ही अंशावतार मधुरभाव के उपासक उन भगवान् निम्बकाचार्य और श्री रामानन्द स्वामी के चरणों में भी हम सब प्रणाम करते हैं। जिन्होंने राधा को श्रीकृष्ण के दर्शन का हेतु माना, इस प्रकार शक्ति के मातृभाव की प्रधानता दी। एक दिन आपके प्रिय सेवक भक्त श्री फौजदार, श्री दुबे आदि

ने कहा, हे सर्वसुखप्रद ! धौलपुरवासियों ने आपकी कृपा- अमृत का पान किया अब दतिया में अमृत-वर्षा होनी चाहिए। आपकी कृपा से कोई अखण्ड कीर्तन का कार्यक्रम हो जिससे हम लोगों का कल्याण हो, श्री प्रभु ने फ़ौजदार से कहा- कि, यह तो तुमने हमारे मन की बात कह दी है। तुमने ईश्वर गीता का हिन्दी अनुवाद करने के लिए जब हमसे कहा, तब भी हमें बड़ी खुशी हुई थी, अब तुम लोगों को परमात्मा की प्रसन्नता और अपने कल्याण के लिए अखण्ड कीर्तन का कार्यक्रम भी करना चाहिए। श्री स्वामी जी के भक्तों द्वारा यह पूछने पर कि आयोजन में कौन से नाम संकीर्तन को ग्रहण किया जाय, श्री प्रभु ने कहा- हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे। हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे।। इस मन्त्र का अखंड कीर्तन हो। आगे आपने कहा- इस एक मन्त्र के जप से ही सोलह (षोडश) नामों का जप होता है, 'कलिसन्तरणोपनिषद्' में इस मन्त्र की बड़ी महिमा कही गई है। संकीर्तन व्यवस्था की एक सभा में जब एक पण्डित जी ने कहा कि- यह तो वैष्णव मन्त्र है, तो आपको उसका यह कहना ठीक नहीं लगा और आपने इस प्रकार की साम्प्रदायिक संकुचित भावनाओं की भर्त्सना की। हे विश्वात्मा ! आपने समझाया- साधन प्रणाली तो शैव, वैष्णव, शाक्त कर्म ज्ञान आदि भेदों से अनेक प्रकार की हैं परन्तु परमात्मा तो एक ही है। अक्सर अबोध जन इस भेद को देखकर कलह किया करते हैं कि हमारी ही साधना प्रणाली सत्य एवं सर्वोपरि है। लेकिन बात ऐसी नहीं है। जो जिसका अधिकारी है- वह साधन उसके लिए सर्वथा सर्वोपरी है। वास्तव में गुण परिचय न होने से ही झंझट होती है। प्रभु के पास हिन्दू, मुसलमान, जैन, बौद्ध, शाक्त, वैष्णव, शैव, पारसी, ईसाई सभी समान रूप से स्नेह पाते थे और उन्नति का मार्ग प्राप्त करते थे, इस तरह धीरे-धीरे दतिया में कीर्तन का अधिक प्रचार हो गया।

श्री प्रभु ने जगन्माता बगलामुखी की स्थापना आश्रम में की, इसलिए लोग उन्हें केवल शाक्त सन्त ही समझते थे। परन्तु वे तो प्रत्येक सम्प्रदाय के समानाधिकारी सन्त शिरमौलि थे। वे पंचदेवों को मान्यता देते थे, वेद और स्मृति तथा आगमों द्वारा समर्थित और समन्वित मत का ही वे प्रचार करते थे। सभी मत-मतान्तरों को समाप्त कर सत्यता के आधार पर आध्यात्मिक उन्नति के मार्ग की प्रशस्ति के लिए ही उन्होंने इस धराधाम पर अवतार ग्रहण किया था। वे तो सभी के हैं और सर्व में व्याप्त हैं। हम लोग अज्ञान में डूबे सन्तों की महिमा नहीं जानते। आप तो सभी धर्म व सभी जाति के हैं, भगवान् की कोई जाति नहीं होती। भारत में आपने अवतार ग्रहण कर अज्ञानियों व भूले भटके लोगों का मार्गदर्शन किया और बताया कि परमात्मा सभी का है और एक है। तुम लोग विचार पूर्वक कर्म करो और भजन में अपना जीवन बिताओ। तभी जीवन सफल होगा और सुखशांति मिलेगी अन्यथा देहमात्र एवं मोह माया के जाल और फ़िरक़ापरस्ती में फँसकर विनाश ही होता है। जानबूझकर जो नर्क भोगना चाहता है उसका इलाज तो भगवान् के पास भी नहीं है।'' ऐसा कहकर श्री प्रभु ने एक घटना का विवरण दिया- ''मेरे पास कानपुर से योगेश्वर प्रसाद मिश्र आया था, बड़ी विपत्ति में था, चालिस दिनों तक झाँसी की जेल में भी रहना पड़ा। सगे संबंधी और मित्रों ने भी संकट की स्थिति में उससे मुँह मोड़ लिया था। हमने उससे कहा- ''तुम अपने विषय में माँ से कहो, वे समस्त विपत्तियों का निवारण करती हैं''। जब उसकी स्थिति फिर से ठीक हो गयी, तो दीनानाथ ने एक दिन उससे कहा- संसार तो तुमने देख ही लिया, कोई किसी का नहीं होता, अब तुम मेरे रंग में रंग जाओ। लेकिन उसने उत्तर दिया' महाराज अभी एक कन्या का विवाह करना है। ज्ञाननिधि श्री महाराज जी बोले- देखो संसार ने उसकी ऐसी दूर्दशा की किन्तु

वह उसके बाद भी संसार को नहीं छोड़ना चाहता। जाओ और संसार का दुःख अभी और भोगो।

वह उसके बाद भी संसार को नहीं छोड़ना चाहता। जाओ और संसार का दुःख अभी और भोगो। ऐसी स्थिति में क्या किया जाय ? महासागर के बारे में क्या लिख सकते हैं ? परमात्मा का वर्णन हम क्या कर सकते ? बड़े लोग तो वे है जिनके सामने छोटे, छोटेपन का अनुभव नहीं करते। हे महान् विभूति ! आपसे बड़े-बड़े तपस्वियों ने तप सीखा, महामहोपाध्यायों ने विद्यापाठ सीखा और शंकराचार्यों ने उपदेश लिया। तरुणावस्था में ही सब शास्त्रों का अध्ययन आपने पूर्ण किया और छोटी अवस्था में ही सन्यास लेकर देशाटन को निकल पड़े, कभी-कभी किन्हीं पावन क्षणों में आप गुप्त रहस्य भी भक्तों पर प्रकट कर दिया करते थे। एक दिन आपने बताया- आप जन्मदात्री माँ के प्रिय पुत्र थे, उनको भी अकेला छोड़कर एक रात चुपके घर से निकल पड़े। माँ अत्यन्त दुःखी हुई और रोने लगी- कहीं मेरा बेटा साधु तो नहीं हो गया ? यह विचार कर ढूँढ़ती ढूँढ़ती काशी आयीं तो गंगाजी के घाट पर अपने सन्यासी पुत्र से भेंट हो गई। माँ ने आपको बहुत दुलारा-पुचकारा और घर वापस चलने का आग्रह किया। श्री प्रभु ने अपनी परमपूजनीया माई से कहा- ''आज रात काशी में बिताकर कल सुबह बातें करेंगे'' यह नहीं कहा कि घर चलेंगें, क्योंकि सन्त कभी भूलकर भी झूठ का आश्रय नहीं लेते। रात को धर्मशाला में चले गए और माता को विश्राम करने को कह कर स्वयं पांव दबाने लगे। तथा माँ से कहा कि ''मैं तो तुम्हारे स्वरूप को ही सारे संसार में देखता हूँ। संसार में विचरण करने वाले सभी जीव तुम्हारी सन्तान हैं''। इस प्रकार भाँति-भाँति के वार्तालाप करके माँ को प्रसन्न किया। जब माता सो गई तो अर्द्धरात्रि में चुपचाप उठकर, अपने हृदय को कठोर करके आप धर्मशाला से प्रस्थान कर गए। आपके मन में तो वैराग्य की ज्वाला धधक उठी थी क्योंकि आपका सिद्धान्त था कि विषयों के नश्वर होने का

विचार चित्त में दृढ़ करना और विषयों में चित्त की आसक्ति न होने देना ही सच्चा वैराग्य है। अतः पूज्य माताजी के सो जाने पर उनके चरणों को स्पर्श और प्रणाम कर पुनः चुपचाप निकल गए। हे महातपा ! आपने भ्रमणकाल में अनेक बहुमूल्य शास्त्रग्रंथों की पुस्तकों एवं पाण्डुलिपियों को लोक कल्याणार्थ एकत्रित किया। दण्ड को त्यागने के साथ-साथ आपने अपने नाम को भी त्याग दिया। मात्र पहचान के लिए अपने को स्वामी नाम से सम्बोधित कराया। दण्ड आदि धारण करने की कोई आवश्यकता नहीं थी। क्योंकि दण्ड, कमण्डलु एवं गेरुए वस्त्र बाहरी चिन्ह स्वरूप हैं। रक्त वर्ण होने से गेरु अग्नि का प्रतीक है एवं अग्नि देवता सुषुम्ना के अधिपति हैं। सुषुम्ना के चक्र कमण्डलु हैं तथा शरीर के आधार ही यतियों के दण्ड के षोडश पर्व हैं। जो योगी सुषुम्ना, उसके चक्र, व षोडश आधारों को जानता है, उसे उनके बाहरी चिह्न- गेरुए वस्त्र, कमण्डलु, बाँस का दण्ड धारण करने की आवश्यकता नहीं है। हे आनन्दकन्द श्री स्वामी जी महाराज ! आप ऐसे ही आत्मज्ञानी महान् दिव्य आत्मा हैं। हे परमप्रमाण ! जो कर्ज़ अदाकर ऋण मुक्त हो गया, जो नश्वर से अमृत होकर सर्वमय हो गया वह कुछ धारण करे या न करे, यह परमात्मा की स्वयं की इच्छा हैं। आपको शत-शत प्रणाम है। श्री सद्गुरु समर्थ ने आपको माँ के मन्त्र का उपदेश दिया। स्वयं साक्षात् भगवान् होते हुए भी लोकशिक्षा की दृष्टि से आपने गुरु आज्ञा की परम्परा का पालन किया। हे सद्गुरु समर्थ महाराज, आपकी महिमा का और आपकी विनम्रता का किन शब्दों में वर्णन किया जाय ? भगवान् राम और कृष्ण ने भी गुरु आज्ञा पालन में लोक आदर्श प्रस्तुत किया था। उनकी विनम्रता और आपकी विनम्रता एक ही है। गुरु की आज्ञा से आप हरदा स्टेशन से १३ मील दूर नेमावर्त नामक ग्राम जहाँ ''सिद्धनाथ'' स्थान है जो नर्मदाजी का नाभिस्थल कहा जाता है, वहाँ पर आसन लगाकर जपसाधना में तल्लीन हो गए और शीघ्र ही तत्त्वदर्शन प्राप्त कर लिया। यहीं पर मार्कण्डेय ऋषि का प्राचीन आश्रम भी है। हे पशुपतिनाथ ! आपने कहा- साधना से सब कष्ट

पर आसन लगाकर जपसाधना में तल्लीन हो गए और शीघ्र ही तत्त्वदर्शन प्राप्त कर लिया। यहीं पर मार्कण्डेय ऋषि का प्राचीन आश्रम भी है। हे पशुपतिनाथ ! आपने कहा- साधना से सब कुछ प्राप्त किया जा सकता है। कामिनी और कन्चन के मोह में फँसकर ही प्राणी का पतन हो जाता हैं आप एक कथा सुनाया करते थे- एक बार भगवान् विष्णु ने लक्ष्मी जी के ललाट की ओर देखा तो वहाँ उनको काले धब्बे दिखाई दिए, तथा पुनः लक्ष्मी जी के पैरों की ओर देखा तो वहाँ भी काले धब्बे दिखाई दिए। विष्णु ने लक्ष्मी जी से पूछा- ''लक्ष्मी ! तुम्हारे मस्तक और पैरों पर ये काले धब्बे कैसे हैं''? लक्ष्मी जी ने उत्तर दिया- ''स्वामी ! अधिकांश लोग ऐसे हैं जो मुझे प्राप्त करने के लिए मेरे चरणों पर अपना मस्तक रगड़ते हैं, उन्हीं की रगड़ से मेरे चरणों में काले धब्बे पड़ गए हैं, परन्तु इस संसार में कुछ लोग ऐसे भी हैं जिनके यहाँ जाने के लिए मुझे स्वयं को भी अपना मस्तक उनके चरणों पर रगड़ना पड़ता है, परन्तु वे तपपुत फिर भी मुझे स्वीकार नहीं करते, इसीसे मेरे माथे पर भी काले धब्बे पड़ गए हैं''। यह कथा सुनकर भक्तों ने कहा कि आज यह धराधाम आप जैसे अनासक्त महायोगी को पाकर धन्य हो गया है। हे महाविष्णु ! आप हाथ में चक्र इसलिए धारण करते हैं कि लोगों के कल्याण के लिए उनके संसार बंधन को काट दें। भक्त के भाव भक्ति पर ही आप प्रसन्न होते हैं। हम सब आपकी शरण में हैं। सन्त चरित मनोरंजन की कहानी नहीं होती। भक्त लोग सोचते हैं, जो चीज़ें महाराज को पसन्द आती है वे उन्हें खिलाई जाए, दिल के अरमान किस तरह पूरे हों यह विचार करके एक दूसरे से पूछते हैं कि महाराज जी के लिए हलवा पूड़ी ले जाए अथवा दाल-चावल पसन्द हैं। कोई कहता है लड्डू ले जाना अच्छा है, या उन्हें कौनसा वस्त्र पसन्द है। महाराज जी क्या पसन्द करेंगे ? उन्हें क्या भेंट देनी

चाहिए ? हर भक्त चाह रहा है कि त्रिलोकीनाथ प्रसन्न हो जाएँ कोई नैवेद्य की थाली ले जा रहा है, कोई कुछ भेंट से भरी थाली उन्हें अर्पण करना चाहता है। किसी की जलेबी, किसी की खीर, कोई मोतीचूर के लड्डू खिलाना चाहते हैं। सब महाराज को खिलाकर अपनी मनोकामना पूरी करना चाहते हैं। बहुत से लोग सिद्ध कर्मयोगी को दिखाने के लिए झूठी सच्ची माला फेर रहे हैं कि एकबार श्री प्रभु उन्हें निहार लें तो काम बन जाय। किन्तु आज महाराज गम्भीर मुद्रा में है। कुछ खास सेवक अनुमान लगा रहे हैं कि आज कुछ विशेष बात है। श्री महाराज बगिया में अपने मुढ़े पर विराजमान हैं देखा कि आपका भक्त सेवक मोतीलाल मास्टर एक गन्दी सी फटे कपड़े की छोटी पोटली बगल में छुपाकर बाहर ले जा रहा है। यह देख प्रभु ने पूछा कि- मास्टर यह क्या ले जा रहे हो ? मास्टर ने उत्तर दिया- कुछ माह पूर्व एक ग़रीब बुढ़िया यह पोटली दे गई थी, उस समय आप विश्राम कर रहे थे। अतः बुढ़िया ने मुझसे कहा- मेरे स्वामीजी महाराज अभी विश्राम कर रहे हैं, इसमें सूखा दलिया है, मैं अपने हाथ से देना चाहती थीं, लेकिन अब आप मेरी ओर से उन्हें बनाकर प्रेम से खिला देना। श्री प्रभु ने कहा- ''तो इसे कहाँ ले जा रहे हो मेरे लिए यह दलिया आया था तो मुझे क्यों नहीं बताया।'' मास्टर ने घबराकर उत्तर दिया- भूलवश ऐसा हो गया, लेकिन अब यह ख़राब हो गया है, इसमें इल्ली कीड़े भी हो गये हैं। अतः इसे फेंकना आवश्यक है। श्री प्रभु यह सुनकर बहुत नाराज़ हो गए और कहा- ''एक भूल तो तुमने पहले ही कर दी अब इसे फेंकर दूसरी भूल मत करो, प्रेम से दी हुई वस्तु का अनादर करना पाप है, प्रेम में ही परमात्मा का वास होता है''। राजराजेश्वर ने स्वयं मास्टर के हाथ से पोटली छीन ली तथा एक-एक दाने को स्वयं साफ़ किया और अपने भक्त से बनवाकर बड़े प्रेम भरे चाव से ग्रहण किया।

उस दिन और किसी खाद्य सामग्री को देखा तक नहीं। सब लोग यह देखकर बुढ़िया के भाग्य को

उस दिन और किसी खाद्य सामग्री को देखा तक नहीं। सब लोग यह देखकर बुढ़िया के भाग्य को सराहने लगे। त्रेतायुग में वनवास के समय जंगल में आपके दर्शनों की लालसा लिए हुए युगों-युगों से बड़े-बड़े ऋषि-महिऋषि प्रतीक्षा में तपस्यारत थे, लेकिन प्रभु आपने भीलनी शबरी के जूठे बेर बड़े प्रेम से खाकर और द्वापर युग में विदुर पत्नी के हाथ से केले के छिलके खाकर भाव-भक्ति को कर्मयोग और ज्ञानयोग से भी उच्च स्थान दिया। महान तपस्वियों की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। हे परमेश्वर ! आपने उन दीन-हीन भक्तों को नवाज़ा और आज अहोभाग्य लोगों ने उसी लीला को प्रत्यक्ष अपनी आँखों से देखा। सब लोग देवाधिदेव महाराज जी एवं देवी माता की जय-जयकार करने लगे। इस शोर शराबे को सुनकर महाराज जी क्षुब्ध हो गए। तुम लोग लड्डू पेड़ा खाने आते हो। तुम लोगों की मंशा हमें मालूम है। यहाँ बहुत से लोग आते हैं जप पूजा, पाठ करते हैं उनको विघ्न होता है। ब्रह्म तो सारे चराचर में व्याप्त है वही लड्डू पेड़े में तथा वही दलिया में है, इस बात को समझो। जय-जयकार क्यों करते हो, क्या माई को भी जय की ज़रूरत है? यह कहकर महाराज जी बगिया में चले गए। ब्रह्म केवल सत्य है, मिथ्या जगत् का खेल है। वही सब में समाया ज्यों तिलों में तेल है। उसी समय ग्वालियर से, के.के. पाठक और विजयाराजे सिंधिया की लड़की तथा उनके भाई ध्यानेंद्र आपके दर्शनों को आए, सब ही ग्वालियर से आए थे। श्री प्रभु ने राजमाता की पुत्री की ओर इशारा करते हुए पूछा- पाठक जी तुम इसे जानते हो ? पाठक जी के इनकार करने पर महायोगी ने कहा ''यह राजमाता की लड़की है तथा ग्वालियर की रहने वाली है'' फिर रानी की लड़की से कहा- यह पाठक जी है अच्छे आदमी हैं, हमें प्रत्येक माह २/-रु. देते हैं। अभी यह बात चल रही थी, कि सेवक मोती मास्टर ने आकर श्री प्रभु से पूछा- झाँसी से आपका

भक्त शिवनाथ शर्मा आया है और आपके दर्शन करने की आज्ञा माँग रहा है, क्या हुक्म है ? दीनदयाल श्री प्रभु ने उसको अन्दर आने की अनुमति दे दी। शिवनाथ एक अमीर घराने का लड़का था। उसने आते ही श्री महाराज जी के चरणों में १०१/- रु. भेंट चढ़ाए। उसको मालूम नहीं था कि महाराज जी का चित्त अच्छा नहीं है, नहीं तो वह भूलकर भी नहीं जाता। अभी हुई घटना के कारण श्री महाराज जी खिन्न हैं। दीनबंधु ने शिवनाथ से पूछा यह क्या है ? उसने तुरन्त उत्तर दिया- हे देवों के नाथ ! थोड़े से रुपये हैं जो भेंट स्वरूप चरणों में रख दिए हैं। श्री प्रभु ने फिर से पूछा किसके हैं ? शिवनाथ ने घबराकर उत्तर दिया भगवान् आपके ही हैं। इस उत्तर को सुनकर श्री प्रभु अप्रसन्न होते हुए बोले- ''नहीं ये काग़ज़ के हैं'', तथा बैठे हुए लोगों से कहा ''ऐसे लोग ही पैसे के घमण्ड में रहते हैं जो साधु, सन्तों और मन्दिरों पर पैसे के बल पर अधिकार जताते हैं। अब आप लोग जाइए हमें अपना काम करना है। हमारे निःस्वार्थ भक्त पाठक जी हमारे पास बैठे हैं। मुझे इनसे बातें करनी है।'' सेवक भोलानाथ से कहा बगिया का द्वार बंद कर दो। हे सच्चिदानंद परमपुरुष स्थितप्रज्ञ ! मिट्टी और सोने में, आपके लिए कोई भेद नहीं है। आज यह धरा सच्चा सन्त पाकर पवित्र हो गई है। आपकी दृष्टि में राई और पर्वत एक समान है। सच्चे सन्त भावुक भक्त हृदय व्यक्तियों, ग़रीब, श्रद्धालु लोगों की भेंट स्वीकार करने में प्रसन्न होते हैं। वहीं अहंकारी धनवान् व्यक्तियों की भेंट चाहे वह कितनी ही मूल्यवान् क्यों न हो कभी स्वीकार नहीं करते। देश के बहुत से धन कुबेर आपकी कृपा प्राप्त करने के लिए बार-बार आश्रम में चक्कर लगाया करते थे, लेकिन, हे स्वामी आपने कभी उनकी ओर ध्यान नहीं दिया। आपको तो निर्मल हृदय कमल में ही बसाया जा सकता है। हे त्र्यंबकेश्वर ! भोले अज्ञानी लोग आप दयानिधि के

पावन प्रेम को कैसे समझ सकते आप तो भाव के ही भूखे हैं। लता-पत्ता और पुष्पों के अर्पण मात्र

पावन प्रेम को कैसे समझ सकते आप तो भाव के ही भूखे हैं। लता-पत्ता और पुष्पों के अर्पण मात्र से ही श्री चरणों की कृपा मिल जाती है। आप श्री स्वामी जी भोले भण्डारी हैं जहाँ दया की कोई सीमा नहीं है। जो अनन्य भाव से आपकी शरण में आता है उसको आप धन्य-धान्य से परिपूर्ण कर देते हैं और उसके घर में लक्ष्मी अटल रूप से वास करने लगती है। इसलिए सबको श्रद्धा और भक्तिपूर्वक प्रभु श्री स्वामी जी महाराज की शरण में आना चाहिए। बड़े से बड़ा पापी भी प्रेमपूर्वक उनकी शरण में आकर अभय को प्राप्त करता है। हे अमृतेश्वर ! आपके 'स्वामी कथासार' की कथाएँ कल्याण और शान्ति को देने वाली हैं। इस स्वामी कथासार को श्रद्धा और भक्तिपूर्वक सुनने और नित्य पाठ करने से दीन-दुखियों के सन्ताप का हरण होकर उनकी सम्पूर्ण बाधाएँ समाप्त हो जाती है। कष्टों से मुक्ति पाने का यही सर्वोत्तम उपाय हैं।

इस निवेदन को सब भक्तगण श्री पीताम्बरामाई के चरणारविन्दों में अर्पण करें।

।। इति चतुर्थ अध्याय समाप्त।।

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

पंचम् अध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे सर्वदर्शी ! हे निष्पाप ! हे निष्कलंक देवाधिदेव ! आप शरण में आए प्राणी की पीड़ा-व्यथा दूर करते हैं। सब कुछ भूल, सच्चा नाता साधकर, राह से एक-एक शूल मिटा देते हैं। जगत् को जलते देखा तो करुणावश, कालकूट का पान आपने ही किया। दीन-हीन श्रद्धायुक्त भक्त हृदय आपको सर्वाधिक प्रिय हैं। हे प्रभो ! दुराशय मनुष्य की शुद्धि, विद्यालय, शास्त्राध्ययन, दान-तप योग-यज्ञ, अर्चना-क्रिया, अनुष्ठान आदि से उस प्रकार नहीं होती, जिस प्रकार भक्त गण के सत्संग से होती है। संसार सागर को पार करने के लिए पुरुषोत्तम श्री भगवान् की लीला-कथा, श्रवण से भिन्न अन्य कोई नाव नहीं है। अर्जुन तो आपका सखा और राजा था। बड़े-बड़ों का ध्यान रखते ही हैं। लेकिन ग़रीब गड़करी को नवाज़ने में आपने क्षणभर भी देर नहीं की। ग्वालियर राज्य की राजमाता श्रीमती विजयाराजे सिंधिया ने आश्रम में दो कमरो और एक बरामदे वाला मकान स्वयं के रहने के लिए बनवाया तथा सदाशिव गड़करी नाम के एक रिटायर्ड सैनिक को चौकीदार रख दिया। आश्रम में स्थान मिलने से मानो गड़करी के हाथ बहुत बड़ी सम्पत्ति लग गयी हो। वह सन्तों को मानने वाला और उनकी सेवा करने की लालसा रखने वाला

व्यक्ति था। राज परिवार पर जैसी कृपा नहीं हुयी वैसी आपकी कृपा इस भक्त सेवक पर हुयी।

व्यक्ति था। राज परिवार पर जैसी कृपा नहीं हुयी वैसी आपकी कृपा इस भक्त सेवक पर हुयी। आपकी कृपा जिस पर हुई उसके लिए उससे बड़ी कृपा, अन्य किसी पर भी नहीं हुई। हे श्याम सुन्दर ! भक्त गड़करी का बड़ा लड़का आगरा छावनी में छाता-धारी सैनिक था और प्रायः आश्रम पर अपने पिता एवं आपके दर्शनों को आया करता था। एक दिन वह आश्रम आया तब आपने उसे एक रुद्राक्ष का मनका दिया और कहा- ''इसे अपने गले में पहन लो तथा उसे कभी उतारना नहीं'' उसने वैसा ही किया। एक दिन भूलवश उसने रुद्राक्ष को गले से उतारकर रख दिया और हवाई रसायन सुनकर जल्दी में रुद्राक्ष पहनना भूलकर हवाई पट्टी पर चला गया, जहाँ पर बहुत सैनिक हवाई कूद का अभ्यास करने हेतु हवाई उड़ान के लिए खड़े थे। उसे अचानक ख़्याल आया कि रुद्राक्ष खुँटी पर टंगा रह गया है। उसने अपने अधिकारी से गिड़गिड़ा कर प्रार्थना की, कि वह अगली उड़ान में कूदेगा, ज़रूरी सामान कमरे में खुला छूट गया है कहीं चोरी न हो जाय। अफ़सर अधिकारी ने बात मान ली। वह अभी कमरे में पहुँचकर रूद्राक्ष पहन ही पाया था कि बाहर हवाई पट्टी पर बड़े भयानक धमाके की आवाज़ हुई, जिस हवाई जहाज़ में उसे जाना था, उसमें आग लग गई और उसके टुकड़े-टुकड़े हो गए थे। वायुयान में सवार कई सैनिक मारे गए, रुद्राक्ष के कारण उसका पुत्र बच गया। एक बार फिर वही लड़का हवाई जहाज से आगरा क्षेत्र में कूदने के बाद हवाई छतरी में हवा के अधिक दबाव के कारण मीलों दूर उड़ता चल गया और लापता हो गया। आकाश में ही दो दिन बीत गए। सेना द्वारा उसकी खोज की जाती रही। उन दिनों भक्तगणों के आग्रह पर श्री प्रभु चिकित्सा हेतु दिल्ली में थे। उस लड़के की पैराशूट मीलों दूर जाकर ज़मीन की ओर उतरने लगी। वह अचेत होने लगा तभी उसके मुँह से निकला ''स्वामीजी

महाराज बचाइए'' धरती पर गिरने से पूर्व उसे ऐसा लगा जैसे किसी ने उसे गोद में लिया है और धीरे-धीरे नीचे ला रहा है। वह फिर पूरी तरह अचेत हो गया। उसी रात दतिया में उसके बूढ़े पिता ने स्वप्न देखा कि महाराज कमरे में तख़्त पर लेटे हैं और उनकी छाती ख़ून से लाल हो गयी है तथा उससे कह रहे हैं- ''मुझे ओढ़ने के लिए चादर दो। लड़के के पिता ने दौड़कर एक चादर महाराज जी को ओढ़ा दी। चादर ओढ़कर श्री महाराज ने कहा '' यह चादर तुम्हारे बेटे को ओढ़नी थी, लेकिन अब मैं इसे ओढ़ रहा हूँ''। सुबह लड़के के पिता को ख़बर मिली, पुत्र जो लापता हो गया था वह मिल गया है, और सैनिक अस्पताल में भर्ती है। पिता को पहले दुर्घटना की जानकारी नहीं थी। वह घबराकर लड़के के पास अस्पताल पहुँचा, और ठीक होने पर अपने पुत्र को लेकर श्री प्रभु के दर्शनों के लिए पहुँचा। हे स्वामी जी ! आप करुणा की मूर्ति हैं, जीवन-मरण आपके हाथ में हैं। आपने मेरे पुत्र की रक्षा उसी प्रकार की है जैसे आपने द्वापर में गज की पुकार सुनकर उसकी ग्राह से तत्क्षण ही रक्षा की थी। हे कृपानिधान ! मेरे पुत्र को आपने जीवनदान दिया है। इसके लिए हम आपसे कभी भी उऋण नहीं हो सकते। भक्त आनन्द को मोक्ष में नहीं, बल्कि आपकी इन करुणामयी लीलाओं में छुपा मानता है। हे स्वामी ! आपकी करुणा और दया भी अपने मालिक की आज्ञाओं को देखकर चकित और स्तब्ध हो जाती हैं। वे अपना ऐसा दयालु मालिक पाकर अपने ऊपर गर्व करती हैं। ''फ़ानूस बन के जिसकी हिफ़ाज़त हवा करे। वो शमा क्या बुझे जिसे रोशन ख़ुदा करे।'' ब्रह्मा भी विनम्रता पूर्वक हाथ जोड़कर प्रार्थना करते हैं कि भक्त आपके और आप भक्तों के है अतः भक्त लोग मेरे विधान के बाहर हैं। मुझे अपने भक्तों से दूर ही रखें क्योंकि मुझे भय हैं कि आपके भक्तों के प्रति मुझसे यदि कोई भूल हो गई तो मैं दंड का भागी

हो जाऊँगा। कर्मों की गति आपको छोड़कर कोई नहीं जानता। आप स्वयं विधि हैं, नियतात्मा हैं

हो जाऊँगा। कर्मों की गति आपको छोड़कर कोई नहीं जानता। आप स्वयं विधि हैं, निवृतात्मा हैं और परम शिव हैं। आपकी आज्ञा पाकर ही अनन्त ब्रह्मा, अनन्त विष्णु, अनन्त महेश और अनन्त इंद्र, अनन्त कोटि सृष्टियों में अपना कर्तव्य पालन करते हैं। आप करुणा के महासिंधु हैं, जिसकी कोई थाह नहीं है। जिसमें लाखों-करोड़ों ब्रह्मा विष्णु और महेश बुद्‌बुदों की तरह उत्पन्न होते हैं और विलीन हो जाते हैं। फ़रिश्ते भी जहाँ का पता नहीं जानते वहाँ का पता आपके कृपा-कटाक्ष से आपका भक्त एक पल में प्राप्त करने में समर्थ हो जाता है। वह भक्त पास में हो या दूर, देश में हो या विदेश में उस पर आपकी कृपा समान रूप से देश-काल के बन्धन को तोड़कर बहती है। असल में आप पहले से ही हर जगह व्याप्त हैं। हे आशुतोष ! सारी व्यापकता की कल्पनाएँ आपकी आभा मूर्ति में समाप्त हो जाती हैं। झाँसी के उपन्यासकार श्री वृन्दावनलाल वर्मा जब रूस जाने लगे तो आपसे आज्ञा लेने दतिया पहुँचे। आपसे निवेदन किया कि महाराज ! रूस के निमंत्रण पर भारत सरकार की ओर से एक सांस्कृतिक मंडल रूस जा रहा है, वहाँ जाने की आज्ञा लेने आया हूँ। और दन्डवत् प्रणाम किया। श्री प्रभु ने आशीर्वाद देते हुए कहा- बड़ी अच्छी बात है, ज़रूर जाइए, अपनी बात निर्भयतापूर्वक अपनी भाषा हिन्दी में कहिएगा, मैं यहाँ सुनूँगा। वर्मा जी हाथ जोड़कर बोले- हे नीतिकोविद् ! हिन्दी में ही कहूँगा, और निर्भयतापूर्वक कहूंगा, आपकी आज्ञा का पूर्ण रूप से पालन करूँगा।'' आत्मस्वरूप स्वामी जी फिर बोले- ''हमारे राष्ट्रपति डॉ. राजेन्द्रप्रसाद रूस गए थे, उनको मानपत्र वहाँ संस्कृत में दिया गया था परन्तु उसका उत्तर अंग्रेज़ी में दिया गया। कितनी लज्जास्पद बात थी, वे लोग क्या कहते होंगे''? वर्मा जी ने कहा- ''श्री चरणों की दया से हिन्दी में ही अपनी बात कहूँगा।'' हे सर्वात्मा ! आपने कहा- ''बहुत अच्छा जाइए।'' वर्मा

जी रूस गए, रूस से रेडियो पर उनकी वार्ता हिन्दी में प्रसारित की गई। महाराज जी ने भी दतिया में उसे आश्रम पर सुना। उसे उन्होंने पसन्द किया और सराहना की। वर्मा जी रूस से वापस लौटकर झाँसी आ गए। शीघ्र ही दतिया पहुँचकर उन्होंने महाराज जी के चरणों में अपना माथा टेक दिया और हाथ जोड़कर दीनतापूर्वक करुण स्वर में कृतज्ञता प्रकट की, कि प्रभु ! मेरी जान बचाने के लिए आपको रूस आना पड़ा। शास्त्रों में जो यह बात लिखी हुई है कि भगवान् सर्वत्र व्यापक हैं, इसका प्रमाण मुझे प्रत्यक्ष मिल गया। ''मैं ३०-४० फुट ऊँचाई से एकदम नीचे की ओर (सर के बल) गिरा। मेरे रूसी मार्गदर्शक के मुख से चीख निकल पड़ी। वह समझा कि मेरे मरने का दोष उस पर आएगा। किन्तु महाराज जी ! आपने वहाँ पहुँचकर मुझे बच्चे की तरह गोद में ले लिया और आधे मिनट बाद नीचे रखा। वह रूसी गाईड तो समझा था कि उसके सर पर कलंक आया, पर वह आश्चर्य में पड़ गया, जब पृथ्वी तल पर मुझे खड़े हुए तथा हँसते हुए देखा'', वह बोला- वर्मा जी आप तो वास्तव में बड़े कुशल खिलाड़ी (स्पोर्टस्मैन) रहे होंगे ! मैं उससे क्या कहता क्योंकि महाशक्ति, महारक्षक की बात उससे कहनी व्यर्थ थी। कृपासिंधु को पुनः प्रणाम करके बोले कि मैं समझ गया, आप कौन हैं यह मेरी मति दृढ़ हो गई हैं कि निराकार परमात्मा साकार रूप में जीवमात्र के कल्याण के निमित्त धरती पर आए है'' हे जगदीश ! हे सन्यासी ! आपके मर्म को लोग नहीं समझते। पूर्ण ज्ञान, योग और सेवा आपका मर्म है। आपके कृपा कटाक्ष का कोई ओर-छोर नहीं है। भगवान् वासुदेव ने 'ज्ञानीत्वात्मैवमेमतम्' कहा है। जैसे आप समय-समय पर अबोध जनों को शिक्षा देने के लिए प्रकट होते हैं, वैसे ही व्यवहार सिद्ध पुरुषों का भी होता है। उसी को लोक-संग्रह कहते हैं, अपनी-अपनी भावना के अनुसार, उसे कर्म योगी लोग

कर्मयोगी, भक्त लोग भक्तियोगी तथा ज्ञानी ज्ञानयोगी कहते हैं। वास्तव में इन तीनों साधनाओं का फल जीवन्मुक्त पुरुष में ही देखा जाता है; उनका किसी के साथ विरोध नहीं होता, सर्वत्र समता रहती है। भक्त गोपालदास ने अपने ग्राम में ही एक दुष्ट ठाकुर महाराजसिंह को एक झगड़े में गोली मार दी। हत्या के बाद सीधे भागकर दतिया आए। आपने दूर से ही उनको आते देखकर कहा- क्यों कर दिया वन, टू, थ्री ? अब यहाँ क्या करने आया है ? गोपालदास ने चरणारविन्दों में माथा टेक कर सिर्फ़ इतना कहा- त्राहिमाम् त्राहिमाम्। यह सुनकर अमृतसागर श्री प्रभु ने अपने एक सेवक से कहा- गोपालदास के हाथ मुँह धुलाओ और फिर मेरे पास लाओ। हाथ मुँह धोने के पश्चात् गोपालदास ने कुछ चैतन्य होकर महाराज जी से कहा कि हे जगदीश्वर ! अधमों का उद्धार करने वाले, आप अन्तर्यामी हैं, आप सबकुछ जानते हैं। जब मुझे दूर से देखकर ही आपने वन, टू, थ्री कहा तो में समझ गया कि आप विश्वरूप, परमात्मा, जैसे गाय बछड़े का इन्तिज़ार करती है, उसी प्रकार मुझ पापी को चरणों में शरण देने को उतावले बैठे हैं। मैं आपकी शरण में आया हूँ। दैत्य वंशीय भक्त विभीषण को शरण में आया जानकर आपने उठकर उसे भरत की भाँति प्रेमपूर्वक हृदय से लगा लिया था। इसी प्रकार गोपालदास भी आपका भक्त था। श्री प्रभु ने कहा- तुम आ ही गए हो, तो अब भय मत करो और सुनो- तुमने एक दुष्ट व्यक्ति को मारा है, यदि तुम न मारते तो वह निश्चय ही तुम्हें मार देता। लौकिक अदालत में जब यह सिद्ध हो जाता है कि बचाव में कोई वध हुआ है तो मुलज़िम को छोड़ दिया जाता है। तुम माता के आगे अपनी अपील पेश करो, सबकी परमेश्वरी वो ही है। दंड देने का अधिकार उन्हीं को है। क़त्ल का मुक़दमा चला, फाँसी की सज़ा हुई हाईकोर्ट से भी फाँसी की सज़ा क़ायम रही। परिवार वालों ने श्री महाराज के

पास घटना की सूचना तारद्वारा भेजी। आपने समाचार मिलने पर अधिकार पूर्ण स्वर में कहा- नहीं नहीं, नहीं फाँसी नहीं होगी। माता ने उसकी अपील मंजूर कर ली है। दस माह तक गोपालदास काल - कोठरी में फाँसी की प्रतीक्षा करते रहे। सन् १६६६ ई. में विश्वभर में मनाई गई महात्मा गांधी जन्म शताब्दी के उपलक्ष्य में फाँसी के सभी कैदियों को सज़ा मुक्त कर दिया। गोपालदास सीधे दतिया महाराज जी को प्रणाम करने गए। श्री प्रभु ने मात्र इतना कहा- ''हम सन्यासियों को व्यक्ति विशेष के लिए कुछ करना मना है। हम लोग तो बहुजन हिताय बहुजन सुखाय कार्य करते हैं'', मृत्युदण्ड प्राप्त गोपालदास अकेले ही मुक्त नहीं हुए वरन् एक भक्त के कारण मृत्युदण्ड प्राप्त सभी अपराधी बच गए। एक बार इन्हीं गोपालदास ने आपसे प्रार्थना की, कि- एक ज्योतिषी ने मेरा जीवन कुछ ही दिनों का शेष बताया है। आपने यह सुनकर सान्त्वना देते हुए कहा- मन्त्र में मृत्यु को वापस करने की शक्ति है। कल प्रातःकाल मन्त्र दूँगा। निश्चित समय पर मन्त्र प्रदान करने के साथ ही अपने विलक्षण एवं अभय प्रदान करने वाले नेत्रों से एक प्रखर प्रकाश पुंज गोपालदास के निराशा से बुझे नेत्रों में ऊँडेल दिया। एक दिन अर्ध रात्रि में श्री गोपालदास जी के सिर में असह्य पीड़ा प्रारंभ हो गई। वह निद्रा थी या बेहोशी, परंतु उसी स्थिति में उन्होंने देखा कि एक भयानक कृष्णकाय क्रूर पुरुष एक हाथ में दन्ड और दूसरे हाथ में पाश लिए उनकी ओर बढ़ता आ रहा है, उन्हें आभास हुआ कि वे स्वयं भी मन्त्र जप कर रहे हैं, और दन्ड-पाश- धारी उन कालेवर्ण के भयंकर पुरुष की कनपटी पर उन्होंने एक ज़ोरदार थप्पड़ मारा। थप्पड़ की ध्वनि के साथ आधी बेहोशी की स्थिति में उन्होंने स्वयं एक आवाज़ सुनी- हाय मार डाला। गोपालदास बारम्बार अपने आराध्य देव की वन्दना करने लगे। हे वैकुण्ठनाथ ! भवभय भन्जक ! जो जीवन

विधाता ने मेरे भाग्य में लिखा था वह तो कभी का समाप्त हो गया। हे चंद्रशेखर ! ब्रह्मा से जो मुझे आयु प्राप्त हुई थी वह तो कभी की बीत गई अब तो आपकी दी हुई साँसों से ही जीवित हूँ ''चन्द्रशेखरमाश्रये मम किं करिष्यति वै यमः।।'' जिसे चन्द्रशेखर का आश्रय मिल गया, उसका मृत्यु क्या बिगाड़ कर सकती है। अब तो बस यही विनती है कि अपने चरणों की अचल भक्ति प्रदान कर सदा-सदा के लिए अपनी शरण में ले लें जिससे दी हुई साँसे सार्थक हो जाएँ। सदा-सदा मैं शरण तिहारी, तुम हो ग़रीब नवाज़, रघुवर तुमको मेरी लाज।। ज्यों त्यों तुलसी कृपालु चरण शरण पावे, यह कहने सुनने की बात नहीं है, यह तो तेरी महर (कृपा) का सौदा है। भक्तों के गले की रस्सी तेरे हाथ में है। श्री सूर्यदेव शर्मा व अन्य १४ साथियों को भी इसी प्रकार एक हत्या के मामले में साढ़े सात साल की सज़ा और ढ़ाई हज़ार रुपये जुर्माना हुआ। शर्मा जी केस में मुलज़िम नम्बर एक थे। घबराकर सुप्रीम कोर्ट में पैरवी करने वाले बैरिस्टर श्री एन.सी. चटर्जी के पास दिल्ली पहुँचे। वे केस देखते ही बोले इसमें कोई गुंजाईश नहीं है। सूर्यदेव शर्मा ने घबड़ाकर हाईकोर्ट में अपील कर दी। विख्यात बैरिस्टर श्री शशीकांत वर्मा इनके वकील थे। उसी समय सूर्यदेव को दतिया के स्वामी का स्मरण आया, और वे सीधे दतिया पहुँचे। महाराज जी तो त्रिकाल दृष्टा थे ही, वे उनके कष्ट को पहचान गए, बोले- कहो क्या बात है ? शर्मा जी ने अपनी करुण कहानी सुनाई। श्री दीनदयाल माई (माता) की ओर संकेत करके बोले- ये ही सबसे बड़ी अदालत हैं। इनसे निवेदन करो। सूर्यदेव ने कहा, ''मेरी वकालत कर दीजिए''। इस पर राजराजेश्वर श्री स्वामी जी ने कहा- ''कहाँ से लाएगा क़ासिद। बयाँ मेरा ज़ुबाँ मेरी''।। (सन्देश ले जाने वाला (कासिद) तुम्हारी अपनी ज़ुबान कहाँ से लाएगा ? तुम्हारी स्वयं की भावनाएँ कैसे

व्यक्त करेगा ?) इसलिए तुम खुद अपनी बात कहो। शर्मा जी ने माता बगलामुखी से निवेदन किया, तब आप ने कहा- ''बस हो गया काम''। हाईकोर्ट में अपील करने के बाद अपील का नम्बर आने में चार-चार वर्ष लग जाते हैं लेकिन इनकी सुनवाई की तारीख़ चार महीने में आ गई। इनके वकील ने खड़े होकर चार-छः वाक्य ही बोले होंगे कि जज ने कहा- आप बैठ जाइए मैंने केस घर पर पढ़ लिया है। फिर सरकारी वकील से पूछा, आप बताइए कि इन्हें जो सज़ा दी गई है उसे बरक़रार क्यों रखी जायें ? वकील की जिह्वा तो कीलित हो चुकी थी अतः इस प्रश्न पर सरकारी वकील से बोलते नहीं बना। शर्मा जी दतिया आए तो आपने कहा- मनुष्य अभिमान वश सभी कार्यों का अपने को कर्ता समझता है। परंतु उसका यह समझना यथार्थ नहीं हैं। आपने आगे फ़रमाया- अपने अल्प सामर्थ्य एवं ज्ञान से उसके कार्यों में त्रुटि का होना अनिवार्य हैं। जिस महाशक्तिशाली परमात्मा ने अपनी स्वतंत्र शक्ति से विश्व को बनाया हैं, उसकी सहायता बिना, मनुष्य कुछ भी नहीं कर सकता है, जैसे मकान बनाने में मिट्टी, पत्थर, लोहा, लकड़ी आदि वस्तुओं की सहायता लिए बिना कोई मकान नहीं बन सकता। यह चीजें मनुष्य की निर्माणशक्ति से नहीं बनी हैं, इसी प्रकार संसार के सारे कार्य समझने चाहिए। 'कण-कण के कल्याण का बीड़ा लिया सम्हाल, दुःख कहीं भी देखकर सदा हुए बेहाल'। कमला नाम की एक लड़की दतिया में बहुत गम्भीर रूप से बीमार पड़ गई और आख़िरी साँस लेने लगी। बड़े अस्पताल के डॉक्टर-वैद्यों ने कहा- अब यह बचेगी नहीं। वैद्य-डॉक्टरों की बात सुनकर परिवार वाले रोने लगे। उस समय कमला के बाबा तथा ताऊ श्री रघुवीर शरण को याद आया कि वनखण्डेश्वर मन्दिर पर साक्षात्कारी महाराज रहते हैं, तब वे लोग दौड़े महाराज जी के पास आए तथा कमला की हालत बतायी। उस समय श्री महाराज

के दर्शनों के लिए आयुर्वेद के डॉक्टर त्रिवेदी जी वहाँ मौजूद थे। मुक्तिदाता महाराज ने डॉक्टर से कहा- त्रिवेदी जी, बच्ची का इलाज करो। त्रिवेदी जी ने उत्तर दिया- महाराज जी मैं तो पहले ही पूरी कोशिश कर चुका हूँ, सामर्थ्य से बाहर की बात है। उसका बचना मुश्किल है। गंगा के जल में स्नान करने से मुक्ति हो जाती है, तो क्या गंगा में रहने वाले सब कीड़े-मछली भी मुक्त हो जाते हैं ? ऐसे ही सन्त के पास कोई कितना भी जाय सन्त को समझना कोई मामूली बात नहीं है। त्रिवेदी जी बात नहीं समझे। महाराज जी ने फिर त्रिवेदी से कहा- एक बार फिर इलाज शुरू करो, देखो क्या होता है ? अगली सुबह कमला के घर जाकर डॉक्टर त्रिवेदी जी ने उसको दवाई दी, तो तुरन्त असर दिखाई देने लगा। कल तो घर में रोना-पीटना हो रहा था, वहाँ आज आनन्द का वातावरण छा गया। थोड़े ही दिन में कमला एकदम ठीक हो गयी। भगवान् को मानने वाले कम रह गए हैं। अविश्वास और ढोंग का बोलबाला हो गया है। वे अभागे मनुष्य संसार में नरकरूप होकर जी रहे हैं, जो जन्म मरण रूप भवभय भन्जन करने वाले श्री भगवान् स्वामीजी के चरणों से विमुख हैं। हे सर्व लीलामय विश्वात्मा ! आपने भोग-विलास को बेजान कर पाखण्ड दूर किए, बड़े पापों को छोटा किया और उन पापों से दण्ड भी मुलायम कर दिए। हे करुणानिधि ! मुक्तिदाता परमात्मा ! जीवों का दुःख दूर करने के लिए आप सन्त रूप में अवतार ग्रहण करते हैं। दतिया में आप अवतारी पुरुष बैठे हैं। मुसीबत आने पर अपने लोग भी मुँह फेर लेते हैं, सच्चा सन्त ही विपत्ति में साथ देता है। चउदा जी आपका चरणतीर्थ पीकर ठीक हो गए, कमला बाई आपके कहने पर दवाई से ठीक हो गयी। प्रकाश जी थप्पड़ खाकर स्वस्थ हो गए। कहाँ तक बताया जाय; सन्तों के मुख से निकले वाक्य कभी झूठे नहीं होते। सच्चे सन्त के मुखारविन्द से शब्द

निकल भी नहीं पाता कि उस शब्द का परिणाम (कार्य) पहले ही हो जाता है। वाणी के पीछे अर्थ दौड़ता है। आपके भक्त सेवक भगवान् स्वरूप सक्सेना का लड़का लखनऊ में भयंकर रूप से बीमार था। किसी डॉक्टर की दवा से कोई लाभ नहीं हो रहा था। अपितु दवा देने से हालत ख़राब होती जा रही थी। बड़ी-बड़ी मनौतियाँ परिवार वाले मान रहे थे। लेकिन उसकी बीमारी और बढ़ती गई। भगवान् स्वरूप बच्चे को बचाने वाला श्री स्वामीजी के अतिरिक्त कोई दिखाई नहीं दिया और वह भागता-दौड़ता आपकी शरण में दतिया आया, रोते-रोते लड़के की बीमारी का हाल आपसे बताया। हे भवभय भन्जन् सद्गुरु ! आपने एक काग़ज़ में कुछ लिखकर कपड़े में बाँधकर उसे दिया और कहा- जाकर इसे लड़के के गले में बाँध देना। "दुःख में सुमिरन सब करें सुख में करें न कोय। सुख में सुमिरन जो करें तो दुःख काहे को होय।। सोने में मिलावट करने से उसमें दोष आ जाता है, इसलिए शुद्ध-निर्मल भाव से भगवान् को याद करना चाहिए वही विपत्ति में काम आता है। लड़के के पिता को वह कपड़ा आपने सुबह के लगभग नौ बजे दिया था, जो ज्वर चढ़ने का समय था, जब वह घर वापिस पहुँचा तो उसे बड़ा आश्चर्य हुआ कि बुख़ार ठीक उसी समय उतरना आरम्भ हो गया था, जिस समय आपने कपड़े से बँधा वह काग़ज़ दिया था। हे प्रभु ! श्री नारायण ! इस प्रकार आपकी कृपाएँ बरसती रहीं, लेकिन आप निर्विकार भाव में ही रहे। कभी किसी कार्य का श्रेय अपने ऊपर नहीं लिया। रहस्यमय तरीक़े से आपकी करुणा का बादल बरसता है- "क्या फ़ायदा फ़िक्रे बेशीकम से होगा। हम क्या हैं जो कोई काम हम से होगा। जो कुछ हुआ, हुआ करम से तेरे। जो कुछ होगा, तेरे करम से होगा।" श्री प्रयागनारायण श्रीवास्तव इलाहाबाद में अत्यन्त कठिन रोग से ग्रस्त हो गए। जितना उपचार किया गया उतना ही रोग घातक होता

गया और मूत्र बंद हो गया। बड़े-बड़े डॉक्टरों ने एक मात्र इलाज, ऑपरेशन बतलाया। हे बृजभूषण ! आपकी आंतरिक रहस्यमय प्रेरणा से श्रीवास्त्व जी ने ऑपरेशन के लिए मना कर दिया। कई दिन तक मूत्र बंद रहा। उन्होंने निश्चय कर लिया था कि जिस आंतरिक प्रेरणा से मैं ऑपरेशन नहीं करा रहा हूँ तो अब आंतरिक प्रेरणा होने पर ही ऑपरेशन कराऊँगा। सन्त तो भाव का भूखा होता है। इसलिए भाव, श्रद्धा और दृढ़ता का फल भी शीघ्र ही मिल गया। उन्होंने स्वप्न देखा कि सर्वानन्द जी महाराज शौच होकर लौट रहे हैं, घर के सामने पहुँचकर चबूतरे पर कमण्डल रख दिया और अचला निकालकर फेंक दिया। सारे परिवार में इस प्रकार के स्वप्न को जानकर हर्ष छा गया। उसी दिन नींद में उन्हें लगा कि कोई ऑपरेशन कर रहा है। फलस्वरूप सुबह मूत्र हो गया। इस तरह अनेकानेक प्रकार से लोगों की विपत्तियाँ दूर करने की घटनाएँ कहाँ तक कही जा सकती हैं ? हे आनन्दकन्द ! चाहे आधिभौतिक बीमारी हो या आधिदैविक अथवा आध्यात्मिक हो, आपकी करुणा समान रूप से और समभाव से निरंतर बरसती रही। कितने ही कष्ट आपने स्वयं अपने शरीर पर भोग कर लोगों को यन्त्रणा से मुक्ति दी। बन्दे का सिर्फ़ एक ही धर्म होता है- बन्दगी करना। एक ग़रीब वृद्ध व्यक्ति अपने एकमात्र तरुण पुत्र को, जिसके सारे शरीर में लकवा हो गया था, खाट पर डालकर सगे सम्बन्धियों के साथ एक दिन महाराज के सामने ले आया और बड़े करुण स्वर में प्रार्थना करने लगा ''मेरी ग़रीबी और बुढ़ापे का एकमात्र सहारा यह लड़का कुछ ही दिनों का मेहमान है। आप दया के सागर हैं, हम सब आप की शरण में आए हैं, इसको ठीक कर दें''। इस प्रकार बड़े आर्त स्वर में बारम्बार स्तुति और प्रार्थना करने लगा। वहाँ बहुत से लोग एकत्रित हो गए थे, उन सबकी आँखों में भी उस वृद्ध का रोना-बिलखना

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

षष्टम् अध्याय

श्री गणेशाय नमः। गुरुतत्त्व का न आदि है और न ही अन्त, वह तो स्वयंभू है। वही शिव है, वही शक्ति है, वही साकार और निराकार भी है। उसका कभी नाश नहीं होता। वह अजन्मा और अमृत है। कोई कितना ही अधम और पापी क्यों न हो यदि उसे किसी प्रकार सद्‌गुरु की शरण प्राप्त हो जाए तो वह परम पवित्र हो जाता है। उस शिष्य के भाग्य पर, जिसको गुरुने अपनी शरण में ले लिया है, दया और करुणामयी दृष्टि से उसे निहारा है, तथा कृपा कर रहे हैं, उसके सौभाग्य पर समस्त सृष्टि एवं देवलोक में उत्सव मनाया जाता है। गुरु कृपा करता है तो ऐसे समय ब्रह्मा, विष्णु, महेश और समस्त देवताओं की एकत्रित शक्ति भी यदि किसी कारणवश बाधा डालना चाहे तो उस कृपा प्रकाश को रोकने में ही असमर्थ सिद्ध नहीं होती, प्रत्युत उनके स्वयं नष्ट होने का भय उत्पन्न हो जाता है। वे परम ब्रह्मानंद स्वरूप हैं, परम सुख देने वाले हैं, उनके अलावा दूसरा कोई है ही नहीं। जो मूर्तिमान ज्ञान हैं, द्वन्द्वों से परे हैं, गगन के समान सर्वत्र व्यापक हैं, ''तत्त्वमसि'' आदि महावाक्यों के लक्ष्य हैं, जो एक हैं, नित्य हैं, विमल हैं, अचल हैं तथा सम्पूर्ण प्राणियों की बुद्धि-कर्म के साक्षी-स्वरूप हैं, जो भावों से परे है, तीनों गुणों से रहित हैं, इस प्रकार के अपने सद्‌गुरु को नमस्कार करते हैं। हे ! सर्व सौभाग्यवर्धक श्री सद्‌गुरुनाथ ! आपकी जो

अद्‌भुत कृपा डॉक्टर योगेश मिश्र पर हुई वैसी कृपा लूटने के लिए देवता भी मनुष्य जन्म धारण

अद्भुत कृपा डॉक्टर योगेश मिश्र पर हुई वैसी कृपा लूटने के लिए देवता भी मनुष्य जन्म धारण करने की कामना करते हैं। डॉक्टर साहब धौलपुर में सरकारी अस्पताल में कार्यरत थे। इनका जन्म बहुत ही धार्मिक और पवित्र संस्कारित परिवार में हुआ था। लेकिन इनकी रुचि परमात्मा की ओर नहीं थी। डॉक्टर साहब नहीं जानते थे कि अलख निरंजन की महा अनल उनके हृदय में श्री सद्गुरुनाथ की कृपा से धधक उठेगी। दतिया के महान् जादूगर की जादूभरी निगाहें उन्हें बावला बना देंगी। धौलपुर में स्वामी जी के एक भक्त; लक्ष्मीनारायण जी बुधौलिया के साथ उन्हीं के अनुरोध पर डॉ. साहब श्री प्रभु दर्शनार्थ दतिया आए। प्रथम भेंट में ही आपका कृपा-कटाक्ष डॉक्टर पर हो गया। डॉ. साहब अत्यन्त विचलित हो गए और समझ न पाए कि ऐसा क्यों लग रहा है कि मैं अपना सर्वस्व इन पर न्यौछावर कर दूँ, इनके चरणों में लिपट जाऊँ और स्वयं मतवाला बनकर दूसरों को भी मस्त बनाऊँ; नित्य भगवान् के चरणों में लीन रहूँ। यह सामने जो सन्यासी मूढ़े पर बैठे हैं, यह कौन हैं ? इसका क्या रहस्य है कि सभी आकर अपने जीवन का संचित धन, सर्वस्व इनके चरणों में अर्पित कर रहे हैं। "किस बला की थी कशिश चुम्बक था या जादू कोई। पास उसके जो भी आया लो उसी का दिल गया।।" डॉक्टर को ऐसा महसूस होने लगा कि यही मेरा असली घर हैं। श्री प्रभु लोकनाथ ने उनसे पूछा- तुम्हारे यहाँ किस देवी-देवता की आराधना होती है ? डॉक्टर ने उत्तर दिया- सरकार ! माता छिन्नमस्ता की पूजा हम लोगों के वहाँ वंश परम्परा से चली आ रही है। श्री प्रभु ने आगे पूछा- क्या मैं तुम्हें मन्त्र दूँ, जप करोगे ? डॉक्टर ने कहा- क्यों नहीं महाराज; आप जो कुछ कहेंगे वही करूँगा। आपने डॉक्टर को मन्त्र दिया और आज्ञा दी- "जाओ शिव मन्दिर में बैठकर इस मन्त्र का जप करो।" उसी दिन जप करते हुए डॉक्टर ने देखा कि शिवलिंग धरती के नीचे डूब रहा है और उसकी जगह स्वयं भगवान शिव

भी बिगड़ न जाय। किसी के पास जाने से वह डरता कि मुझ अछूत से कोई ग़लती न हो जाय; मैं यहाँ से कही निकाल न दिया जाऊँ। इस प्रकार वर्षों से उसका यह निःशुल्क सेवा क्रम चल रहा था। जगत्पावन प्रभु उसके मन की सारी बातें जानते थे। क्योंकि प्रभु तो भाव भक्ति ही देखते हैं। भक्त दामाजी पंत के लिए तो महार तक बन गए और राजाजी के यहाँ जाकर पंत का क़र्ज़ा चुकाया। किसी भक्त के यहाँ झाडू लगायी, किसी के यहाँ चक्की पीसी और उन भक्तों के प्रेम में बावले होकर दीन सुदामा के चरणों को आँसुओं से धोकर चरणामृत पान किया। उनके प्रेम, करुणा और दया का कैसे वर्णन किया जाय। आज बाबू मेहतर के भाग्योदय का शुभ दिन है। देवता भविष्य की बातें जानने में समर्थ होते हैं। सब देव व फ़रिश्ते इस पवित्र दिन, हाथों में सुगन्धित पुष्प लेकर बाबू मेहतर के अभिषेक के लिए आकाश में खड़े प्रतीक्षा कर रहे हैं। वह जान गए हैं कि, आज अविनाशी परिपूर्ण श्री समर्थ सद्गुरु की कृपा दृष्टि अपने भक्त बाबू पर होगी, आज जैसा मंगलमय दिन सौभाग्य से मिल रहा है। देवताओं के काल की अवधि होती है किन्तु गुरु कृपा की कोई अवधि नहीं होती अतः बन्दे को भी काल अवधि में नहीं बाँधा जा सकता है। इस प्रकार वह भी शाश्वत हो जाता है। बहुत सारे भक्त साधना करने वाले आश्रम की दालान में विभिन्न प्रकार के आसान लगाकर जप कर रहे थे, अपने को आपके समीप समझने वाले कोई सिद्धासन से, कोई पद्मासन से बैठे थे। तभी अचानक अन्दर से आपका आगमन हुआ। उस समय बाबू मेहतर भी दूर अपनी जगह बैठा हुआ नीची नज़र किए आपके श्री चरणों को देख रहा था। एकाएक आपने गम्भीर और ऊँची आवाज़ में कहा- देखों यहाँ कितने ढोंगी लोग बैठे हैं। कोई सिद्धि चाहता है, कोई विषय भोगने की आशा लेकर, यहाँ भाँति भाँति के नाटक कर रहा है। जितने लोग भी यहाँ बैठे हैं। उनमें सर्व श्रेष्ठ वह बाबू मेहतर है जो निःस्वार्थ सेवाकार्य करके वास्तव में

भगवान् की उपासना कर रहा है। उसने अपने सरल और पवित्र भावमयी निःस्वार्थ सेवा से श्री नारायण को प्रसन्न कर लिया है। यह उद्घोष करके आप अन्दर पधार गए। बड़े-बड़े पण्डित और साधुओं के चेहरे शर्म से झुक गए। हे दतिया के सच्चे सन्त! तुमको तो वे ही प्यारे हैं, जो समस्त जीवों से निःस्वार्थ प्रेम करते हैं, किसी से द्वेष नहीं करते, जो अपने पराए का भेद छोड़ चुके हैं। कथनी और करनी में अन्तर नहीं करते। सब में एक तुमको ही देखते हैं। हे कबीर देव ! यहीं तक आपकी कृपा के बादल नहीं बरसे बल्कि बाबू हरिजन की पुत्री के शुभविवाह के अवसर पर सम्पूर्ण दतिया वासी यह देख और सुनकर प्रसन्नता से झूम उठे कि आपकी आज्ञा से बड़े-बड़े विद्वान पण्डित और शास्त्रियों ने विवाह में सम्मिलित होकर उसके पारिवारिक सदस्यों की भाँति कार्य किया। प्रभु ने पीठ से विवाह के लिए कुछ रूपये भी दिलवाए। दूध बेचने वाला ग़रीब बादामसिंह बहुत ही भोर (सुबह) चुपचाप आकर मन्दिर और मन्दिर की दालान साफ़ करके चला जाता था। अधिकांश लोगों को तो यह मालूम ही नहीं था कि दालान साफ़ करने वाला कौन है। एक दिन वह कुछ देर से आया, उस वक़्त पूजा पाठ करने वाले कई लोग बरामदे में आसन लगाकर बैठे थे। भोले बादामसिंह को मालूम नहीं था कि इस समय प्रभु पास के कमरे में विराजे हुए हैं। बादामसिंह सफ़ाई कर रहा था, और अपनी अज्ञानता को कोसते हुए धीरे स्वर वहाँ बैठे हुए साधकों से कह रहा था- ''आप सब तो बड़े भाग्यवान् हैं, श्री प्रभु कृपा के पात्र है, आप सब धन्य हैं, आप सभी को तो किनारा मिल गया है, लेकिन मैं कितना मूर्ख और भाग्यहीन हूँ, मुझे न पूजा आती है, न मन्त्र आता है, न पढ़ना आता है। पता नहीं मेरा क्या होगा?'' वह इतना ही बोल पाया था कि एक तेज़ व गम्भीर आवाज़ पास के कमरे से आयी और हे शिष्यजनकल्पवृक्ष ! आपने कहा ''तेरा काम सबसे पहले होगा''। इसके बाद श्री प्रभु ने बादामसिंह को बुलाया और

चलोगे''? वकील वर्मा ने कहा- ''मैं साधुओं से दूर रहता हूँ,'' दुर्गाप्रसाद जी बोले क्यूं ? वकील ने उत्तर दिया- साधु कहेंगे सच बोलो, धर्म पर चलो। ये दोनों मुझे नहीं करना। दुर्गाप्रसाद जी ने जाकर ये बात महाराज जी को बताई। आपने कहा- ''लाओ वही आदमी हमें चाहिए''। दुर्गा प्रसाद जी ने कहा- ''लेकिन महाराज कैसे लाएँ, वह तो आते ही नहीं हैं। श्री प्रभु ने कहा- ''वे आएँगे''। एक दिन वकील रामकृष्ण गर्मियों में रात को ४ बजे छत पर लेटे थे, आँखें खुली, आसमान की ओर देखा कि- कोई महात्मा हाथ में लाठी लिए हुए आसमान से चले आ रहे हैं। जहाँ चरण पड़ते हैं वहाँ तारे चरण चिह्न बना रहे हैं। इस तरह नौ चरण-चिह्न उन्होंने आसमान में देखे। थोड़ी देर में ही, वकील वर्मा की दाएँ हाथ की कलाई उन महात्मा ने पकड़ी और करवट लिवाकर कान में मन्त्र कहा। वर्मा जी ने उठकर उस मन्त्र का जप शुरू कर दिया। इसके बाद एक दिन एक मुक़दमें के सम्बन्ध में वर्मा जी दतिया आए। आश्रम के ठीक सामने पास ही एक छोटी पहाड़ी पर कचहरी बनी हुई थी। वे कचहरी की सीढ़ियों पर आँखें बंद करके बैठ गए। उन्होंने देखा कि भगवान् राम और सीता आश्रम की ओर जा रहे हैं। वर्मा जी पीछे-पीछे चले गए तो आवाज़ आयी दर्शन नहीं होंगे, पट बंद हैं। यह आवाज़ सुनकर उन्होंने आँखें खोली और दुर्गाप्रसाद जी के साथ आश्रम में आए, उन्होंने देखा एक स्थूल काय साधु तख़्त पर बैठे हैं। श्री प्रभु ने दुर्गा प्रसाद से पूछा- ये कौन हैं ? दुर्गा प्रसाद जी ने कहा- ये वही वकील साहब हैं जो यहाँ आना नहीं चाहते थे। उस दिन हे त्रिपुरारि ! आपने वर्मा जी को एक स्त्रोत दिया और आगामी नवरात्र में आने को कहा। नवरात्र में वकील रामकृष्ण पुनः श्री प्रभु के दर्शनों को गए, तो उन्हें आपने मन्त्र दिया और कहा- यह तो बहुत पहले मेरी शरण में आ चुके हैं। यह सुनकर उन वकील को एकाएक ज्ञान हुआ कि ये तो वो ही महापुरुष हैं जिनके चरण आकाश में जहाँ पड़ते थे, वहाँ

तारे बन जाते थे। इसके बाद श्री प्रभु ने ज्योतिष्मती नाम की एक औषधि कृपा प्रसाद के रूप में

तारे बन जाते थे। इसके बाद श्री प्रभु ने ज्योतिष्मती नाम की एक औषधि कृपा प्रसाद के रूप में प्रदान की। यह औषधि नेत्र रोगों की रामबाण दवा है, लेकिन वकील समझ चुके थे कि औषधि तो एक बहाना मात्र है, सत्य तो आपकी कृपा ही है। सच्चा सन्त किसी भी कार्य या चमत्कार का श्रेय अपने ऊपर नहीं लेता। जब तक दाता की दया नहीं होती रोगों के विचित्र रूप नहीं जाते। कुछ दिनों बाद वर्मा ने स्वप्न में देखा कि, ''शिकागो नेत्र- चिकित्सालय'' में बेड पर वे लेटे हैं और डॉ. ने उनकी आँख का ऑपरेशन किया। उसी दिन सुबह वर्मा श्री प्रभु को प्रणाम करने गए तो प्रणाम करने में उनका चश्मा गिर गया और उन्होंने अनुभव किया कि बगैर चश्मे के भी अब अच्छा दिख रहा है। उन्होंने देखा श्री दीनबन्धु दाता मुस्करा रहे हैं। उसी दिन से वकील ने चश्मा छोड़ दिया। सूरदास के श्याम ने लौकिक प्रकाश ही आँख में नहीं डाला बल्कि उसी रात्रि में सोते समय अलौकिक प्रखर प्रकाश का दान भी दे डाला। ग़रीब नवाज़ का काम तो झोलियाँ भरना है। सुबह जब वे श्री प्रभु के दर्शन करने गए तभी देखा मन्दिर की मूर्ति में से जगदम्बा विमान पर बैठ कर निकली। बाहर आते ही शंख, भेरी, घण्टे आदि बजाते हुए देवता गण जगदम्बा की स्तुति करने लगे। भीतर ही भीतर हुक्म सुना कि, जाकर पकड़ लो, यही चरण हैं। वकील रामकृष्ण ने अन्दर ही अन्दर कहा- मुझसे नहीं बनेगा, तुम ही पकड़ा दो। एक हाथ उठा और रामकृष्ण का हाथ पकड़कर उन चरणों को पकड़ा दिया। फिर स्वर्ण सिंहासन वाला विमान मन्दिर में वापस चला गया। हे सच्चिदानंद विश्वबाहु स्वामी ? आपकी महिमा का बखान कहाँ तक किया जाए ? आप आँखों का अंजन देकर ही नहीं रुकते, आप जानते हैं कि हम लोगों में इतनी योग्यता नहीं कि, उसको ठीक प्रकार से लगा भी सकें, डाल सकें, इसलिए जैसे माता अपने अबोध शिशु के मुँह में स्वयं ही स्तन को प्रवेश करा देती है, उसी प्रकार आप स्वयं ही अंजन देकर आँखों में डाल

नहीं होने से दोनों अज्ञानता वश एक-दूसरे का हाथ पकड़े गड्ढे में गिरते हैं। सद्गुरु की प्राप्ति बहुत कठिन हैं। इसी तरह शिष्य भी बड़ी कठिनाई से ही मिलता है। सच्चा शिष्य बनना तलवार की धार पर चलने से भी कठिन है। भक्त वत्सल श्री प्रभु ने आगे बतलाया- एक शिष्य गुरु के आश्रम पहुँचा, और गुरु से ब्रह्म विद्या सिखाने हेतु निवेदन किया। गुरु ने उसे आश्रम में रख लिया और बहुत समय तक उससे शारीरिक परिश्रम के कार्य कराते रहे। एक बार आधी रात के समय शिष्य को जगाया, और उससे कहा- जंगल में जाकर कुएँ से पानी लाओ। शिष्य घड़ा लेकर कुएँ पर गया, वहाँ उसके मन में यह विचार आया कि अब यहाँ से भाग जाना चाहिए, क्योंकि गुरु विद्या का उपदेश तो करते नहीं केवल सेवा कराते रहते हैं। वह घड़े को कुएँ पर छोड़कर चल दिया। तभी घड़ें में से आवाज आयी- ''तुम तो ब्रह्म विद्या सीखने आए थे, और इतने में ही विचलित हो गए। मेरी आत्मकथा को तो सुनो- मैं मिट्टी का घड़ा हूँ। घड़े की स्थिति में आने के पूर्व मुझे क्या-क्या सहना पड़ा, मेरे ऊपर गेंती फावड़े चलाए गए, फिर गधे की पीठ पर बिठाकर मुझे कुम्हार अपने घर ले गया। बाद में मुझे अपने पैरों से रौंदा, चक्के पर चढ़ाया, घुमाया, ठोका-पीटी की और बाद में मुझे आग पर तपाया गया। इन परीक्षाओं से निकलने के बाद आज मैं इस स्वरूप में हूँ। आज मेरा जन्म सफल होने जा रहा है। आज हमारे जल को गुरुदेव पिएँगे। और तू इतनी जल्दी हताश हो गया''। घड़े की बात शिष्य को चुभ गई और वह लौट पड़ा बाद में गुरु कृपा से उसे ब्रह्मविद्या की प्राप्ति हो गयी। इसलिए शिष्य की योग्यता देखकर ही उसको उपदेश दिया जाता है। यहाँ भी आश्रम में लाखों लोग आए। कोई लड़का माँगता है, कोई धन माँगता है, कोई किसी से परेशान है, किन्तु जिस बात की यह दुकान है। उसका एक भी ग्राहक आज तक मेरे पास नहीं आया। राम की सेवा में बन्दर अनेक थे, उन्होंने अँगुठी केवल हनुमान को ही दी थी। हरेक

को हर चीज़ नहीं दी जा सकती। श्री गुरु महाराज ने घड़े का दृष्टान्त सुनाकर हम सब भक्तों का

को हर चीज़ नहीं दी जा सकती। श्री गुरु महाराज ने घड़े का दृष्टान्त सुनाकर हम सब भक्तों का अनुपम कल्याण किया। इस मार्ग पर चलने वाले भक्तों को किस प्रकार ब्रह्मविद्या प्राप्ति हेतु अपना जीवन दर्शन रखना चाहिए, यह सतपथ दिखाने में यह 'श्री स्वामी कथासार' रूप गुरु प्रसाद ही समर्थ है। इसके सुनने और पाठ करने से अभ्युदय की प्राप्ति होती है और नित्य ग्यारह पाठ करने से सम्पूर्ण बिगड़े कार्य सुधरकर श्री गुरु चरणों में अतुल्य निष्ठा का उदय होता है।

श्री पीताम्बराजी को अर्पण करें।

।। इति षष्टम् अध्याय समाप्त।।

।। श्री गणेशाय नमः ।।

श्री स्वामी कथासार

सप्तम् अध्याय

हे सहस्रबाहु! हे कृष्ण! हे गोविन्द! जिस प्रकार धनिक अधिक धन प्राप्ति की इच्छा से अपने जमा किए हुए धन को छोड़कर परदेश गमन करता है, वैसे ही मूर्ख लोग स्वप्न-तुल्य अनित्य स्वर्गादि परलोक में अनेक प्रकार के सुखों की कल्पना करके, उसके लिए धर्मादि चारों श्रेष्ठ पुरुषार्थों को भू लोक में गवाँ देते हैं। यज्ञ द्वारा देवता की उपासना कर स्वर्ग जाएँगे और वहाँ ख़ूब विषय-भोग करेंगे। किन्तु यह सब मिथ्या है। जो जन मृत्यु से ग्रस्त हैं उन्हें पुनर्जन्म से लाभ ही क्या होगा ? हे ब्रह्मवेत्ता ! आप मोक्ष प्रदाता हैं। हे कैवल्यदाता नारायण ! आपके भक्त की महिमा शुभ कर्म द्वारा बढ़ती नहीं है, और अशुभ कर्म द्वारा घटती भी नहीं है। भक्त भूत, भविष्य, वर्तमान काल के सकल पापों का अतिक्रमण करता हैं। पाप उसको संताप प्रदान नहीं करता। वह सर्व पापों को भस्म कर देता है। जो गुरु शरण में आया, जिसने आपकी चरण-धुलि को अपने माथे से लगाया, उसने ही सब कुछ पाया। हे दीनानाथ ! जो शरण में आता है, उसके सद्असद् कर्म आपके दर्शन मात्र से ही भस्म हो जाते हैं। इसलिए आपके पास आकर व्यक्ति अभयदान प्राप्त करके धन्य हो जाता है। यदि आप उसके कर्म देखने लगें तो वह अनन्त काल में, कभी भी आपकी कृपा प्राप्त कर सके इसमें सन्देह है, किन्तु आप शरण में आए हुए व्यक्ति को शीघ्र ही अभयदान दे देते हैं। धौलपुर में जब महाराज जी पधारे उस समय प्रकाश मोहन जुत्सी बालक थे, वे प्रधानाचार्य बृजमोहन जुत्सी के पुत्र थे। इनके पिता

दे देते हैं। धौलपुर में जब महाराज जी पधारे उस समय प्रकाश मोहन जुत्सी बालक थे, वे प्रधानाचार्य बृजमोहन जुत्सी के पुत्र थे। इनके पिता अपनी मृत्यु के पूर्व आपके पास दतिया आये तथा पुकार की- हे विश्वात्मा ! हे नाथों के नाथ ! मैं कुछ माँगता हूँ। आप बड़े उदार हैं, मुझे कृपा करके दीजिए। मेरी मृत्यु के १५ दिन बाकी हैं। मेरे बाद मेरे चारों पुत्र अनाथ हो जाएँगे, आप अनाथों के नाथ हैं। उन्हें अपनी शरण में ले लें, जिससे मैं सुख से मर सकूँगा। दीनबन्धु श्री महाराज अपने शिष्य की आर्त पुकार सुनकर गम्भीर होकर विचार में पड़ गए। उनसे अपने भक्त का दु:ख देखा नहीं जाता था। अपने प्रिय शिष्य को चरणों में लिपटा कर और सिर पर हाथ फेरते हुए तरह-तरह से सान्त्वना देकर कहा- ''अभी तुमको भू लोक को छोड़कर मणिपुरधाम जाने में पन्द्रह दिन नही, एक माह का समय है, तथा बच्चों की चिन्ता तुम मत करो। जब तुमने इन्हें मुझे सौंप ही दिया है तो अब ये मेरे हुए।'' पिता की मृत्यु के बाद प्रकाश जी दशहरे के अवकाश में आगरा से अपने बड़े भाई के पास दतिया आए। अपने ग़रीब अध्यापक भाई पर आए आर्थिक बोझ को समझकर इन्हें आत्महत्या करने का निश्चित विचार आया। दशहरे के दिन संध्या समय प्रकाश मोहन आश्रम में महाराज जी के दर्शन के लिए आए। उस समय आश्रम में आरती हो रही थी, आरती पूर्ण हो गयी, प्रसाद बाँट दिया गया। श्री प्रभु ने भी प्रसाद लिया और अचानक प्रकाश जी का हाथ पकड़कर एक तरफ़ ले जाकर बोले ''प्रकाश जी, मृत्यु होने के बाद ज़रूरी नहीं कि मरने वाले को मोक्ष मिले और जिसकी अकाल मृत्यु होती है, उसको तो कभी मोक्ष मिलता ही नहीं है। तुम्हारा जीवन भविष्य में बहुत ही ख़ुशियों से भरा होगा। उस समय बड़े भाई के उपकारों का बदला चुका देना। आत्मकल्याण के लिए प्रयत्न करने चाहिए। प्रकाश जी को लगा मानो किसी ने एक क्षण में ही आत्महत्या के विचार को तेज़ धार से काट दिया हो। श्री प्रभु के वचन सुनकर उनका

हृदय परिवर्तन हो गया। आख़िर, सबके मालिक तो श्री स्वामी महाराज हैं। हे निष्काम राखनहार! जिसकी जैसी समझ है, जिसमें जैसी भक्ति है, जिसमें जैसा ज्ञान है और कर्मयोग्यता है, पहले उसको उचित सन्मार्ग पर लाना फिर उसको नवाज़ने वाला तू ही है। हे सर्वात्मा ! यह भी तू ही है और वह भी तू ही है। देने वाला भी तू ही है और लेने वाला भी तू ही है। जो कुछ है या नहीं है अथवा इन दोनों के मध्य है सो भी तू ही है। जो है सो है। प्रकाश जी पढ़ाई समाप्त कर सरकारी नौकरी में देहली चले गए और उच्च राजपत्रित अधिकारी के पद पर रहकर सेवा निवृत्त हुए। वहाँ उन्हें मधुमेह (डायबिटीज) रोग हो गया। वे मरणासन्न हो गए। इनके मन मे विचार आया कि किसी प्रकार भी एक बार दतिया पहुँचकर श्री महाराज के दर्शन हो जाएँ, बाद में शरीर छूटे। हे कृपा सागर ! आप शरणागतो का दुःख दूर करने वाले हैं। एक बार भी आपका हृदय में ध्यान करने से भक्त स्वयं तर जाता है तथा दूसरों को तारने वाला बन जाता है। प्रकाश जी चलने और खड़े होने में भी असमर्थ थे इसलिए बीमारी और अन्तिम इच्छा श्री स्वामीजी का आशीर्वाद, लेने उन्होंने अपने पुत्र को आपके पास भेजा। जिस दिन पुत्र दतिया से दिल्ली को वापस रवाना हुआ उसी दिन से वे स्वस्थ होने लगे और कुछ ठीक होते ही दतिया पहुँच गये। आश्रम पहुँचकर देखा- महाराज जी बगिया में बैठे हैं। जैसे ही प्रणाम किया कि बड़े ज़ोर के थप्पड़ पड़े। काफी मार खाने के बाद ये ज़मीन पर सिर झुकाकर श्री चरणों के पास बैठ गए। इन्होंने देखा- करुणासिंधु के मुख का कठोर भाव सौम्यता में बदल गया है। और इनके कानों ने मीठे-मधुर स्वर सुने- प्रकाश जी आपकी बीमारी चली गई, कहिए साहब- कैसे आना हुआ ? प्रकाश जी क्या कहते ? "जो बिक गया आपके हाथों वो क्या कहे। आका की जो मरज़ी, वहीं ख़ुशी गुलाम की" ।। श्री प्रकाशमोहन जुत्सी अपना निवेदन करने के पश्चात् श्री स्वामी जी महाराज के चरणों

में बैठ गए। मास्टर रामेश्वरलाल, वनमाली, विनय आदि कुछ सेवक भी वहाँ अपने प्राणप्यारे प्रभू

कर ... श्री ब्रजमोहन गुप्ता अपना निवेदन करने के पश्चात् श्री स्वामी जी महाराज के चरणों

में बैठ गए। मास्टर रामेश्वरलाल, वनमाली, विनय आदि कुछ सेवक भी वहाँ अपने प्राणप्यारे प्रभू की सेवा की लालसा से बैठे थे। उसी समय राजकीय अभियन्त्रण सेवा में कार्यरत बदनसिंह नामक एक व्यक्ति ने अपने ही विभाग के एक अन्य सहयोगी अधिकारी के साथ अनुमति लेकर दर्शनलाभ के लिए प्रवेश किया। ये दोनों व्यक्ति भी स्वामीजी के ही शिष्य थे। वात्सल्यवश श्री गुरुदेव बदनसिंह को 'ठाकुर' कहकर बुलाते थे और कहते थे कि ये हमारे आश्रम के गणेश हैं, लम्बोदर हैं। बदनसिंह अपने आचरण को प्रभू के बताए अनुसार बनाने और सुधारने का प्रयत्न कर रहे थे। प्रभू का आदेश है कि कथनी और करनी में अन्तर नहीं होना चाहिए और वे विशुद्ध होने चाहिए। बदनसिंह के अधिकांश आचरण और कर्म एक हो गए थे। अन्दर बगिया में प्रवेश कर प्रभू के ठाकुर शिष्य ने पहले श्री चरणों में शीर्ष रखकर वाम पाद के पीयूष वर्षक नख को नेत्रों और वाणी रसना से स्पर्श कर अपने को धन्य बनाते हुए दर्शन करने के नियमानुसार पवित्र चरणारविन्दों में पुष्प, फल प्रसाद और ग्यारह मुद्राएँ भेंट स्वरूप अर्पित कीं। श्री समर्थ गुरुदेव ने विनय नामक सेवक से कहा- यह सब उठाकर रखो और प्रसाद मेरे हाथ में दो। फिर वे दक्षिणा स्वीकार कर स्वंय प्रसाद विरतण करने लगे। तदुपरान्त बदनसिंह के अन्य गुरुबन्धु ने भी साष्टांङ्ग नमन कर श्रीचरणों में पुष्प, फल, प्रसाद और ग्यारह मुद्राएँ अर्पण किए। श्रीमहाराज उनकी ओर देखकर विचलितभावपूर्वक अचानक कहने लगे- लोग न जाने क्या समझते हैं, ख़ूब रिश्वत लेते हैं और उनमें से कुछ पैसे हमको देकर ये सोचते हैं कि वे पाप से मुक्त हो जाएँगे। क्या समय आ गया है कि शिष्य बनने का दम भरने वाले अपने आचरण में कुछ और ही व्यवहार करते हैं- गुरु तक को नहीं छोड़ते। कथनी और करनी में देखो, कितना अन्तर आ गया है। आज मनुष्य कितने पतन की ओर जा रहा है- क्या वह इसका थोड़ा भी चिन्तन नहीं करता है? पाप और अन्धकार के गहरे

गर्त्त में खड़ा हुआ दूसरों पर व्यङ्ग करता है- ''सौ-सौ चूहे खाय बिल्ली हज को चली''। अरे भोले लोगों तनिक यह तो विचार करो कि वह तो हज को चल भी दी है, लेकिन तुम तो अभी भी वहीं खड़े-खड़े चूहे ही खा रहे हो। अब तो तुम भी चल दो। यह कहते हुए उस अर्पित वस्तु को उठाने का उन्होंने किसी को आदेश नही दिया। तब वह शिष्य प्रभू से विनती करने लगा कि हे पापमोचन ! जैसा भी हूँ, मैं आपका ही हूँ। मेरी श्रद्धा को आप स्वीकार करें। यह सब आपकी ही कृपा से प्राप्त हुआ है। हे माई-बाप ! आपकी दृष्टि से कुछ भी दूर नहीं है। आप सभी भक्तों को आचरण और वाणी के संयम की प्रेरणा देने वाले हैं। आप अपने शिष्यों पर कभी क्रोध तो करते ही नहीं, आपके क्रोध का प्रदर्शन तो मात्र उसके सुधार के ही लिए होता हैं अन्यथा आपके क्रोध को सहन करने की शक्ति किसमें है? हे परमहंस ! दो शिष्यों की प्रत्यक्षरूप से समान भेटों में भेद दिखाकर आपने नीरक्षीर विवेक, शुद्ध आचरण की सीख देकर उनका कल्याण किया। श्री महाराज के शिष्य डॉ. योगेश मिश्र का आपकी करुणामयी कृपा से तरुणावस्था में ही सम्पूर्ण जीवन परिवर्तन हो गया था। इसके बाद इन्होंने मरीज़ों से फीस लेना बन्द कर दिया। ग़रीबों की मदद अपने पास से करने लगे। ज़रूरतमंदों को स्वयं का भोजन दे देते थे। यह सब होना कोई आश्चर्य की बात नहीं, क्योंकि आपका भक्त यह जान जाता है कि वह स्वयं कुछ नही कर रहा है, वह अपने में कुछ भी नहीं है। उसके श्यामसुन्दर, उसके प्राणों के प्राण श्री राघवेन्द्र ही सब कुछ कर रहे हैं। भक्त तो आपकी लीला देखने में ही मस्त रहता है। ऐसा वह भक्त दतिया से बहुत दूर जयपुर में घर के एकान्त कोने में बैठा यौगिक क्रियाएँ कर रहा था। सहसा उनकी आँखों में तन्द्रा छाने लगी देखते ही देखते कमरे के सामने की दीवार और छत अदृश्य हो गयी एवं तारों से झिलमिलाता हुआ आकाश दृष्टिगोचर होने लगा। उसी समय डॉ. मिश्र ने साश्चर्य देखा कि पूर्व

दिशा की ओर से अति तीव्र गति पूर्वक एक स्वर्णमय त्रिशूल आ रहा है। त्रिशूल आकर बड़े वेग से उनके सामने ज़मीन में धँस गया और नीचे से झिलमिलाते हुए पिघलने लगा और आपके रूप

दिशा की ओर से अति तीव्र गति पूर्वक एक स्वर्णमय त्रिशूल आ रहा है। त्रिशूल आकर बड़े वेग से उनके सामने ज़मीन में धँस गया और नीचे से झिलमिलाते हुए पिघलने लगा और आपके रूप में परिवर्तित हो गया, आप सामने खड़े होकर कह रहे हैं- "ग़लत तरीक़े से योगिक क्रियाएँ करने से हानि हो सकती है। तुम दतिया आओ और पहले क्रियाएँ सीखो।" इसके उपरान्त श्री प्रभु ने अपना उत्तरीय वस्त्र ढीला करके नीचे किया एवं उड्यानबंध का दिग्दर्शन कराया और कहा कि यह इस प्रकार होता है। फिर आपका शरीर विपरीत क्रम से त्रिशूल का रूप धारण कर लिया और वापस उसी मार्ग से ओझल हो गया। अब डॉक्टर योगेश को होश आया और बार बार विचार करने लगे कि क्या यह सच था ? स्वप्न था या भ्रम था ? कुछ समझ में नहीं आया। कुछ ही दिनों पश्चात् डॉक्टर दतिया पहुँचे। अपने प्राणधन को प्रणाम करके खड़े हुए। हे योगेन्द्र, आप डाक्टर से उनके आने पर यह हमेशा पूछा करते थे- कहो डाक्टर ठीक हो ? आ गए ? परन्तु इस बार केवल इतना कहा- "जाओ कुएँ पर स्नान करके आओ, हम तुम्हें उड्यानबंध सिखा दें।" यह सुनते ही डाक्टर साहब के पैर पत्थर के हो गए। सोचने लगे कि कहाँ मैं अधम जो शिव स्वरूप गुरु के साक्षात् दर्शन और निर्देश प्राप्त करने के पश्चात् भी उसे भ्रम की संज्ञा दे रहा था और कहाँ पतित पावन त्रिकाल वंदित जो मेरी ग़लतियों और मूर्खता को जानकर भी कृपा करने को आतुर हैं। उस हाथी की क्या योग्यता थी जिसके एक बार पुकार करते ही आप अपने वाहन गरुड़ को छोड़कर स्वयं सुदर्शन चक्र लिए नंगे पैर दौड़े आए। दो छोर हैं- पूज्यपाद गुरुदेव-आकाश, और बेचारा डाक्टर-पाताल में अणु की भाँति है। सच बात तो यह है कि जिस पर आप प्रसन्न हो गए- वही सच्चा पुण्यात्मा है। और वही पवित्र है। सन्मार्ग के चाहने वाले अपने भक्तों की ग़लती आपको सहन नहीं होती उसे ठीक करने के लिए स्वयं कष्ट उठाकर प्रकट होते हैं। मेजर बी.एन.दुस्सु को किसी ने खेचरी

मुद्रा के विषय में बताया कि जीभ को अन्दर की तरफ़ उलटकर अधिक से अधिक गहराई में ले जाओ, वहाँ ऊपर की ओर एक कोमल स्थान है, उसे स्पर्श करो, वह अमृत स्थान है। इस प्रकार अभ्यास करो और अमृत पान करो। मेजर को प्रयास करने पर भी इस क्रिया में सफलता नहीं मिल रही थी। इन्होंने सोचा यदि जीभ के नीचे का जो डोरा है उसे कटवा दिया जाय तो शायद सफलता मिल जाए और वे डाक्टर से जीभ का तलुवा कटवाने के लिए तैयार भी हो गए। तभी सहसा उन्हें महसूस हुआ कि श्री महाराज दतिया बुला रहे हैं। ऐसा आभास होते ही वे जीभ कटाए बिना शीघ्र दतिया पहुँच गए। हे माधव, आपने कहा- ''आ गए''। ''हाँ महाराज'' उत्तर मिला। आपने फिर पूछा- ''जीभ कटवा ली।'' यह सुनकर समझ गए कि यहाँ आने की ज़बरदस्त प्रेरणा क्यों हुई थी। अपने दास को दुःख से बचाने के लिए इतनी जल्दी दौड़े आते हैं कि अपने पीताम्बर तक को नहीं संभालते इस बात के साक्षी पुराण, वेद, शास्त्र हैं। श्री प्रभु ने एक चपत उनके सिर पर मारते हुए मृदु स्वर में कहा- भला, कहीं जीभ कटाकर कोई योगी होता है ? सब धीरे-धीरे अपने आप हो जाता है। इस बार माता ने तुम्हारी रक्षा की है। ग़लत लोगों की बातों में आकर बड़ा अनर्थ हो जाता है। ऐसे ग़लत लोग यहाँ भी बहुत आते रहते हैं। उनकी बातों में आकर भ्रम में नहीं पड़ना चाहिए। कल ही एक साधु मेरे पास आया और बोला- महाराज भगवती जगदम्बा ने मुझे स्वप्न में दर्शन देकर कहा है कि मैं आपके पास आऊँ। मैं आ गया हूँ, कहिए क्या आदेश है। यह सुनकर हमने उत्तर दिया- ''हमें भी कुछ दिन पूर्व भगवती जगदम्बा ने स्वप्न में कहा था कि- एक साधु तुम्हारे पास आकर उपरोक्त बातें करेगा, तब तुम उसकी बातों पर विश्वास मत करना और उसे तुरन्त आश्रम से बाहर निकाल देना।'' आपके समान कुटिलता का नाश करने वाला कोई नहीं है। सच्चा संत सत्यतत्त्व की साकार मूर्ति होता है। कभी भी, झूठ-पाखण्ड जैसी बातों का प्रवेश नहीं

होता। सच बोलने वाले व्यक्ति भगवान् को प्यारे होते हैं। भगवान का परम रहस्यमय तत्त्व जानना

होता। सच बोलने वाले व्यक्ति भगवान् को प्यारे होते हैं। भगवान् का परम रहस्यमय तत्त्व जानना ही लक्ष्य है। ''साँच बराबर तप नहीं, झूठ बराबर पाप''। दाँतों के डाक्टर श्री लाल गोपाल को किस प्रकार हँसते-हँसते चारों पदार्थ दे दिए। आपके प्रसन्न होने पर धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष प्राप्त होने बहुत सहज हैं। दोपहर के भोजन के समय बहुत सारे भक्त आश्रम में बैठे रहते थे कि- शायद एक टुकड़ा प्रसाद का उनकी झोली में भी आ जाय। हे जनार्दन केशव ! स्वयं आप को भी अकेले भोजन करना कभी भी नहीं रुचा। किसी सद्गृहस्थ के यहाँ से आयी खाद्य सामग्री थोड़ी-थोड़ी अपने सेवकों को अपने पास बैठाकर खिलाए बिना आपको भोजन करना कभी नहीं भाया। चाहे किसी भक्त को दो चावल के दाने या रोटी का छोटा टुकड़ा ही हिस्से में क्यों न आए। एक दिन श्री लालगोपाल का भी जीवन कृतकृत्य हुआ। वे आपके भोजन के समय उपस्थित रहते थे, लेकिन आज कुछ बात ही दूसरी थी। श्री प्रभु ने अपने सेवक मोती मास्टर को आज्ञा दी कि इनको एक रोटी दो। सभी भक्त लोग हाथों पर ही रखकर भोजन करते थे, और आप स्वयं एक कमण्डलु में सब भोजन सामग्री एक साथ मिलाकर उसे ग्रहण करते। लाल गोपाल ने जब पहली रोटी खा ली तो सेवक को आज्ञा हुई कि ''एक रोटी और दो'' जब दूसरी भी उन्होंने खा ली तो आज्ञा हुई ''एक रोटी और दो'' जब तीसरी भी समाप्त हो गई तो आज्ञा हुई कि ''एक रोटी और दो''। इस प्रकार कुल चार रोटियाँ लाल गोपालजी ने खाई। वहाँ उपस्थित सभी सेवक व भक्तगण इस घटना को देखकर आश्चर्य चकित हो कानाफूसी करने लगे। जब चारों रोटी लाल गोपाल ने खा ली तो आपने मधुर एवं रहस्यमयी वाणी में पूछा ''क्या समझे ? लाल गोपाल जी तो बेचारे पहले से ही सोच में थे। हड़बड़ाकर जवाब दिया- ''महाराज मेरे स्वामी, मैं कुछ समझा नहीं।'' इस पर आपने उनकी ओर चार अँगुलियाँ दिखाकर रहस्यमय मुद्रा वाणी में कहा- ''धर्म-अर्थ-काम और मोक्ष। हे

भाग्य निर्माणकर्ता सर्व सुन्दर, ऐसी सहज कृपा आप ही कर सकते हैं। अंत समय उनका परम धाम निश्चित हुआ। हे ईश्वर, अनन्त शक्ति वाले ! आप हम सब पर प्रसन्न हों। आपके चरणारविन्द सदैव ध्यान करने योग्य हैं। आप मायामोह का नाश कर भक्तों को अभीष्ट की सिद्धि प्रदान करते हैं। आपके स्मरणमात्र से अज्ञान नष्ट हो जाता है। आपके स्मरण से अनर्थ नाशभाव को प्राप्त हो जाते हैं। आप ही सीतापति हैं, आप ही विष्णु हैं। सेवकों की समस्त विपत्ति और दुःख के नाशक तथा संसार सागर से पार जाने के लिये आप जहाज हैं। हे स्वामी ! आपके परम भक्त श्री नारायणसिंह को जैसी सद्गति आपने प्रदान की उसका वर्णन करने का सामर्थ्य किसमें हैं ? इसलिए आपके चरणारविदों में प्रार्थना है कि इस कथा में अल्पमति को सामर्थ्य दीजिए क्योंकि हम सब भी आपके चरण कमलों की कृपा के अभिलाषी हैं। जब आपका विराजना धौलपुर में था तथा ठाकुर नारायणसिंह द्वारा फूस की बनायी कुटिया में आप विराजे थे। नारायणसिंह जब आपके मुखारविन्द को देखता और चरणारविन्दों का पूजन कर पुष्प अर्पित करता होगा उस आनन्द का वर्णन कौन कर सकता है ? हे आदित्य ! आपने अपने भक्तों को बताया कि आपको आज तक जितने ज्ञानी भक्तों से मिलने का अवसर मिला, उनमें नारायणसिंह श्रेष्ठ जान पड़े। सन्तों ने जिसका हाथ पकड़ा है, वह तो भवसागर तर ही जाता है। नारायणसिंह के एक बहुत बड़े आपरेशन में जल्दबाज़ी में कुछ कमी रह जाने से एक घाव रह गया था, जिसमें से कभी-कभी मूत्र की बूँद आ जाती थी। हर दो घण्टे पर उन्हें पट्टी बदलनी पड़ती थी, फिर भी वे सदैव प्रसन्न रहते थे, किसी की सेवा स्वीकार नहीं करते थे कुँवर नारायणसिंह की धर्मपत्नी आपके चरण कमलों का पूजन करने के पश्चात् भाँति-भाँति के पकवान बनाकर खिलाती थीं। एक बार आपने पूछा- माता तुम बहुत उदास मालूम पड़ती हो, क्या कारण है, मुझे बताओ। इस प्रकार के प्रेम एवं

सहानुभूतिपूर्ण वचन सुनकर उनकी आँखों में आँसू आ गए और वह अंदर घर में चली गयी। बाद

सहानुभूतिपूर्ण वचन सुनकर उनकी आँखों में आँसू आ गए और वह अंदर घर में चली गयीं। बाद में आपको पता लगा कि विवाह को सोलह वर्ष हो गए हैं, लेकिन कोई सन्तान नहीं है। आपने विचार किया कि मैं तो भक्ताधीन हूँ। जो मेरी शरण में आया है उसे मैं कैसे छोड़ सकता हूँ। आपने अपने भक्त नारायणसिंह से कहा- ''चिन्ता और दुःख मत करो। अगले वर्ष तुम्हारे यहाँ पुत्र होगा उसकी नाल तख़्त के नीचे गाड़ देना।'' यथा समय नारायणसिंह को पुत्र रत्न की प्राप्ति हुई। नारायणसिंह के बच्चे की नाल प्रभु द्वारा निर्दिष्ट स्थान पर गाड़ दी गई और इस प्रकार उस जातक का जीवन सुरक्षित बना दिया गया। चार बार ऐसा ही किया जाता रहा और इस प्रकार चार पुत्र उनको प्रदान किए। यह तो इस लोक की बात है। परलोक में अंत समय उसे आपने मोक्ष भी प्रदान किया। हे भास्कर ! नारायण ! आप सुबह से चुपचाप मूढ़े पर बगिया में बैठे हैं। नारायणसिंह जब अशक्त हो गए तो डॉ. योगेश मिश्रा के हाथों एक पत्र महाराज श्री (स्वामीजी) को धौलपुर से भिजवाया जिसमें कृपाकर दर्शन देने हेतु धौलपुर आने का अनुरोध किया गया था। महाराज भी जब पं. सूर्य देव शर्मा व अन्य सेवकों के साथ उज्जैन श्री धूमावती माई के स्थान पर धन्यवाद देने हेतु पधारे थे, तब वहाँ से लौटने पर दतिया न आकर ग्वालियर की ओर जाने का संकेत दिया। साथ में बैठे किसी को भी पता नहीं था कि महाराज जी को कहाँ जाना है। ग्वालियर पहुँचने पर महाराज श्री ने कहा कि भाई धौलपुर नारायणसिंह के यहाँ चलना है उनका सन्देश आया था। कृपालु महाराज श्री जब नारायणसिंह के घर धौलपुर पहुँचे तो कुछ ही पलों में धौलपुरवासियों को समाचार मिल गया और नारायणसिंह के घर पर शिष्यों की भीड़ दर्शनों को उमड़ पड़ी। महाराज जी ने सबको दर्शन दिए और कहा कि मैं विशेष काम से आया हूँ आप लोग जाओ। एकरात महाराज जी नारायणसिंह के पास रहे और दूसरे दिन दतिया वापिस आ गए।

उसके $1\frac{1}{2}$-२ माह पश्चात् अच्छी हालत में बोलते चालते बिना किसी तकलीफ के नारायणसिंह स्वर्गवासी हो गए। ''श्री स्वामी कथासार'' के पाठ करने और सुनने से सद्बुद्धि की प्राप्ति और योग की सिद्धि होती है। श्री पीताम्बरामाई को अर्पण करता हूँ। श्री स्वामी जी महाराज सब का कल्याण करें।।

।।इति सप्तम् अध्याय समाप्त।।

।।श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

अष्टम् अध्याय

हे महामाया भवानी जगदम्बे ! देव्य अपराध क्षमा स्तोत्र में आदि शंकराचार्य जी ने लिखा है- एकबार भी जो तुम्हारा नाम उच्चारण करता है, मधुपाक के समान उसकी वाणी हो जाती है। जगत्जननी महाविद्या, महालक्ष्मी ! आपके सेवा क्रम को लेकर यदि कलह भी उपस्थित हो जाय तो भय का कारण नहीं होता। निज स्वरूपानंद में अवस्थित लक्ष्मी को अपेक्षा ही क्या है ? हे रुद्राणी माता पार्वती ! आपके अतुल प्रभाव को ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी नहीं कह सकते, क्योंकि ये सगुण देव तो आपके आधीन हैं। आप ही इस स्थूल जगत् को पंच-भौतिक रूप प्रदान करती है, तथा समस्त जगत् को स्थिर किए हुए हैं। आपसे ब्रह्म व्यक्त होकर अनेक प्रकार की लीलाओं को कर रहा है। अवतार भी शक्ति का ही होता है। एक बार नेपाल भ्रमण के दौरान हे आदिदेव ! आप एक पाठशाला में ठहरे। पाठशाला के शिक्षकों ने विनती की कि हम लोगों को परम कल्याण का मार्ग बताकर, मंत्र इत्यादि देकर कृतार्थ करें। हे तत्पुरुष ! उनका विश्वास देखने के लिए आपने कहा- यह मार्ग बहुत ही कठिन है, इसलिए हम हर व्यक्ति को उपदेश नहीं करते हैं। शास्त्र कहता है- अधिकारी देखकर साधना बतानी चाहिए। इसके उत्तर में एक शिक्षक ने कहा- हे नारायण श्री महाराज ! किसान बीज बोते समय इस बात की चिन्ता नहीं करता है कि कौन-सा बीज उगेगा और कौन-सा नहीं। आप तो कृपा करके सबको मार्ग बताएँ, जो ग्रहण कर सकेंगे वे स्वयं ही ग्रहण

कर लेंगे। श्री प्रभु ने यह घटना अपने भक्तों को सुनाई और कहा- यह बात हमें प्रिय लगी और तब से प्रभु इस ओर और उदार हो गए। एक बार आपके एक सेवक भक्त श्री रामनारायण वैद्य ने जिज्ञासा व्यक्त की, प्रभु ! आप सन्यासी हैं फिर आपका तंत्र-मन्त्र इत्यादि से क्या प्रयोजन ? श्री प्रभु ने उत्तर दिया- तुम ठीक कह रहे हो, सन्यास से इसका कोई सम्बन्ध नहीं है, किन्तु स्वयं जगत्माता की प्रेरणा एवं आज्ञा से मुझे यह कार्य करना पड़ा। यह भी ब्रह्म विद्या ही है। अस्तु भ्रमण करते हुए आप बयाना ज़िला भरतपुर पहुँचे। हे प्रभु! जहाँ आप ठहरे हुए थे वहाँ पड़ोस में ही एक सज्जन के घर चोरी हो गई। व्यथित व्यक्ति ने चोरी का पता लगाने हेतु ब्यावर कस्बे से एक ब्राह्मण को बुलाया वह तांत्रिक था। उस ब्राह्मण ने आकर मिट्टी के घड़िया में कुछ उड़द भरवाए और फिर एक काग़ज़ पर कुछ मन्त्र लिखकर उसे रात्रि के समय उन उड़दों में गाड़ दिया और कहा इन उड़दों के ऊपर प्रातः चोर का नाम लिखा मिलेगा। प्रातः काल देखा तो उड़दों के ऊपर काली स्याही में चोर का नाम लिखा था। इस घटना ने प्रभु ! आपके जीवन में भारी मोड़ ला दिया जिससे आपको मन्त्रशास्त्र में प्रवृत्त होने की प्रेरणा हुई कि यह कोई अद्भूत विद्या है इसकी खोज की जाय। भ्रमण काल में भी ऐसे ही जगन्माता की प्रेरणा से घूमते हुए पंजाब पहुंचे और एक महन्त के स्थान पर ठहरे। माता की लीला से वह महन्त जी अचानक बीमार हो गए, उन्हें ख़ून की उल्टी और तीव्र दस्त होने लगे। शिष्यों ने अधिक से अधिक धन ख़र्च करके उनका उपचार कराया परन्तु उनकी हालत बिगड़ती ही गई। ऐसा समझा जाने लगा कि उनका अन्त समय निकट है। ऐसी स्थिति में एक प्रातः शिष्य लोग उनके उपचार व्यवस्था के लिए कहीं जा रहे थे। उन्हें एक वृक्ष के नीचे एक महात्मा ध्यानस्थ दिखाई दिए, वे शिष्य वहीं बैठ गए। ज़ब महात्मा जी की समाधि भंग हुई तो शिष्य ने हाथ जोड़कर प्रार्थना की, कि- वह उनके गुरुजी को अच्छा करने की कृपा

करें। महात्मा जी ने पाँच यन्त्र बनाकर दिए और कहा- चार यंत्र तो छुआरे की गुठली निकालकर उसके अन्दर रख चारपाई के चारों पायों के पास गाड़ देना। पाँचवां यंत्र एक कोरे घड़े में रखकर एक रुपया डालकर घट को बंद कर देना, उसे सिराहने रख देना। दूसरे दिन प्रातः घट खोलना और यदि रुपया वहाँ से न मिले तो समझ लेना तुम्हारे गुरु जी अच्छे हो जाएँगे। प्रातः घट खोला गया तो रुपया गायब था गुरु जी जो मरणावस्था में थे उसी समय वह उठकर बैठ गए तथा खाने को माँगने लगे एवं शीघ्र ही स्वस्थ हो गए। हे ईशान ! इस घटना ने भी आपके जीवन में बड़ा मोड़ ला दिया। नेपाल में पशुपतिनाथ मन्दिर के पीछे श्मशान-घाट पर श्री प्रभु का सम्पर्क अघोर साधना के अभ्यास में रत एक बाल सन्त से हुआ। हे वामदेव ! आपने उसे समझाया कि उसका मार्ग कल्याण का मार्ग नहीं है, वह तो सिद्धियाँ प्राप्त करने का मार्ग है। हे योगेश्वर, महायोगी, आपने कहा ''मुक्ति योग की वस्तु है बिना भोग से पराङ्मुख (दूर) हुए नहीं प्राप्त होती है। भोग की बातों से उसका क्या सम्बन्ध ? वरन् इससे तो योग का विरोध है। सिद्धियों से ईश्वर की प्राप्ति नहीं होती है; बाधा हो सकती है। इनका उपयोग अधिकारी पुरुष ही कर सकता है।'' हे नीलकण्ठ ! वह अघोर सन्त आपसे पूर्ण सन्तुष्ट हुआ तथा उसने श्मशान के बहिर्याग साधन को त्याग दिया और सात्विकाचार वाले अन्तर्याग की साधना करने लगा। आगे चलकर वह नेपाल का एक उच्च कोटि का सन्त बना। इस प्रकार जो साधक जिस साधन प्रणाली का अधिकारी था उसे उसी मार्ग द्वारा आत्म कल्याण, शान्ति और अभीष्ट प्राप्त कराया। एक बार भ्रमण करते हुए आप मथुरा जाकर ठहरे। जब श्री प्रभु मथुरा पहुँचे, वहाँ बड़ी तेज़ ठंड थी। वहाँ के पण्डों ने देखा कि यहाँ मोटा- ताज़ा एक पण्डा और आ गया है। वे सोचने लगे कि हमारी जो आर्थिक वृत्ति है, उसमें यह हाथ बँटाएगा। इसको ज़रूर ही यहाँ से भगा देना चाहिए। उन लोगों को क्या पता कि शाहों

का शाह स्वयं कृष्ण ही द्वापर युग के बाद दुबारा से अपनी नगरी देखने आया है। पण्डों के ऐसा सोचने में भी उनकी कोई ग़लती नहीं थी, क्योंकि सर्व सुचि श्री महाराज ने कम्बल ओढ़ रखा था। शरीर से भी हष्ट-पुष्ट थे जैसे कि पण्डे लोग होते हैं। हे अवधूत ! आप उसी कम्बल को ओढ़ लेते थे, उसी को बिछा लेते थे। इस कम्बल के अलावा केवल एक लंगोटी थी जो पहन रखी थी। उनमें से एक पण्डा आया और बोला- अरे तू इतना मोटा ताज़ा हट्टा-कट्टा मुस्टंडा है, मेरे बच्चे दुबले पतले सर्दी में मर रहे हैं, तू कम्बल का क्या करेगा ? ऐसा कहकर उसने वह कम्बल छीना और भाग गया। धर्मसर्वस्व जगदीश्वर ! आपके ऐश्वर्य का वर्णन नहीं किया जा सकता। श्मशान में रहकर भभूत लगाकर, सर्पों की माला पहनकर रहने वाले भूतेश्वर के ऐश्वर्य का बखान कौन कर सकता है ? इस घटना के कुछ वर्षों बाद हे योगेश्वर ! एक बार आप पुनः निजधाम मथुरा में कृष्ण जन्मभूमि स्थान पधारे, जो विदेशियों के राज्य के समय तोड़ी जा चुकी थी और उस पर मस्जिद का निर्माण हो चुका था। जब आप उस स्थान पर पधारे तो वहाँ पर हर्ष छा गया। लोग आपस में बातचीत करने लगे - देखो लगता है कि भगवान् स्वयं आज पधारे हैं, अब इस जगह का उद्धार होने में कोई संदेह नहीं रह गया। एक अवकाश प्राप्त जज जो वहाँ निःशुल्क धार्मिक सेवा में लगा हुआ था, उसके हर्ष का पारावार नहीं रहा। सब लोग हर्षोल्लास में दौड़भाग करने लगे। वह जज बहुत लोगों के साथ आपको भक्त मण्डली सहित तहख़ाने में ले गया। वहाँ उसने सब लोगों को वह सिंहासन दिखाया, जिस पर हे सर्वज्ञ ! आप देवकीनन्दन के स्वरूप में बैठे थे। सिंह के समान स्वयं चलकर आपने सारे स्थान का निरीक्षण किया। सब लोग एक स्वर में स्तुति करने लगे- आज ये धराधाम पवित्र हो गया है। हम सब प्राणी कलियुग की भयानक आग में जल रहे हैं, हे नारायण, गोविन्द! द्वापर में आपने पापों की महाअनल को बुझाया था। उसी प्रकार हम लोगों को अब

विश्वास हो गया है कि निश्चय ही कलयुग का प्रभाव समाप्त होगा और प्रार्थना है कि प्रभु ! यहाँ

विश्वास हो गया है कि निश्चय ही कलयुग का प्रभाव समाप्त होगा और प्रार्थना है कि प्रभु ! यहाँ का जीर्णोद्वार सफल हो, और हम लोगों को शांति मिले। भक्तों की प्रार्थना सुनकर आशीर्वाद दिया कि इस निर्माण कार्य में आपकी सफलता होगी और जज साहब के कार्य की प्रशंसा की। उसी समय आपके भक्त वैद्य रामनारायणजी ने निवेदन किया कि प्रभु ! कृष्णजन्म भूमि पर मैं गरीबों के लिए एक निःशुल्क अस्पताल बनवाना चाहता हूँ। जिसके लिए ज़मीन तय हो गयी है। आपके चरणारविन्द उस ज़मीन पर चिह्न छोड़ दें तो यह काम भी सफल हो जाएगा। कृपानिधान ने वैद्यजी की प्रार्थना स्वीकार कर ली तथा कृष्णजन्म भूमि पर निःशुल्क अस्पताल का शिलान्यास किया। फिर वहाँ से दतिया वापस पधार गए। जय जय जय सद्‌गुरु समर्थ। हे प्रभु ! किसी से याचना न करना ही आपका दृढ़ निश्चय रहा है। अपने शिष्य समुदाय को प्रायः एक शेर कहा करते थे- दस्ते सवाल लाखों ही ऐबों में ऐब है। जिस दस्त में यह ऐब नहीं दस्ते गेव हैं। जिस व्यक्ति में किसी से कुछ माँगने की आदत होती है वह उसका बहुत बड़ा दोष होता है जिस व्यक्ति में यह दोष नहीं होता तो वह तो देवीय विभूति ही है। वह हाथ तो परमात्मा का ही समझो। आपके जीवन में यह चरितार्थ देख कर हम भक्तों में भी इस मार्ग पर चलने की इच्छा जागृत हुई है, कृपा कर शक्ति प्रदान करें। अपने भ्रमण काल में काशी से पदयात्रा करते हुए, अपने दो गुरु भाइयों के साथ आप चले। आप तीनों ने संकल्प किया कि वे भिक्षावृत्ति नहीं करेंगे। केवल जो बिना माँगे ही प्राप्त होगा उसे ही ग्रहण करेंगे। पैदल यात्रा का मार्ग काशी से हरिद्वार तक गंगा तट को ही निश्चित किया। किसी तरह वाराणसी से कानपुर तक तो पहुँच गए पर उन्हें कहीं भोजन नहीं मिला। एक साथी क्षुधा की तीव्रता को सहन न कर सका और वह अपने संकल्प को तोड़कर आप लोगों का साथ छोड़कर किसी अन्य स्थान को चला गया। श्री प्रभु के साथ केवल एक साथी रह गया। पन्द्रह दिन

की यात्रा के पश्चात् आपका दूसरा साथी भी इधर-उधर उदर पूर्ति के लिए ताक-झाँक करने लगा। अंतरयामी महाराज इस बात को समझ गए और उससे कहा कोई भी काम सहसा नहीं करना चाहिए। जब तुमने संकल्प किया तो पूर्ण आस्था के साथ उसको पूरा करो अन्यथा श्मशान वैराग्य लेकर घूमने से साधुओं का अपमान होता है। इससे तो अच्छा था कि घर रहकर ही अपने माता-पिता की सेवा करते। किन्तु वह साधक यह सीख न मानकर अन्य स्थान को चला गया। अब हे अनामी ! आप पदयात्री के रूप में अकेले रह गए। एक माह की यात्रा पूरी कर हरिद्वार पहुँच गए और गंगाजल पीकर ही क्षुधा को शांत करते रहे। शरीर का धर्म प्रकृति के अनुसार चलता है। इसलिए थकान और भूख की तीव्रता आपको भी अनुभव हो रही थी। जंगल में गंगा के किनारे बैठकर जल तरंगों को देखने लगे, और गंगा की स्तुति करने लगे। सहसा किसी स्त्री की आवाज़ सुनायी दी, पीछे मुड़कर देखा तो, एक बुढ़िया एक कटोरे में कुछ लिए हुए खड़ी थी। वह कहने लगी- बेटा तुम बहुत दिनों से भूखे मालूम होते हो। मैं तुम्हारे लिए खीर लायी हूँ, लो इसे खा लो। वृद्धा की बात सुनकर प्रेमाश्रु टपकाते हुए आपने खीर का कटोरा अपने हाथ में ले लिया। खीर मेवा युक्त अनुपम स्वादों वाली थी। खीर को खाते ही आपकी थकान और भूख शांत हो गयी। श्री प्रभु ने कटोरे को गंगाजल से साफ कर वापस करने के लिए पीछे की ओर देखा तो वह दयालु बुढ़िया दूर जाती दिखायी दी। आपने जोर से आवाज़ देकर उससे कटोरा वापस लेने के लिए कहा तो बुढ़िया ने कटोरे को भी अपने पास ही रखने के लिए कहा और अन्तर्ध्यान हो गयी। वह कटोर आपने पुनः गङ्गाजी में ही यह कहते हुए प्रवाहित कर दिया कि माँ ! मैं तो सन्यासी हूँ, यह कटोरा तुमने ही दिया था और अब तुझे ही अर्पित है। हे धीर पुरुषोत्तम ! आपने भक्तों और सेवकों को उपदेश दिया- सहनशक्ति को बढ़ाना चाहिए, इसीसे विवेक और सद्विचारों की स्वतंत्रता प्राप्त

होती है। पराधीन ज्ञान का विचार रखना भी एक प्रकार की गुलामी है जो आलसी मनुष्यों को झट पकड़ लेती है। इस सहन शक्ति के प्राप्त होने पर शत्रुओं की शक्ति पराभूत हो जाती है यह ऐसा शस्त्र है जो मनुष्य को सफलता के निकट पहुँचाता है। जो व्यक्ति पूर्णरूप से भगवती के आश्रित रहता है, उसके दोनों लोकों का भार माई स्वयं वहन करती है। स्वामी और भगवती एक ही तत्त्व के दो नाम हैं। अनेक भक्त, सेवक और शिष्य श्री सद्गुरु के मुखारविन्द से निःसृत होने वाली पीयूष वाणी को बड़े दत्त-चित्त होकर सुन रहे थे। आपके चरणारविन्दों में बैठ कर उन्होंने सुना और कथा समाप्त होने पर उठकर चले गए। तब वहाँ पर उपस्थित भक्त प्रकाश मोहन जुत्सी को हाथ के संकेत से अपने अत्यन्त निकट बुलाया और हे मर्यादा पुरुषोत्तम, सत्यनारायण ! आपने कहा, ''एक समय यहाँ दतिया में कई दिनों तक वे भोजन (भिक्षा) उपलब्ध न होने से निराहार अवस्था में रहे। अयाचक वृत्तिवाले महान् सन्यासी होने के कारण इस विषय में किसी को भी कोई संकेत नहीं किया, किन्तु अर्धरात्रि के लगभग एक बुढिया लाठी का सहारा लेकर चलती हुई आयी, बुढ़िया ने आपके पास आकर कहा- बाबा ! तुम भूखे मालूम देते हो इसलिए तुम्हारे लिए खीर लायी हूँ, लो खा लो ! यह कहते हुए उस बुढ़िया ने खीर से भरा एक कटोरा श्री स्वामीजी महाराज के हाथ में ठीक उसी प्रकार दिया जैसा कि पहले भी एकबार हरिद्वार के मार्ग में गंगा माई ने दिया था। कटोरा देकर वह बुढ़िया चली गई। आगे श्री महाराज कहने लगे- प्रकाश जी ! साक्षात् अन्नपूर्णा माई आयी थी जो कटोरे को भी छोड़ गई। वहीं उस तख्त जिस पर प्रभु शयन - विश्राम करते थे, के ऊपर दीवाल में बने आले में रखे हुए एक कटोरे की ओर संकेत करते हुए कहने लगे- यह वही कटोरा है। प्रभु के जीवनकाल तक वह कटोरा आश्रम पर सम्भालकर रखा रहा, परन्तु उनके महानिर्वाण के पश्चात् कटोरा भी स्वतः ही अदृश्य हो गया। सबको भोजन देने वाली तो अन्नपूर्णा

माई ही है, स्वयं उनके पति काशीराज ने भी उन्हीं से भिक्षा प्राप्त की थी। इसलिए हे सद्गुरुनाथ ! आप यही शिक्षा देते रहते हैं कि जो यह कहता या समझता है कि वह अन्य के भोजन का भी प्रबन्ध करता है तो ऐसा व्यक्ति अज्ञानी है। हे प्रभु ! आप पापी से भी पापी को सन्मार्ग पर लगाने वाले हैं और अपने भक्तों को सदैव बड़े चमत्कार पूर्ण ढंग से कुमार्ग की ओर जाने से रोकते रहते हैं। उनकी रक्षा करते हैं। एक दिन उत्तर प्रदेश के जनपद आगरा के अन्तर्गत स्थान रायभा के निवासी अभियन्ता बदनसिंह ठाकुर ने प्रारंभ में श्री स्वामिपाद की कृपा प्राप्त कर साधना आरम्भ ही की थी और निरन्तर श्री सद्गुरु देव के सानिध्य में ही रहकर वेगवती सफलता प्राप्त कर रहे थे, बड़ी-बड़ी अनुभूतियाँ श्री गुरुकृपा से हो रही थी। साधना के वैदिकाचार और समयाचार श्री पीताम्बरापीठ की परम्परा के मान्य आचार हैं। शाक्त साधना के अन्य आचारों के विषय में बदनसिंह को अभी कोई ज्ञान प्राप्त नहीं हुआ था और जप साधना ही उसका प्रमुख विषय था। एक पण्डित जी ने बदनसिंह से कहा- भाई ठाकुर साहब ! यदि आप साधना में शीघ्र उन्नति करना चाहते हैं तो हम आपको एक युक्ति बता सकते हैं जिससे आपको बहुत लाभ होगा और आपकी कुण्डलिनी जागृत हो जाएगी। साधना की सफलता कुण्डलिनी जागरण पर ही है। अभी तक बदनसिंह केवल इतना ही जानता था कि इस देह में इस नाम की जीवनी शक्ति होती है जो सुषुप्तावस्था में रहती है और जप आदि द्वारा वह जाग जाती है उसके बाद ही लक्ष्य प्राप्ति का मार्ग प्रशस्त होता है। पण्डित जी के इस भाषण को सुनकर उनसे पूछा कि क्या युक्ति है? अपने को योगेश्वर समझने वाले वे ब्राह्मण बोले कि सुरा सेवन के बिना किसी की कुण्डलिनी जागृत नहीं होती। जब साधक सुरा का सेवन करता है तो उसके मुख में जाने वाली सुरा का पान उसके शरीर में रहने वाली कुण्डलिनी ही करती है जिससे वह शीघ्र जागृत हो जाती है। वैसे भी सुरा का प्रयोग

करने के बाद जप करने पर बड़ा मन लगता है। उन ब्राह्मण के इस प्रकार बताने पर बदनसिंह ने कहा- न तो मैं सुरा का सेवन करता ही हूँ और न श्री स्वामीजी महाराज ने इसके लिए मुझसे कहा ही है। पण्डित जी कहने लगे- श्री स्वामीजी ने इसके लिए ब्राह्मण होते हुए भी मुझ को आज्ञा की है। सुरा सेवन से मुझे बहुत लाभ हुआ है। इन सब बातों को सुनकर बदनसिंह के भोले हृदय में सुरा के प्रति आकर्षण बढ़ रहा था। उसने पण्डित जी से युक्ति बताने के लिए कहा तो वे ब्राह्मण उत्तर देने लगे। युक्ति तो सुरा सेवन ही है लेकिन प्रश्न है गुरु से आज्ञा मिलने का, जिसके लिए तुम्हें गुरुदेव से निवेदन कर आज्ञा लेनी होगी। निःसन्देह आज्ञा मिल जाएगी लेकिन उनके सामने एक झूठे स्वप्न का बहाना करके अभिनय करना होगा। झूठे स्वप्न की बात सुनकर बदनसिंह सन्न रह गया और गुरु जी से झूठ बोलने को तैयार नहीं हुआ। तब वे ब्राह्मण आगे कहने लगे कि आत्मकल्याण के लिए बोले गए झूठ से पाप नहीं लगता, इसके लिए तो बड़े-बड़े ऋषि - मुनियों ने भी झूठ बोला है। बदनसिंह का हृदय लालचपूर्ण होकर उस ब्राह्मण के शब्द जाल में फँस गया और उस नरक मार्गीय परामर्श को अत्यन्त मधुर समझने लगा। इसलिए वह झूँठ भी बोलने को राजी हो गया, तब वे ब्राह्मण आगे कहने लगे- भाई बदनसिंह ! आप श्री स्वामीजी के पास एकान्त देखकर जाना और प्रणाम कर कहना कि हे प्रभु ! मैंने एक विचित्र स्वप्न देखा है और मेरा अन्तरमन कह रहा है कि मैं आपसे निवेदन करूँ कि आप स्वप्न में मुझसे कह रहे हैं कि ठाकुर ! तुम सुरा का सेवन करके जाप किया करो। अतः बदनसिंह ने मनभावन श्री प्रभू से एक दिन मौका पाकर ब्राह्मण के ही शब्दों में अक्षरशः प्रार्थना कर दी। अन्तर्यामी महामानव श्री स्वामीजी ने अपने शिष्य के अज्ञानता भरे लालच को जानकर कहा- हमारी परम्परा में तो यह बात है नहीं और हम किसी को ऐसा नहीं बतलाते। शायद तुम्हारे परिवार की परम्परा रही होगी और उसी का यह प्रभाव है। हे दयानिधि ! अपने शिष्य को कुमार्ग पर चलने से रोकने की इच्छा से

ही आपने बदनसिंह को सुरा सेवन की आज्ञा देते हुए कहा- यदि तुम सुरा सेवन करना चाहते हो तो शास्त्रीय विधि से सुरा शोधन के पश्चात् जप करने से पूर्व केवल एक या डेढ़ तोले ले सकते हो, इससे अधिक नहीं। शोधित सुरा को तीर्थ, कारण और अमृत आदि नाम दिए गए हैं। मन्दबुद्धि बदनसिंह श्री स्वामीजी के स्पष्ट शब्दों को भी नहीं समझ सका। उन्होंने- 'यदि तुम सुरा सेवन करना चाहते हो तो' ऐसा कहकर अपनी आज्ञा प्रकट नहीं कर सब बात उसी के ऊपर डाल दी। इसके उपरान्त बदनसिंह साधकावास गया जहाँ वह ब्राह्मण भी बैठा उसकी बाट देख रहा था। आज्ञा मिल जाने की सुनकर वह बहुत प्रसन्न हुआ और बदनसिंह से रुपये लेकर बाज़ार से एक पौवा वारुणी और कुछ नमकीन भजिया ले आया और सुरा शोधन करने लगा। उधर अपने गुरुदेव से झूठ बोलने का पाप लगातार बदनसिंह के हृदय को दुःखी करने लगा। ढोंगी ब्राह्मण ने सुरा का शोधन सम्पन्न किया और सेवन के लिए दो पात्रों में कारण उड़ेलने के लिए तैयारी करने लगा। तभी एकाएक भोले अनजान शिष्य के हृदय में, उसको कुमार्ग की ओर जाने से हटाकर सन्मार्ग पर लगाने के लिए हे प्रभो ! आप विराजमान हुए। उसके विचारों में परिवर्तन होकर वह झूठ बोलने का प्रायश्चित्त करने को उद्यत हुआ। इसलिए उस ब्राह्मण को तीर्थ को पात्र में उड़ेलने से रोककर प्रभु के पुनः दर्शन प्राप्त करने चला गया। श्री स्वामी जी अन्दर बगिया में विराजे थे। बदनसिंह श्री गुरुदेव को प्रणाम कर कहने लगा- दास कुछ निवेदन करना चाहता है। उसका निवेदन सुनने से पूर्व ही श्री महाराज ऐसे बोलने लगे मानो वह बात कहने को वे बदनसिंह का इन्तिज़ार ही कर रहे थे। ठाकुर ! यहाँ के ब्राह्मणों के मायावी प्रपञ्च और छल-कपट भरी बातों में न पड़कर अपनी साधना में ही समय लगाना चाहिए। यहाँ मेरे पास आने वालों को केवल मुझसे ही सम्बन्ध रखना चाहिए, भटकना नहीं चाहिए। हाँ ! अब अपनी बात कहो। श्री सद्गुरु के करुणापूरित नेत्रों की ओर झाँककर बदनसिंह फूट-फूट कर रोने लगा और श्री चरणों में निवेदन

करने लगा- प्रभो ! आपकी कृपा का वर्णन नहीं किया जा सकता। आपके द्वारा मार्गदर्शक शब्द कह जाने के पश्चात् मेरे पास क्षमा याचना करने के अतिरिक्त कहने को कुछ भी नहीं बचा। हे करुणानिधान ! मैं अमुक ब्राह्मण की कपटपूर्ण बातें सुनकर दिग्भ्रमित हो गया था और कुण्डलिनी भगवती का नाम सुनकर लालच में पड़ गया था। स्वार्थवश अपने स्वामी से झूठ बोला। मैने कोई स्वप्न नहीं देखा था और न मेरा अन्तःकरण उस कारण को ग्रहण ही कर सकता है। मेरा व्यवहार अत्यन्त निन्दनीय रहा। मुझे अपने आप पर बड़ी ग्लानि हो रही है। मैं क्षमा चाहता हूँ। मुझ महापापी को क्षमा करें। हे मुनिश्रेष्ठ ! अपने शिष्य का आत्मसमर्पण सुनकर आपने कहा- बस प्रायश्चित्त हो गया। आगे के लिए ऐसे प्रपञ्चकारियों से तुम्हें सावधान रहना चाहिए। श्री चरणों से बदनसिंह ने क्षमादान प्राप्त कर सोचा, ''धिक्कार है मेरे जीवन पर मैंने अपने दयासिन्धु और पूज्य गुरुदेव से झूठ बोला। मैं अपराधी हूँ और मेरे गुरुदेव के अतिरिक्त कोई भी मुझे क्षमा नहीं कर सकता था। इसलिए, रोते-रोते बदनसिंह ने कहा, हे तत्त्वातीत ! जीवन के अन्तिम क्षणों में दो बातों का मुझे निश्चित ही गर्व रहेगा कि मेरे जैसा पापी नहीं और तेरे जैसा दाता नहीं हुआ और न होगा। प्रभो ! योग की समस्त सिद्धियाँ आपके सन्मुख हाथ जोड़े खड़ी रहती हैं। आप अपने भक्तों को अनायास कृपा करके जो चाहे सो प्रदान कर देते हैं। इस प्रकार आप लीला करके कृपा करते हैं। क्योंकि कृपा करना आपका स्वभाव है। जैसी कृपा आपने नागपुर के डी.एस. कोठारी पर की, श्री कोठारी जी अपने मन की कुछ व्यक्तिगत बातें श्री प्रभु से करना चाहते थे। कई बार प्रयास करने पर भी श्री प्रभु ने उन्हें बात करने का मौका नहीं दिया, तो बेचारे कोठारी जी सोचने लगे कि, श्री प्रभु तो सुनते नहीं हैं, मैं माता को ही अपने मन की बात सुनाकर घर वापस चला जाता हूँ। ऐसा निश्चय कर उन्होंने माता से मन ही मन कहा- ''श्री प्रभु तो कुछ सुनते नहीं, तुम ही मेरी बात सुन लो''। तभी श्री प्रभु ने अन्दर वाटिका से गम्भीर आवाज़ में कहा- कोठारी जी यहीं आ जाइए

और हमें ही सुना दीजिए। कोठारी जी अवाक् और अश्रुपूर्ण नेत्रों से श्री प्रभु के चरणों में जा गिरे और बार-बार क्षमा याचना करने लगे। भगवान् किस आचरण से प्रसन्न होते हैं यह समझ में नहीं आता। गुरु के निर्मल ज्ञान की कृपापूर्ण चाह हम रखें। वही शिव है वही शक्ति है। भक्त प्रेमदास जिनको श्री प्रभु की दया से जीवनदान मिला था, किसी कारणवश होशंगाबाद पहुँचे तो उन्हें ध्यान आया कि कामनावर्षक श्री महाराज बहुधा अपने भक्तों से कामाख्या देवी के दर्शनों को तथा नर्मदा का नाभिस्थान हंडिया के सिद्धनाथ मन्दिर जहाँ ऋषि मार्कण्डेय का स्थान भी है, दर्शनों के लिए कहते थे। इसी स्थान पर देवाधिदेव श्री महाराज ने दो वर्ष तक घोर तपस्या की थी। प्रेमदास को आता देखकर श्री प्रभु मुस्कुराए और कहा- वहाँ भजन तो ख़ूब मन लगाकर किया अब तुम्हारा मंत्र सिद्ध हो गया और बड़े हर्षित हुए। प्रेमदास साष्टांग प्रणाम करके उठे तो उनकी आँखों से अश्रुधाराएँ बह रही थीं। अपने भाग्य की सराहना कर रहे थे। प्रेमदास ने अपने स्वामी की स्तुति की। हे कृष्ण ! राधामाधव ! करने कराने वाले तो आप ही हैं, मुझे अहंकार में मत डालिए। महाभारत युद्ध में अर्जुन के रथ की ध्वजा में हनुमानजी बैठे थे। अर्जुन के बाण से कर्ण का रथ बहुत दूर चला जाता किन्तु कर्ण के बाण से अर्जुन का रथ थोड़ा पीछे हटता था। अर्जुन को अहंकार हो गया तब हे कृष्ण आपने हनुमानजी को ध्वजा से अलग हो जाने का इशारा किया, कर्ण का बाण छूटा, अर्जुन का रथ कोसों दूर जा गिरा। हे लोकपालक ! मैं आपकी कृपा से ही सिद्धनाथ गया, आपकी कृपा से ही मंत्र सिद्ध हुआ और आप मुझे इसका श्रेय दे रहे हैं। श्री प्रभु पहले आपने जीवन दान दिया था अब परलोक भी सुधार दिया। "क्या तुझ पर निसार करूँ क्या पास है मेरे, कुर्बान तेरे क़दमों पर मोहताज का सर है।" हे अनन्तकोटि ब्रह्माण्ड नायक श्री सद्‌गुरु समर्थ ! आपकी करूणा व दया का जिसने अनुभव किया उसके लिए सब कुछ गूँगे का गुड़ जैसा ही है। हे शक्तिमान् अविनाशी ! चीनी हमले से उत्पन्न राष्ट्र संकट के समय आपकी आज्ञा से माता

बगलामुखी एवं भगवती धूमावती का आवाहन किया गया था। माता धूमावती के स्थान को वहाँ के सामान्यजन 'भूखी माई' नाम से जानते हैं। यह यात्रा आपके भक्त सूर्यदेवजी की जीप से करनी थी। हे कुबेर का भण्डार भरने वाले नारायण ! आपकी यात्रा की ख़बर आश्रम में आने वाले धनपतियों को लगी तो उन्होंने अपनी आलीशान वातानुकूलित कारें इस यात्रा हेतु बड़ी श्रद्धा व विनम्रता से देनी चाही। यह भी कहा-यात्रा लम्बी है, सूर्यदेव की जीप का कोई भरोसा नहीं कहाँ खड़ी हो जाए, गर्म हो जाए, गर्मी के दिन हैं। लेकिन ग़रीब-परवर ! आपने फ़रमाया-सूर्यदेव की जीप से नहीं जाऊँगा तो उनका मन दुःखेगा। गाड़ी ख़राब होगी तो थोड़ा कष्ट ही तो होगा लेकिन उसका मन तो नहीं दुःखेगा। श्री निवास ! आपने सूर्यदेव की पुरानी जीप से ही यात्रा की। इतना ही नहीं साथ में किसी पूँजीपति को चलने तक की इजाज़त नहीं दी। ग़रीब नवाज़ ! दूसरों के कष्टों का अनुभव करने वाले, आपकी बन्दानवाज़ी पर बन्दों को नाज़ है। आपको शत शत प्रणाम। भक्तों को पतित पावन ने अपने भ्रमण काल की लीलाओं से जो आदर्श प्रस्तुत किए हैं, वे हम सब का मार्ग प्रशस्त करें। 'श्री स्वामी कथासार' की इन कथाओं को जो व्यक्ति भक्तिपूर्वक सुनता और इनका नित्य पाठ करता है, उसको श्री स्वामीजी की कृपा प्राप्त होकर कल्याण का मार्ग सरलता पूर्वक प्राप्त हो जाता है।

श्री पीताम्बरामाई को अर्पण है।

।। इति अष्टम् अध्याय समाप्त।।

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

नवम् अध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे नाथ ! हे मधुसूदन ! हे कृष्ण ! हे अच्युत ! सज्जनवत् वेश धारण कर पूतना आई उसको आपने उत्तम गति प्रदान की। कलिकाल में जन्मे कबीरदास, नानकदेव, दादू दयाल, चरणदास, रैदास, तुलसीदास, सूरदास, मलूकदास, ज्ञानदेव, एकनाथ, तुकाराम, आदि जितने भी महात्मा और भगवत् भक्त हुए हैं, उन सभी के चरणों में प्रणाम है। भक्तों में कौन छोटा है और कौन बड़ा, यह भेद करना ईश्वर की महिमा को घटाना है। सालिगराम की बटिया छोटी हो चाहे बड़ी, सभी एक-सी पूज्य हैं। सन्त के चरणों में प्रणाम करने से ही मनुष्य कल्याण मार्ग का पथिक बन सकता है। हे सन्त शिरोमणि ! आपको बारम्बार प्रणाम। हे सच्चे सन्त ! आपने तंत्र के वैदिक और पारमार्थिक स्वरूप को स्पष्ट कर तन्त्र का शुद्ध रूप बताया। सभी वर्णों के लोगों को आपने तंत्र विद्या में दीक्षित कर सामाजिक उत्थान और भातृत्व भावनाओं की स्थापना की। सभी समुदायों में परस्पर प्रेम का विकास किया। दतिया में अभिचार (मारण मोहन आदि) कर्म करने वाले बड़े-बड़े तांत्रिक और मांत्रिक निवास करते थे, आपके आगमन से अधम और पाशविक परम्परा समूल नष्ट हो गई। पुनः शुद्ध तांत्रिक परम्परा की स्थापना हुई। दुष्ट लोगों ने आपके विरुद्ध षड्यन्त्र किए, किन्तु हे जगत्पावन ! आप अविचल रहे। जीवों के दुःख को दूर करना ही एकमात्र आपका कार्य रहा। दतिया के एक तांत्रिक ने आप पर मारण का भीषण प्रयोग

कर दिया। उसके फल स्वरूप रात्रि में एक भयानक आकृति, स्वयं मृत्युरूप कालपुरुष, हाथ में जलती हुई मशाल लिए दक्षिण दिश की ओर से जहाँ बटुक भैरव का मन्दिर है, आप पर प्रहार करने के लिए धीरे-धीरे बढ़ने लगा। आप उस समय चौक में बने चबूतरे पर रात्रि विश्राम कर रहे थे। हे निष्कलंक ! आपने कालपुरुष को अपनी ओर आते देखा, फिर निर्विकार भाव से पीताम्बरा देवी के मन्दिर की ओर निहारा जो पश्चिम दिशा में है। उस समय मन्दिर का द्वार बंद था लेकिन दक्षिण दिशा की खिड़की खुली थी, उसी समय अचानक एक तेज़ गड़गड़ाहट की आवाज़ हुई और माता स्वयं मन्दिर की खिड़की से बड़े क्रोध में हाथ में गदा धारण किए बाहर आ गयी और बड़े वेग से भयंकर कालपुरुष पर गदा प्रहार कर उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिए। लेकिन आप इन बातों से बेख़बर होकर माता को ही देखते रहे। जो कुछ है- माँ ही है। जो उसकी इच्छा। माता ने उसके बाद आपको ममतामयी दृष्टि से देखा और वापस मन्दिर में चली गयी। आप चाहते तो प्रयोगकर्ता आप पर प्रयोग कर ही नहीं सकता था। क्योंकि आप तो सर्वशक्तिमान हैं। परन्तु यदि ऐसा न होता तो वह अधम तन्त्र झूठा सिद्ध होता। वह तन्त्र भी आपके द्वारा ही कथित है। इसलिए आपको उसकी भी मर्यादा रखनी थी जैसी कि हनुमान जी ब्रह्मपाश की मर्यादा रखने के लिए मेघनाथ द्वारा फेंके गए ब्रह्मपाश में स्वयं बँध गए थे। एक दिन- इस रहस्यपूर्ण घटना को श्री राधारमण दुर्वार आदि भक्तों के सामने प्रकट करते हुए आपने कहा, तुम सबको पूर्ण विश्वास करना चाहिए कि माता यहाँ जागृत रूप से निवास करती है। आप अपने आप में परिपूर्ण है। ''जाकी रही भावना जैसी, प्रभू मूरत देखी तिन तैसी।'' जैसे लोक में माता अपने अबोध शिशु की सस्नेह हर प्रकार से रक्षा करती है, उसी प्रकार जो देवी माँ को पूर्ण समर्पित हो गया उसकी वह हर प्रकार से सम्मान सहित रक्षा करती है। दर्पण के समक्ष खड़ा होने पर दर्पण की आपसे कुछ भी शोभा नहीं होती है। परन्तु वह दर्पण अपने में सामने खड़े होने वाले के ही मुख और स्वरूप

को दिखा देता है। जिससे वह स्वयं ही प्रसन्न हो जाता है इसी प्रकार आपकी पूजा और सम्मान करने वाला स्वयं ही सम्मानीय और पूजित हो जाता है। यह घटना सुनकर शिष्य बदनसिंह ने अति आवेश में आकर निवेदन किया भगवन् ! आप तो सर्व समर्थ हैं, जिसने यह मारण प्रयोग किया है। उसे अवश्य दण्ड मिलना चाहिए। आप सर्वज्ञ हैं। हमें बतलाएँ वह कौन धूर्त है, उसे ज़रूर दण्ड देंगे। आपने उसको शांत किया और निर्विकार भाव से कहा- तुम दण्ड देने वाले कौन हो ? दण्ड परमात्मा के अलावा और कौन दे सकता है और दया करने में भी केवल वही समर्थ है। इस प्रकार अनेकानेक प्रयोग आप पर होते रहे, लेकिन आप शांत भाव से जहर पीते रहे स्वयं जगन्माता ही आपके आगे पीछे भागती रही। जैसे अपने नवजात बछड़े को बचाने के लिए गाय उसकी रक्षा करती है, और जब बछड़ा बड़ा होकर खेलता हुआ इधर-उधर चला जाता है तो करूण आवाज़ में रम्भाती है। उसे दौड़-दौड़ कर खोजती है। भक्त आपसे निवेदन करते हैं कि आप स्वयं सर्व समर्थ हैं। आप ही इसका प्रतिकार करें। लेकिन आपका सदैव एक ही उत्तर रहा। जो शक्ति का उपासक होता है, उसे विषयों से विरक्त रहना चाहिए, गरीबों का मददगार होना चाहिए, कृपा की मूर्ति होना चाहिए। आहिंसा आदि पुष्पों से माँ का श्रृंगार करना चाहिए, तथा गुरु चरणों से निकले हुए अमृत का पान करना चाहिए। ज्ञान के द्वारा काम, क्रोध, मोह, लोभ आदि इन पशुओं की बली चढ़ानी चाहिए, वास्तव में निषिद्ध कामनाओं का मारण, लोभ-मोह का उच्चाटन, आपत्तियों का स्तम्भन और दैविक गुणों का मोहन करने में सिद्ध हस्त होना चाहिए। वही वीर पुरुष जगन्माता का उपासक और शाक्त कहलाने के योग्य है और माता की समस्त कृपा का पात्र भी वही भक्त बन सकता है। तुम लोग यहाँ भजन पूजन करने आते हो, सत्संग करने आते हो, इस प्रकार की फ़ज़ूल की बातों में पड़कर अपना समय व्यर्थ नहीं गवाँना चाहिए। ख़ूब साधना करो, जप करो, तप करो, इससे समस्त ज्ञान अपने आप प्रकट होता है। मोक्ष कोई अलग व्यवस्था का नाम नहीं

है वह मरने के बाद मिलने वाली वस्तु नहीं है। वह तो इसी शरीर में जीवनकाल में ही प्राप्त हो जाती है। तुम लोग उसे मान प्रतिष्ठा में, नाम में, धन में कोई संतति के रूप में, कोई कुछ तो कोई किसी अन्य रूप में मान बैठा है। इसलिए व्यर्थ की बातों में पड़कर अपने यहाँ आने के उद्देश्य को मत भूलो। इस प्रकार अपने भक्तों को उपदेश देकर कृपा करते ही थे परन्तु हे भूतनाथ ! आप घोर कर्म करने वाले भूत, प्रेत आदि पर भी अपनी अहैतुकी कृपा की वर्षा करते रहते थे। आश्रम में कुएँ के पास एक प्राचीन समाधि बनी हुई है जो जीर्ण-शीर्ण अवस्था में थी। एक दिन प्रभो ! आपके भक्त श्री वैद्यराज रामनरायण ने आप श्रीमन्नारायण से निवेदन किया यहाँ साधक शिष्यों के ठहरने की कोई व्यवस्था नहीं है। इस प्रकार साधुओं के ठहरने के लिए आपसे आज्ञा लेकर साधका-वास बनाया। साथ ही बिना अनुमति लिए समाधि को घेर कर एक कमरे का निर्माण भी प्रारंभ करवा दिया। पूरा कमरा बनकर तैयार हो गया। लेकिन दूसरे दिन सुबह लोगों ने देखा कि- कमरे की छत गिरी पड़ी है। इसलिए उसे दुबारा बनवाई गई फिर दूसरे दिन लोगों ने देखा कि वह छत फिर गिर गयी है। फिर तीसरी बार छत बनवाई गई। लेकिन वह भी सुबह देखा तो गिरी पायी गई। यह सब देखकर वैद्यजी बड़े परेशान और हैरान हुए उन्होंने पूरी घटना की जानकारी आपको दी तथा विनम्र शब्दों में पूछा कि प्रभो ! यह विचित्र घटना क्यों हो रही है? हे त्रिकालज्ञ ईश ! आपने कहा कि- जिसकी वह समाधि है वहाँ वह सूक्ष्म रूप में रहता है तथा उसे वहाँ कमरा बनना पसन्द नहीं है, इसलिए छत को गिरा देता है। वैद्यजी यह सुनकर बड़े हैरान हुए। उसी दिन संध्या के समय आपके पास कई भक्तगण बैठे हुए थे। वह आत्मा वहाँ आयी। श्री प्रभु ने उससे कहा कि- तुम कमरा बनने दो, उपकार का काम है, अब तुम जाओ। आत्मा ने उत्तर दिया- ठीक है महाराज लेकिन मेरा उद्धार आप करें। मैं बहुत कष्ट में हूँ। आत्मा की बातें सुनकर आप द्रवित हो गए और कहा- जब तुमने मेरी बात मान ली तो मैं भी तुम्हारी बात मान लूँगा।

तुम तीन बार ॐ नमो नारायणाय'' का उच्चारण करो, तुम्हारी मुक्ति हो जाएगी। उस आत्मा ने तीन बार इस मन्त्र का उच्चारण किया और महाराज जी को धन्यवाद तथा प्रणाम करके चली गयी। इस घटना के बाद उस कमरे पर छत डाली गयी जो आज तक वैसी ही है। पीताम्बरापीठ आश्रम पूरा क्षेत्र आपके आगमन के पूर्व श्मशान होने के कारण बड़ा भयावह था। हे भयहर ! आपके वहाँ विराजने से सिद्ध लोग तो रह गए, लेकिन अन्य भूत-प्रेत-पिशाच आदि योनियों को स्थान छोड़कर जाना पड़ा। तपस्या के फलस्वरूप स्थान शुद्ध शांत हो गया। लेकिन एक भयानक दैत्य जो पगड़ी में कलंगी लगाकर पहना करता था, नहीं गया। आपने उसे कई बार स्थान छोड़ने के लिए कहा लेकिन वह कहता- तुम्हारे जैसे बहुत साधु देखे हैं, तुम ही यहाँ से चले जाओ, मैं नहीं जाऊँगा। वह दैत्य मणिपुर धाम से लगे हरिद्रा कुण्ड में वास करता था। प्रारंभ में आप भ्रमणकाल के समय से ही एक लाठी लेकर चलते थे जिसे जंगल में जानवरों और काँटों आदि को हटाने के काम में लेते थे। वह डण्डा आपका कोतवाल ही था। आख़िर मजबूर होकर महाराज जी ने उसको हुक्म दिया कि कलंगी वाले दैत्य को आश्रम से बाहर निकाल दो। कोतवाल द्वारा दैत्य की पिटाई किए जाने पर वह दौड़ा-दौड़ा महाराज जी के चरणों में आकर गिर पड़ा और विनती करने लगा- हे प्रभो ! मैं यहाँ से चला जाऊँगा, मुझे इससे बचाओ। उस समय श्री महाराज बाहर टीन के नीचे विराजे थे और श्री ओमनारायण शास्त्री सेवा में थे। वह दैत्य जब हरिद्रा कुण्ड से निकलकर श्री स्वामीजी की ओर आता दिखाई दिया तो उसको देखकर श्री प्रभु ओमनारायण शास्त्री से बोले- वह दैत्य तो फिर हरिद्रा कुण्ड से ही निकलकर आ रहा है। शास्त्री ने देखा कि एक भीमकाय काला पुरुष आ रहा है। उसके सिर पर साफे के ऊपर कलंगी लगी हुई है, उसकी आँखें गोल, अजीब और सुर्ख़ हैं तथा शरीर बहुत बलिष्ठ और साँवला है। वह गिड़गिड़ाता हुआ श्री महाराज जी के पास आकर खड़ा हो गया और निवेदन करने लगा, प्रभो ! मैं अब कहाँ जाऊँ? मैं आपकी शरण

में हूँ और क्षमा चाहता हूँ। श्री प्रभु ने कहा कि अब यह स्थान साधना करने वालों के लिए है। तुम मान नही रहे थे, इसलिए ऐसा करना पड़ा अन्यथा हम सन्यासियों का यह काम नहीं है, और क्षमा करके आपने उसको भी अधम योनि से मुक्त कर दिया। वनखण्डी महादेव के परम्परागत पुजारी स्वर्गीय (खच्चू दुबे) मन्दिर में प्रायः सुबह ४ बजे से सन्ध्या के ५ बजे तक रहा करते थे। उनका यह नित्य का क्रम था। जब श्री प्रभु वनखण्डी में विराजमान हुए तो वे पुजारी जी भी महाराज के भक्त हो गए। शिवरात्रि के पावन पर्व पर श्री प्रभु की कृपा से बने निपुण ज्योतिषाचार्य दतिया निवासी श्री रमेश उपाध्याय अध्यापक बिरला विद्यालय, बिरला नगर ग्वालियर आश्रम के शिव मन्दिर में जप कर रहे थे। पुजारी जी मन्दिर में बैठे थे। उन्होंने उपाध्याय जी को सुनाया कि, एक दिन दोपहर में वह शिव मन्दिर के दरवाज़े पर बैठा था। लगभग २-३ बजे का समय था कि इतने में एक स्याह काली स्त्री पैरों में पायल की आवाज़ झंकृत करती हुयी उसके पास से गुज़रती हुयी हरिद्राकुण्ड तक गयी और वहाँ से यह कहती हुयी वापस हुई कि अब यहाँ पर कुछ नहीं है। जब पुजारी जी ने इस घटना का ज़िक्र शाम को महाराज जी से किया तो महाराज जी ने कहा कि वह काली माई थी और स्थान का निरीक्षण करने आयी थी। हे रामकृष्ण, आपकी प्रत्येक मनुष्य, पशु, पक्षी एवं सूक्ष्य योनियों में आत्मीयता की समदृष्टी थी। संत की कथनी और करनी में भेद नहीं होता है, सही ब्रह्म तो चराचर में व्याप्त है, वहाँ पशु पक्षी अच्छे बुरे में कोई भेद नहीं होता। "जन–जन सुन आश्चर्य से रह जाता है देख, जैसे सागर का हुआ थाली में अभिषेक।।" आपने टेनी नामक श्वान की मृत्यु होने के पश्चात् उसका दाह संस्कार विधिवत् कराया। प्रत्येक प्राणी की स्वतंत्रता में विश्वास किया। यहाँ तक कि शब्दों के औचित्य एवं अधिकारों को भी मान्यता दी। हे ज्ञानराशि ! आपने भक्तों को समझाया कि शब्दों के अपने अधिकार होते हैं और उन अधिकारों की सुरक्षा मनुष्य मात्र का कर्तव्य है। हे दामोदर ! आपके भक्त यह जान गए थे कि आपकी कृपा

के अधिकारी पशु-पक्षी भी हैं, वे भी मोक्ष पाने के अधिकारी हो जाते हैं। एक दिन आश्रम में रहने वाला झब्बा नाम का श्वान आपके मूढ़े के पास बैठा था, अचानक आपने उसके सर पर हाथ फेरते हुए घोषणा की- कि यह इसका अंतिम जन्म है। इसी प्रकार अन्य एक कुक्कर के लिए आपने कहा कि इसने यहाँ रहकर बहुत प्रसाद खाया हैं, इसका अगला जन्म ब्राह्मण कुल में होगा। तालाब के किनारे आश्रम होने के कारण वहाँ साँप, बिच्छू, गोहर आदि की बहुतायत थी। लेकिन कोई भी दुर्घटना किसी भक्त के साथ कभी नहीं हुयी। आत्मस्वरूप में प्रेम होता है। संत शिरोमणि श्री भगवान् आशुतोष स्वयं यहाँ विराजे हैं। सर्वत्र आश्रम में संतोष, समता और शान्ति मूर्तिमान् होकर छायी है। सच्चे संत की यही तो पहचान है। दुष्ट, दुष्टता छोड़ देते हैं। देवयोनि का एक बहुत मोटा और बड़ा सफ़ेद रंग का नाग जिसकी उम्र का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। उसकी बड़ी-बड़ी मूँछें हैं और पूर्व से इसी स्थान में ही रहता है, कभी-कभी शिवमन्दिर में वनखण्डेश्वरनाथ की हाज़िरी देने आया करता है, भाग्यवान् भक्तों को कभी-कभी उसके दर्शन हो जाते हैं और उसके दर्शन मङ्गलप्रद माने गए हैं। एक रात्रि में उस नाग को जब वह शिवलिंग के ऊपर लिपटा हुआ था, तब एक वृद्धा स्त्री ने सफ़ेद फूलों की माला समझकर उठा लिया, लेकिन कोई दुर्घटना नहीं हुई। जिस पर संत कृपा होती है, वह हमेशा सुखी और प्रसन्न रहता है। एक बार श्री प्रभु बहुत अस्वस्थ हो गए। शरीर में सूजन आ गयी। वैद्य और डॉक्टरों का इलाज चल रहा था और आपको पूर्ण आराम करने का परामर्श दिया गया था। हर व्यक्ति अपनी-अपनी बुद्धि से इलाज करना चाहता था। आपको जो भी व्यक्ति कोई भी दवा बता जाता या दे जाता उसी से सबसे ज़्यादा आपको फ़ायदा हो जाता। ऐसा प्रायः होता ही रहता था। परंतु एक दिन तो पराकाष्ठा ही हो गई, जब देखा कि पन्द्रह बीस आदमी बाहर पंक्तिबद्ध हाथ में दवाई लिए खड़े हैं। उनमें चन्द्रमोहन सक्सेना नाम का डॉक्टरी पढ़ने वाला तृतीय वर्ष का विद्यार्थी जो अभी उपचार के विषय में विशेष

कुछ नहीं जानता था, कुछ दवाइयाँ लिए खड़ा था। जब उसकी बारी आई, वह भी अन्दर गया और आपको लाई हुई औषधि दी। बाद में उसी विद्यार्थी डॉक्टर को मालूम हुआ कि उसने रोग के विपरीत औषधि भूलवश दे दी है जो कि बहुत घातक सिद्ध हो सकती है। हे नीलकण्ठ ! आपने प्रेम से उस हलाहल का पान कर लिया। दूसरे दिन जब वह डॉक्टरी पढ़ने वाला छात्र डर से घबड़ाता हुआ दर्शन करने को आया, तो हे कालाग्नि ! आपने कहा, "मेरे पैर का दर्द बिल्कुल ठीक है, और अब तुम डॉक्टर हो गए" चन्द्रमोहन सक्सेना जो कि खिलाड़ी था, और खेल के बलपर ही जिनका चिकित्सा महाविद्यालय में चयन हुआ था, पढ़ने में होशियार नहीं थे। किन्तु श्री स्वामीजी का आशीर्वाद प्राप्त कर वह कक्षा के होशियार छात्रों में गिने जाने लगा और पाँचवे वर्ष की फाईनल परीक्षा में विशेष अंकों से उत्तीर्ण हुआ। आपकी ऐसी अकल्पनीय कृपा भक्त गणों को हर्ष प्रदान करती है। एक बार देहली के आर्येन्द्र कुमार सिंह वैद्य ने जो आपसे संस्कृत में ही वार्तालाप किया करते थे, आपके घुटनों का दर्द ठीक करने के लिए किसी बूटी के पत्ते कपड़े में लपेटकर घुटनों पर बाँध दिए। घुटनों में दर्द ठीक होने के बजाय और बढ़ गया और अगले दिन तक उसमें और अधिक सूजन आ गई। भक्त डॉ. योगेश ने यह देखकर महाराज जी से निवेदन किया- हर किसी व्यक्ति का उपचार आप ग्रहण कर लेते हैं, इस कारण से वेदना और बीमारी बढ़ रही है। मैं उस वैद्य से आपका उपचार नहीं होने दूँगा, मेरे इस निर्णय के लिए आप मुझे क्षमा कर दें। उस दिन उस वैद्य को डॉ. योगेश ने किसी प्रकार महाराज जी के पास जाने नहीं दिया। डॉ. की इस बात से वह वैद्य चिढ़ गया। दूसरे दिन डॉ. की वैद्य से जब भेंट हुई तो वैद्य ने क्रोध में कहा- कल तुमने अच्छा नहीं किया अभी तो मैं दिल्ली जा रहा हूँ और तुम भी यहाँ हमेशा नहीं रहने वाले हो, तुम्हारे जाने के बाद मैं पुनः दिल्ली से आकर श्री महाराज जी का इलाज करूँगा, तब तुम मुझे कैसे रोक सकोगे ? तभी झाँसी से आए वैद्यराज श्री रामनारायण ने देखा

कि प्रभु को कोई दवाई लगा रहा है, कोई दवाई खिला रहा है और प्रभु प्रसन्न भाव से दवाइयाँ ग्रहण कर रहे हैं। यह दृश्य देखकर वैद्यराज आपके चरण पकड़कर रोते हुए विनती करने लगे- हे महाराज ! अब बस करिये। अपनी इस लीला को समेटिए, अब आप आराम करें। आपने उत्तर दिया- आराम कैसा ? साधु का शरीर तो सार्वजनिक सम्पत्ति होता है। ये भक्त लोग भी प्रेम से ही हमारा उपचार कर रहे हैं। भक्तगण भये मुदित मन, देवगण ठाड़े चारों ओर। निहारे औषधि पान प्रभु, कैसे बँधे प्रेम की डोर।। प्रेम के दो रूप जीव के हृदय में वास करते हैं। प्रेम का पहला शुद्ध और पवित्र रूप तो परमात्मा का ही रूप है और इसका अन्यरूप वासना नाम से जाना जाता है। जगत् इसी प्रेम प्रकार में डूबा हुआ है। गुरु कृपा द्वारा विरले ही इस वासनामय भवकूप से बाहर निकल पाते हैं। मनुष्य अपनी बुद्धिमात्र से इससे मुक्ति नहीं पा सकता। आप दुःख और वासना में फँसे व्यक्ति की रक्षा करते हैं। वकील मदनमोहन पाठक ने अम्बिकापुर की एक आदिवासी नवयुवती फूल-कुँवरि की पैरवी कर उसके पति के ख़िलाफ़ एक मुक़दमा जिता दिया। फूल-कुँवरि ने कुछ खिला-पिलाकर जादू के बल पर वकील को वश में कर लिया और विवाह का प्रस्ताव रखा जो वकील ने ठुकरा दिया। उस युवती ने तब वकील पर भयंकर मारण अभिचारिक प्रयोग कर दिया। जिससे श्री पाठक पागल हो गए। उनके परिवार वालों पर बड़ा संकट आ गया। बड़े-बड़े झाड़-फूँक करने वाले आए, लेकिन कोई फ़ायदा नहीं हुआ। उनके बड़े भाई तथा चाचा उनको बाँधकर श्री चरणों में दतिया ले आए और कृपा सिन्धु आपसे निवेदन किया- हे अनाथों के नाथ ! दुःखियों का दुःख दूर करने वाले- स्वामिन् ! यह व्यक्ति आपकी शरण में आया है, पागल होने से इसकी वकालत बंद हो गयी है, इसके परिवार वाले दाने-दाने को मुहताज हो गए हैं। अब आप ही इसके माई-बाप हैं। इस पर कृपा करें, जैसे आपने हिरण्यकश्यप को मारकर शरण में आए भक्त प्रह्लाद की रक्षा की थी उसी प्रकार इसे भी अपनी पावन छाया में ले लें। श्री प्रभु ने [illegible]

आप ही इसके माई-बाप हैं। इस पर कृपा करें, जैसे आपने हिरण्यकश्यप को मारकर शरण में आए

भक्त प्रह्लाद की रक्षा की थी उसी प्रकार इसे भी अपनी पावन छाया में ले लें। श्री प्रभु ने उत्तर दिया- ख़राब काम करने का परिणाम ख़राब होता है। न कोई लोकाचार मानता है और न शास्त्र की आज्ञा ही सुनता है। लोग आश्रम धर्म विहीन हो गए हैं। दुराचार और छल कपट की बढ़ोतरी हो रही है। इसे मेरे भक्त प्रताप नारायण पाठक लाए हैं अतः जब यहाँ आ ही गया है तो इसके ठीक होने के लिए माता से प्रार्थना करो, वे मन्दिर में बैठी हैं। घर परिवार के लोग जब प्रार्थना करने लगे, पाठक जी बड़ी ज़ोर-ज़ोर से लड़की की आवाज़ में चिल्लाने लगे- मुझे माफ़ कर दो, मैं कभी नहीं आऊँगी, कभी नहीं आऊँगी, मुझे मत मारो, मुझसे भूल हो गयी है। हे महाराज ! मुझे बचाओ। आपने कहा पहले तुम वादा करो- इस बेचारे वकील को ही नहीं, किसी भी प्राणी को नहीं सताओगी, और माता से अपनी भूल की माफ़ी माँगो। तब हे दीनबन्धु ! आपकी कृपा से वकील पाठक विपत्ति मुक्त हो गए। हे पतितपावन स्वामिन् ! आप कभी भी किसी चमत्कार का श्रेय अपने ऊपर नहीं लेते। आप और जगदीश्वरी में कोई भेद नहीं है। कहीं चन्द्रमा और उसकी चाँदनी में कोई अन्तर हो सकता है ? इस प्रकार आपकी कृपा से ही पाठकजी को नवजीवन मिला है, और उनके परिवार का कल्याण हुआ है। हे वेदविद् ! प्राणी मात्र के कल्याण के लिए आपने वेद का उपदेश किया। ईश्वर ही पूर्ण सत्य है तथा इस सत्यव्रत का स्वामी है और वही यथार्थ बुद्धि का प्रदाता है। जो वस्तु जिस रूप में निश्चित हो उसे उसी रूप में जानना एवं वाणी से कहना तथा आचरण में लाना ही सत्य कहलाता है। जब तक अज्ञान का अंश आत्मा में विद्यमान रहता है तब तक इस सत्य का पालन नहीं हो सकता। इसके लिए ईश्वर भक्ति की सहायता लेना ही आवश्यक है, उसकी दया से ही यह सम्भव है। भाण्डेर निवासी नन्दलाल पटेल नाम से विख्यात एक सम्पन्न परिवार के ब्राह्मण ने घर त्याग दिया और आश्रम में आकर आपके चरणों में ही रहने की प्रार्थना की। प्रभो ! आप न तो कभी किसी व्यक्ति को आने के लिए कहते और न ही जाने के लिए। आपने

पटेल से कहा कि- मैं एक दिन राह चलते हुए यहाँ आकर बैठ गया था। यह कोई आश्रम मेरा नहीं है, यहाँ आने वाले लोगों ने इस क्षेत्र में कुछ मकान बना लिए हैं, और आश्रम कहने लगे हैं। सन्यासियों का कोई घरबार या आश्रम नहीं होता, तुम्हारी मर्जी है यहाँ रहो या जाओ। पटेल की महाराज जी में अपार श्रद्धा थी। वे वहीं पर एक छोटी कोटरी में रहने लगे। श्री प्रभु के दर्शन कर प्रसाद प्राप्त किए बिना उन्हें चैन नहीं पड़ता था। श्री रामदास बाबा से उनकी बड़ी घनिष्टता थी। पटेल जी भजन पूजन नहीं करते थे और आपको यह बात पसन्द नहीं थी। इसलिए आपने पटेल जी से कहा- ऐसे आलसी होकर मत पड़े रहो। भगवान् का नाम जपा करो। जप नहीं करना हो तो अपने घर जाओ। गृहस्थ धर्म पालन करो, न इधर के हो न उधर के। त्रिशंकु जैसे मत लटको। जब पटेल जी नहीं गए तो प्रभु ने उनके न जाने का कारण पूछा। पटेल जी ने उत्तर दिया- प्रभु चाहे मारो या छोड़ों मेरा मन तो इस आश्रम में ही लग गया है। मैं तो यही चाहता हूँ कि मेरे मरने के बाद भी मैं इसी आश्रम में ही कोई पक्षी या बन्दर बनकर आऊँ और इन वृक्षों और छतों पर बैठकर प्रभु के चरणारविन्दों को ही देखता रहूँ और आपका प्रसाद मिलता रहे। हे ईश ! आपने कहा सोच विचार करके कोई बात मुँह से निकालनी चाहिए जो जैसा विचार करता है, उसका वैसा ही रूप हो जाता है। समझाने पर भी पटेल अपनी बात ही दोहराते रहे। विपरीत काल में बुद्धि का विनाश हो जाता है, जैसे रावण ने अपनी मृत्यु को खुद न्यौता दिया। कुछ ही दिन बाद पटेल का हृदयगति रूक जाने से देहान्त हो गया। पटेल के निधन के ठीक एक वर्ष बाद एक काले मुँह वाली बंदरिया अपनी गोद में एक बच्चा लेकर आश्रम में आयी। वह बच्चा वृक्षों, भवनों की छतों, मुँडेरों और साधकों के बीच बैठकर आपके पावन दर्शन करता रहता। प्रसाद भी मानव की भाँति ग्रहण करता। रामदास बाबा से विशेष स्नेह करता था। जप करने वालों से उसे भारी चिढ़ थी।

इस प्रकार वह दो वर्षों तक आश्रम में रहा। फिर पता नहीं कहाँ चला गया। हे जगदाधार ! आपकी कृपा का और आपकी लीलाओं का कहाँ तक वर्णन किया जाय- 'हरिअनंत हरिकथा अनंता'

इस प्रकार वह दो वर्षों तक आश्रम में रहा। फिर पता नहीं कहाँ चला गया। हे जगदाधार ! आपकी कृपा का और आपकी लीलाओं का कहाँ तक वर्णन किया जाय- 'हरिअनंत हरिकथा अनंता'। मौन व्याख्यान से तुष्टि नहीं होती, वाणी में शक्ति नहीं, राजनैतिक कारणों से एक दिन ग्वालियर की राजमता विजयाराजे सिंधिया को शासन द्वारा नज़र बंद करने के लिए पचमढ़ी ले जाना था। राजामाता ने बड़े पुलिस अधिकारियों से अपने आध्यात्मिक गुरु से मिलने की इच्छा व्यक्त की। पुलिस अधिकारियों के साथ वे जब दतिया आश्रम पर पहुँची उस समय मध्यरात्रि हो गयी थी। श्री सद्गुरु समर्थ विश्राम कर रहे थे। राजमाता ने उन्हें प्रणाम किया और वहीं से सीधे पचमढ़ी चली गयीं। एक दिन अपने को असहाय पाकर हे स्वामीजी ! राजमाता ने मन ही मन आपसे आर्त पुकार की तो रात्रि के समय उन्हें प्रत्यक्ष आभास हुआ कि प्रभु आप उनके सामने खड़े हैं और कह रहे हैं कि- कष्ट के दिन ख़त्म होने वाले हैं। धैर्य को मत छोड़ना ! राजमाता ने सर्व साधन संपन्न महाराज जी के आने जाने में होने वाली पदचाप ध्वनि स्पष्ट सुनी। इसके बाद राजमाता का समय शान्ति से बीतने लगा। नज़रबन्दी समाप्त होने के बाद गुरुदरबार में हाज़िर हुई और रोते हुए हाथ जोड़कर क्षमा याचना करने लगी हे सर्वपोषणतत्पर ! मेरे कारण आपको कितना कष्ट उठाना पड़ा। मुझे साहस देने के लिए आपको उस नारकीय स्थान पर भी आना पड़ा। श्री जगदीश्वर ने उत्तर दिया- ''तुम क्या कह रही हो मैं तो कुछ जानता नहीं, सब करने कराने वाला तो परमात्मा है, श्री प्रभु ने समझाते हुए कहा- अब तुम ''अहं'' रूपी अहंकार का त्याग कर सम्पूर्ण समय भगवती की उपासना में लगाओ। हमारे शास्त्र भी आज्ञा देते हैं कि पति की मृत्यु के बाद स्त्री को अपना सम्पूर्ण समर्पण भगवान् को कर देना चाहिए। जिन्हें परम सुख की इच्छा है। वे संसारिक पदार्थों में उसका अभाव पाते हैं। वे संसार के सुखों में लात मार कर असली सुख की खोज करने लगते हैं, यह खोज सत्संग से पूरी होती है। किन्तु सद्गुरु के इस अमूल्य निर्देश का राजमाता द्वारा

पालन न करने से उनका पारिवारिक तथा सामाजिक शेष जीवन कष्टमय हो गया। शिष्य के लिए गुरु की आज्ञा ही सर्वोपरि आचरणीय है। एक दिन आपने बड़े प्रसन्न चित्त से एक यूरोपीय नास्तिक की मनोरंजक बात बताई। वह नास्तिक, ईश्वर तत्त्व के नाम से चिढ़ता था। उसने अपने घर में सब गृह के भागों में लिख रखा था- ''नो व्हेयर गॉड'' अर्थात् ईश्वर कहीं भी नहीं है। जब उसका अंतिम समय आया, मृत्यु शय्या पर वह पड़ गया, अशक्त हो गया, उसका छोटा बच्चा जो अभी अक्षरों को सीख ही रहा था- आकर उ वाक्य को पढ़ने लगा- नो के साथ व्हेयर के ''डब्लु'' को मिलाकर पढ़ा तब ''नाऊ हियर गाड'' अर्थात अब ईश्वर यहाँ है। इस बच्चे के वाक्य सुनकर उस नास्तिक के मन पर बड़ा प्रभाव पड़ा कि जिस ईश्वर को मैं नहीं मानता, उसका बराबर विरोध करता था, आज उसने मुझे गिरा दिया और मेरे कमरे में आ पहुँचा। इस प्रकार आपकी अमृतवाणी सुनकर और आपकी विनोद वृत्ति देखकर लोग बड़े प्रसन्न हो रहे थे। अगर सच्चा गुरु हो तो भक्त की सेवा कभी विफल नहीं जाती। सच्चा सन्त हर दशा में अपने भक्तों की रक्षा करता है। दतिया के सन्त तो कलयुग में साक्षात् प्रभु परमेश्वर हैं। सेवक को सन्त महिमा पर स्वप्न में भी अविश्वास नहीं करना चाहिए। श्रद्धा और प्रतीती का हमेशा स्थायी भाव बनाना चाहिए। सन्त सेवा कभी निष्फल नहीं होती। शारदीय नवरात्र पर्व कुछ दिनों में आने वाला था। धीरे-धीरे दूर-दूर से लोग दतिया आश्रम पर आने लगे। आपका एक भक्त राधारमण दुर्वार दतिया से दस कि.मी. दूर जानवरों के अस्पताल में नौकरी करता था। उसे महाराज जी से बड़ा प्रेम हो गया था, इसलिए रोज़ नौकरी करके आश्रम में वापस आ जाता और वहीं रहता था। उसको श्री प्रभु के पास रहते हुए बहुत साल हो गए थे। एक दिन श्री स्वामीजी ने उसे बुलाकर कहा- तुमको मैं एक मंत्र दूँगा, यहाँ से कुछ दूर रामगढ़ की माता का मन्दिर है वहाँ नवरात्र में रहकर उस मन्त्र का अनुष्ठान करना। दिन रात वहीं रहना, और कुछ डरावना अनुभव हो तो घबराना नहीं। दुर्वार जी ने उत्तर

दिया- हे भूतभावन ! मेरे स्वामी ! आप मेरे हृदय में परमेश्वर होकर बैठे हो। जिसका मालिक स्वयं महाकाल हो उसको डर से क्या लेना देना। आपकी आज्ञा मानने से बढ़कर मेरे लिए और कोई

दिया- हे भूतभावन ! मेरे स्वामी ! आप मेरे हृदय में परमेश्वर होकर बैठे हो। जिसके मालिक स्वयं महाकाल हो उसको डर से क्या लेना देना। आपकी आज्ञा मानने से बढ़कर मेरे लिए और कोई दूसरा धर्म नहीं। उसकी बात सुनकर श्री भूतेश्वर बहुत प्रसन्न हुए और कहा- तुम शूरवीर बनों। वीर और धीर पुरुष ही अध्यात्म मार्ग में आगे बढ़ते हैं। सौभाग्य से तुम्हे साधू का सहवास मिला है, उससे लाभ उठाओ। फिर उसको एक मंत्र दिया। आज्ञा प्राप्त कर वह रामगढ़ की माता के मन्दिर में गया और दिन रात वहीं निवास किया। रात्रि में वह देखता- देवी की परिचारिकाएँ छम-छम करती आती और वापस जाती। वह अपने अनुष्ठान में बिना डर के तल्लीन रहता। उन परिचारिकाओं में से कई दुर्वारजी पर प्रहार करने आती, लेकिन पास आकर वापस भाग जाती, जैसे बिजली का झटका लगा हो। फिर क्रोध से डराने के लिए ज़ोर ज़ोर से डरावनी आवाज़ों में चिल्लाती तथा साधना में बाधक बनने का प्रयत्न करती। ऐसी भयानक अवस्था में भी श्री दुर्वारजी धैर्य धारण किए रहे। हे सर्वेश्वर ! जिसके रक्षक आप अविनाशी परिपूर्ण ब्रह्म हो वह त्रिलोक में कहीं भी चला जाय, उसको भय नहीं लगता। नवमी के दिन अनुष्ठान पूर्ण कर दुर्वार अपने घर भाण्डेर चले गए। किंतु रात में उनकी पत्नी के हृदय में भयंकर घबराहट हुई और आवेश हो गया। पूछने पर उसने बताया कि उसे दतिया के महाराज के पास ले चलो। उसी समय दुर्वारजी अपनी पत्नी को दतिया आश्रम में ले आए। वह स्वामीजी को देखकर चरणों पर गिर पड़ी और आवेश में कहने लगी कि हे भूतेश्वर ! आपके शिष्य भक्त को हम लोग मन्दिर में जान से मार देना चाहते थे, लेकिन कोशिश करने पर भी हम उसके पास नहीं जा पाए। हम लोगों से बड़ा अपराध हो गया है। हमारे इस अपराध को क्षमा करें। सोने का असलीपन कस लगाने से मालूम पड़ता है। यह सुनकर परम शक्तिमान श्री महाराज आपने कहा- अच्छा किया जो तुमने क्षमा माँग ली। साधकों को कभी परेशान नहीं करना चाहिए। अब जाओ फिर कभी मत आना। सभी भक्तगणों का श्री

सद्गुरुदेव के चरणों में अर्ज़ है कि हमारे अपराध क्षमा किए जाएँ। बालकों में तो सदैव कमी रहती ही है। परन्तु उनके सुधार की ज़िम्मेदारी माता-पिता की ही होती है। आपके श्री चरण कमलों में ही हमारा असली घर है, आपको बारम्बार प्रणाम है। झाँसी के रामकृष्ण वर्मा वकील ने अपने प्रभु स्वामी महाराज के चरणों में विनम्रता पूर्वक निवेदन किया- हे जगत्पावन निरन्जन पुरुष ! मेरी सबसे बड़ी कन्या का विवाह है, आप उसमें शामिल हों तो मेरे इस सौभाग्य को जब तक यह पृथ्वी रहेगी, तब तक आपकी इस कृपा को देवता लोग भी याद किया करेंगे। हे जगदीश्वर ! मेरा अपना कुछ नहीं है, इसलिए इस प्रकार निवेदन करना भी मेरी धृष्टता है। अपने भक्त की इस प्रकार प्रार्थना सुनकर श्री महाराज परम हर्षित हुए, उन्होंने कहा- ''सन्तों पर निष्ठा रखने वाले हे पुत्र ! मैं भी किसी न किसी रूप में वहाँ रहूँगा, किन्तु शरीर रूप में मुझे दतिया ही रहना होगा।'' समय के पाबन्द ही परमात्मा के सच्चे अनुयायी होते हैं। उन्हें लोक शिक्षा देनी होती है, जो समय का पाबन्द नहीं होता वही असफल हुआ करता है। वकील वर्मा को मालूम था कि श्री प्रभु का संध्या छः बजे का समय अपने आसन पर विराजने का होता है। वकील रामकृष्ण जी ने भी प्रत्येक शनिवार को छः बजे झाँसी से दतिया पहुँचने का नियम बना रखा था और रात को आश्रम में रहकर रविवार को झाँसी वापस लौटते थे। यह नियम उनका कई वर्षों से था। इसी नियम के अनुसार वकील वर्मा शनिवार को छः बजे दतिया पहुँच गये। श्री प्रभु ने उनको देखकर कहा- तुम्हारी लड़की की विदाई कल सुबह है, तुम आज शादी छोड़कर कैसे आ गये? वकील जी ने कहा- हे महाराज ! आज शनिवार है। मैं शनिवार नहीं छोड़ सकता क्योंकि इसमें मेरे स्वामी का हुक्म है। धन्य हैं ऐसे भक्त, नियम पालन में दृढ़ता देख प्रभु बड़े प्रसन्न हुए। हे हिरण्यगर्भ ! आप प्रसन्न होने पर शिष्य की झोली में बख्शिश भी अनायास ही डाल देते हो। आपने वकील वर्मा को आज्ञा दी कि सुबह चार बजे मेरे पास आकर बैठना और भजन करना और उन्होंने वैसा ही किया।

सर्वेश्वर के कुछ क्षण पूर्व वकील रामकृष्ण ने देखा कि प्रकाशमय ओंकार लिखा हुआ अक्षर प्रगट

आज्ञा दी कि सुबह चार बजे मेरे पास आकर बैठना और भजन करना और उन्होंने वैसा ही किया।

सूर्योदय के कुछ क्षण पूर्व वकील रामकृष्ण ने देखा कि प्रकाशमय ओंकार लिखा हुआ अक्षर प्रगट हुआ है उसी क्षण हे लोहिताक्ष ! आपने अक्षर को अपनी तर्जनी द्वारा इंगित करते हुए पूर्व दिशा की ओर संकेत किया। वह अक्षर पूर्व दिशा में जाकर सूर्य के रूप में परिणित हो गया। जो साधक आपकी कृपा से इस भानू का भेदन करता है वही परमहंस होता है और उस भर्ग रूपी प्रकाशात्मा को प्राप्त कर सकता है। ऐ मीर मुक़द्दम है, उल्फ़त में फ़ना होना। बस एक मुहब्बत है न काबा है न बुतख़ाना।। हे खुदा के बन्दो सुनो ! प्रेम में निश्चय ही अपना बलिदान होता है जो कुछ है, एक मुहब्बत ही है न तो मंदिर है और न ही मसजिद। जिस कलेजे के टुकड़े को अपने हृदय से लगाकर बड़ा किया। आज वह विदा होकर अपने घर जा रही है। वह कौन हृदय हीन है ? जो उस समय अपनी पुत्री को हृदय से लगाकर आशीर्वाद दिए बिना विदा करता हो? लेकिन सच्चे सन्त के शिष्य ने अपने हृदय को कठोर बनाकर और वेदना को पीकर अपने कर्तव्य का पालन किया। उन्हें इस लगन एवं निष्ठापूर्ण त्याग का फल मिला। इस स्वामी कथासार के प्रतिदिन सुनने और पाठ करने से अटल भक्ति प्राप्त होती है। श्री स्वामीजी महाराज की जय।

श्री पीताम्बरा माई को अर्पण है।

।। इति नवम् अध्याय समाप्त।।

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

दशम् अध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे शिव ! हे शम्भो ! हे शंकर ! आपकी गुणगाथा कहते ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी थक गए हैं। सब देवों में श्रेष्ठ, महायोगी। देवताओं के भी देवता। जीवों के स्वामी, आनंद स्वरूप, निर्विकार, ज्योति स्वरूप, काल के भी काल, देवों के देव महेश्वर। ईशान उमापति, ज्ञान के आधार, समस्त धर्मों के आधार, इन्द्र, विष्णु, ब्रह्मा आदि से नमस्कृत, महर्षियों से वन्दनीय योग-माया से युक्त योगियों के हृदय में सर्वदा विराजमान, जगत् के कारण रूद्रदेव भगवान् शिव शंकर को बारम्बार प्रणाम। हे सर्वेश्वर ! आप ही जगत् की आत्मा हैं। आपको ही सन्तलोग छोटे से भी छोटा और बड़े से भी बड़ा मानते हैं। आपसे ही समस्त वेद उत्पन्न होते हैं, और प्रलय काल में आपके ही अन्दर समा जाते हैं। आप ही सारे, जगत् के स्वामी तथा माया के पति हैं। कालकूट का पान कर आप ही जगत् की रक्षा करते हैं। हे विश्वनाथ ! विषयरूपी विष का पान करके आप जीवों पर कृपा करते हैं। विषयों में पड़ा मनुष्य विषय का ही चिन्तन करता है। हे विरुपाक्ष ! आपकी कृपा से सब प्रकार के कार्य सहज और सरल हो जाते हैं और जीव कृत्य-कृत्य हो जाता है। महाशिवरात्रि के दिन, परमतत्त्व की अतिशय कल्पना की साकार मूर्ति दिव्य देहधारी भगवान् श्री महाराज मूढ़े पर चौक में बैठे थे। श्री प्रभु का, विनोद महान विद्वानों के बुद्धि उपदेश से भी कहीं

अधिक ज्ञानमय होता था। उन्होंने वहीं से देखा दतिया का सेठ नौगरैया शिवालय में देवाधिदेव महादेव पर पंचाक्षर मंत्रोच्चारण करते हुए जल चढ़ा रहा है। आपने गम्भीर वाणी में कहा- ''अरे यह कौन है जो शिव पर ठण्डा जल चढ़ा रहा है? आज सुबह से ही ठण्डी हवा चल रही है''। यह वचन श्रवण करते ही वह भक्त पास आकर गिड़गिड़ाकर बोला- ''हे सर्वलोक प्रजापति, मैं ही भगवान् पर जल चढ़ा रहा था।'' श्री प्रभु ने कहा- क्या तुम्हें मालूम नहीं कि साकार उपासना में इष्ट के प्रति हमें वह उपचार और व्यवहार करना चाहिए जो स्वयं को अत्यधिक प्रिय हो। किन्तु तुम भगवान् पर सर्दी में ठण्डा जल चढ़ा रहे हो। भक्त ने कहा- ''सरकार भूल हो गई''। आपने उसका उत्साह वर्धन करते कहा- तुम थोड़ा गर्म जल का प्रयोग क्यों नहीं करते ? भक्त में मानो जान आ गयी और वह प्रसन्नता पूर्वक प्रणाम कर चला गया। वहाँ बैठे भक्त कहने लगे- श्री महाराज आपने बहुत अच्छा ज्ञान दिया। साकारोपासना का कैसा गम्भीर सूत्र आपने मनोरंजन करते हुए भक्तजनों को प्रदान किया। इस भक्त के चले जाने के पश्चात् आप हँस पड़े और बैठे हुए लोगों से कहा- ''जिसके शीश से गंगा का उद्गम होता है उसके ही शीश पर भक्तगण निरन्तर जलाभिषेक कर रहे हैं।'' बैठे भक्तजन यह बात सुनकर बहुत आनन्दित हुए। और कहने लगे ''हाँ-हाँ, महाराज यह तो आपने ज्ञान की पराकाष्ठा ही कर दी। जब उनमें से भी कुछ भक्त उठकर चले गए तो आपने कहा- क्या कभी किसी के सिर से गंगा निकली है? बचे हुए लोगों ने एक ही प्रश्न के तीन सटीक दृष्टिकोण सुनकर घबराते हुए उत्तर दिया। ''नहीं'', प्रभु ! गंगा तो हिमालय से निकलती है किसी के सिर से कैसे निकल सकती है। इस पर मुस्कराते हुए श्री स्वामी जी ने समझाया, ''गंगा की धारा तो ज्ञान का प्रतीक है जिस प्रकार ज्ञान का वर्ण श्वेत है उसी प्रकार गंगाजल भी श्वेत, स्वच्छ एवं निर्मल है। ज्ञान का स्थान मस्तिष्क है। अतएव ज्ञान के प्रवाह को

मस्तिष्क से निकलती हुई जलधारा का प्रतीक बनाया गया है। जिस प्रकार ज्ञान से व्यक्ति पवित्र हो जाता है, उसी प्रकार उस ज्ञानरूपी धारा का प्रतीक पवित्र गंगा के जल से भी मनुष्य पवित्र होता है।'' जब कुछ और लोग चले गए तब श्री प्रभु ने इस पर रहस्य पूर्ण प्रकाश डाला। आपने कहा कि बाक़ी सब देव हैं केवल शिव ही महादेव कहलाते हैं और वे इसलिए महादेव कहलाते हैं कि उनके पास उर्ध्व एवं अधः दोनों कुण्डलिनियाँ है। जबकि अन्य देवताओं के पास केवल एक है। माता पार्वती अधः कुण्डलिनि का प्रतीक भगवान शिव के वामांग में विराजती हैं एवं ज्ञान का प्रतीक गंगा भगवान् के उर्ध्व प्रदेश मस्तिष्क से निकलकर प्रवाहमान है। इसलिए शिव शंकर महादेव कहलाते हैं। इस प्रकार अपने भक्तों को ज्ञान का अमृतपान कराया। जो व्यक्ति जैसी योग्यता का था उसको वैसा ही उपदेश प्राप्त हुआ। इसी प्रसंग में आप हर व्यक्ति से यह भी पूछ रहे थे कि उसने शिवरात्रि का व्रत रखा है या नहीं ? यदि वह व्यक्ति नहीं कहता तो उसे इस पर्व की महिमा बताते हुए व्रत रखने का उपदेश देते। उस समय आपके एक भक्त डॉ. योगेश मिश्रा जो कभी व्रत नहीं रखते थे वहाँ बैठे हुए डर गए कि कहीं मुझसे व्रत रखने को न कह दें। इसलिए वे भक्तों द्वारा बाँटे जा रहे प्रसाद को अधिक से अधिक खा रहे थे कि कहीं भूखा न रहना पड़े। लेकिन हे भूतात्मा, परमात्मा, आप जब स्नान के लिए जाने लगे तो उस भक्त को बुलाकर कहा तुम तो अपना भोजन पाने के लिए समय से आ जाना। यदि ''भूखे रहने से ही शिव मिल जाता तो भारतवर्ष की आधी जनता को मिल गया होता।'' वह भक्तस्तब्ध रह गया। आपने उसके हृदय की बात को जान ही लिया अपितु उसका समाधान भी कर दिया। कुछ घटनाएँ देखने में तो साधारण लगती हैं परन्तु उनका अर्थ बहुत गंभीर होता है।'' दूसरों को बड़े-बड़े ऊँचे-ऊँचे उत्तम से उत्तम उपदेश करने वाले तो बहुत चतुर पंडित साधु मिल जाएँगे किन्तु जो एकदम स्वभाव को

ही पलट दे ऐसे पुरुष लाखों में भी दुर्लभ है, कही करोड़ों में कोई एक ऐसे पुरुष मिलते हैं। एक दिन आप दोपहर को सर्दियों के मौसम में बाहर बरामदे में विराजे थे। एक भक्त लच्छीराम आपके चरणों के पास बैठकर वार्तालाप करने लगा। उसी समय एक वृद्ध व्यक्ति वहाँ आया तथा बरामदे के नीचे चौक में श्री चरणों के सामने आकर बैठ गया। अचानक आपने लच्छीराम से पूछा- ''क्या तुम इस बूढ़े व्यक्ति को जानते हो जो नीचे बैठा है ? लच्छीराम ने उत्तर दिया- हाँ महाराज ! यह तो मेरे पिता हैं। उत्तर सुनकर महाराज अप्रसन्न मुद्रा में बोले, तुमको शर्म नहीं आती बूढ़ा बाप नीचे बैठा है और तुम ऊपर बैठे हो। तुमको मर्यादा का पालन करना नहीं आता ? लच्छीराम यह सुनकर बहुत लज्जित हुआ। श्री प्रभु ने आगे कहा- हिन्दू जाति का जितना पतन हुआ है उतना किसी जाति का नहीं हुआ और यदि यह पतन इसी तरह होता रहा तो हिन्दू अपने देश में ही समाप्त हो जाएँगे। इसलिए अत्यन्त सावधानी से रहने की आवश्यकता है। अपनी परम्पराओं और धर्म का अवश्य पालन करना चाहिए। देश की रक्षा और प्रगति में धर्म भी एक आवश्यक अंग होता है। साधारण से साधारण बातों को व्यर्थ मत समझो, उसी से सीख लो। श्री लच्छीराम को ऐसा महसूस हुआ कि भगवान् प्रभु उससे कह रहे हैं कि अब तुम यहाँ के रंग में रंग जाओ और हुआ भी ऐसा ही। यह अनहोनी देखकर दतिया निवासियों और सत्यप्रकाश आदि अनेकों भक्तों ने विचार किया कि, वशिष्ठ गुरु ने राम को राम ही बनाया। इसमें क्या बड़ी बात हुई वे तो अवतार रूप में ही आए थे। किन्तु रावण को राम बनाना हे समर्थ ! आपके लिए साधारण सी बात है। हे परमपुरुष ! आपका जीवन गम्भीरता से भरपूर और रहस्य रूप आनन्द से भरपूर है। रात्रिकाल में आप अपने पास एकाध सेवक को ही रहने देते थे। इनमें सर्वश्री महेश तिवारी, श्रीकान्त सक्सेना, मुन्ना पाण्डेय, हरगोविन्द गोस्वामी उर्फ बड़े, अशोक पाण्डेय और भोलानाथ सक्सेना तथा

साधनारत बदनसिंह प्रमुख हैं। भोलानाथ दिन में नगरपालिका, दतिया के कार्यालय में कार्य करते और अधिकांशतः श्री चरणों के निकट ही सेवा हेतु शयन करते थे। सेवक भोलानाथ एक रात्रि श्री महाराज के आसन के निकट बरामदे में लेट रहा था और श्री स्वामी जी महाराज के सोने वाले कमरे के दरवाज़े से एक डण्डा (लाठ का टुकड़ा) इस प्रकार लगा दिया था कि कोई उस कक्ष में प्रवेश न कर सके और प्रभु की नींद में भङ्ग न डाल सके। अर्ध रात्रि के लगभग एक बजे उसने अपनी खुली आँखों से जागृत दशा में देखा कि पूर्व दिशा में आकाश में एक प्रकाश का गोला उदित हो गया है और वह धीरे-धीरे आश्रम की ओर बढ़ रहा है। वह गोलाकार प्रकाश हरिद्राकुण्ड के निकट आकाश से उतर कर पृथ्वी पर आ गया और फिर क्षणमात्र में ही एक बहुत लम्बे क़द वाले व्यक्ति के रूप में बदल कर उस बरामदे की ओर आने लगा। उस व्यक्ति का शरीर ऐसा मालूम दे रहा था मानो उसके अन्दर फुलझड़ी जल रही हो और बड़ा सुहावना प्रकाश झर रहा हो। जैसे-जैसे वह बरामदे की ओर आता गया उसका आकार छोटा होता गया। बाहर के चौक में टीन के निकट आकर उसने सामान्य मनुष्य का रूप धारण कर लिया। भक्त श्री भोलानाथ को इस विचित्र दृश्य को देखकर कोई भय नहीं लगा। परन्तु उसके शरीर के अङ्ग-प्रत्यङ्ग एक बन्धन में बँध गए, हिल-डुल भी नहीं सकते थे। वाणी भी बन्द हो गई, आँखें पथरा गई और उस मायापूर्ण दृश्य को वह एकटक देखता रहा। परन्तु मानसिक रूप से होश में रहा। इसके बाद वही आदमी ऊपर चढ़कर श्री सद्गुरु देव के कक्ष के दरवाज़े पर आकर खड़ा हो गया। परन्तु द्वार में डण्डा अड़ा रहने से अंदर प्रवेश नहीं कर सका। उसने उसी स्थान से बैठकर श्री स्वामीजी को प्रणाम किया और वापस बाहर के चौक में जाकर लुप्त हो गया है। प्रातः भोलानाथ यह घटना श्री महाराज के श्री चरणों में निवेदन कर दी। भोलाराम श्री स्वामीजी ने भक्त भोला को रहस्य बताया "यह

स्थान तो शिव का है और यहाँ तो भूलोकवासी ही क्या लोकलोकान्तरों से भी दिव्यात्माएँ विचरण करती हुई आती हैं। यहाँ सोने वाले सेवकों को चाहिए कि रात्रि में किसी भी तरह दरवाज़े और मार्ग को रोककर न सोया करें। ऐसा करने से वे कक्ष में प्रवेश नहीं कर वापस हो जाते हैं, उन्हें कष्ट होता है। ''श्री स्वामीजी के इस आदेश का पालन भक्तलोग करने लगे। एक अन्य रात्रि को पवित्र आत्मा पुनः आई और इस समय श्री महाराज के कक्ष में प्रवेश न कर भगवती पीताम्बरा के मन्दिर में समस्त खिड़कियाँ बन्द होने के बावजूद भी अन्दर चली गई। उसके प्रवेश करते ही माई के मन्दिर में जलने वाली बत्ती बुझ गई। थोड़े समय बाद ही वह आत्मा मन्दिर से बाहर निकलकर चली गई। उसके बाहर निकलते ही मन्दिर की बत्ती पुनः जलने लगी। इस प्रकार की विलक्षण आत्माओं का आवागमन रात्रि के समय में श्री महाराज के पास प्रायः बना ही रहता था जिसको वहाँ सोने वाले प्रायः सभी सेवकों ने कभी न कभी देखा ही था। श्री स्वामीजी महाराज के शिष्य, बदनसिंह ने निरन्तर पाँच वर्ष तक श्री चरणों में रहकर साधना की। वे भी पूरी रात श्री महाराज और पीताम्बरा जी के मन्दिर के सामने बने बरामदे में ही जागृत रहकर साधना करते रहते थे। रात्रि में कई बार अपने कक्ष से बाहर निकलकर बरामदे में रखे मूढ़े पर श्री स्वामी जी बैठ जाते और अपने शिष्यों को निर्देश देते। कभी-कभी वे रात्रि में ही बड़ी बड़ी रहस्यात्मक बातें और कथाएँ भी सुनाते रहते। इनको सुनने के लिए वहाँ सोने वाले भी कभी-कभी जाग जाते थे। भक्त इंजीनियर बदनसिंह ने भी एक बार दिव्यात्मा के आगमन की घटना को देखा। उन्होंने देखा कि आकाश मार्ग से एक अद्‌भुत विमान आकर आश्रम के प्राङ्गण में उतरा और उसमें से एक महात्मा बाहर निकलकर श्री महाराज के कक्ष में सीधे चले गए। उस रात्रि दतिया में आश्रम के ही एक सेवक के यहाँ किसी का विवाहोत्सव था। अतः रात्रि को सोने वाले सेवक भक्त वहीं गए

हुए थे। अर्धरात्रि के लगभग वे महात्मा पधारे। जिस समय यह सब दृश्य बदनसिंह ने देखा तो उसका शरीर अचल हो गया और वे कुछ बोल भी नहीं सके। उसका ज़बरदस्त स्तम्भन हो गया। वह केवल नेत्रों से ही समस्त घटना देखते रहे। उसने देखा कि उन आने वाले महात्मा का चेहरा, दाढ़ी और केश आदि योगिराज महात्मा अरविन्दघोष से मिलता था। लगभग पन्द्रह मिनट बाद वे महात्मा श्री स्वामीजी के कक्ष से बाहर निकल कर उसी विमान द्वारा आकाश की ओर उड़ गए। उन महात्मा के चले जाने के तुरन्त बाद ही श्री स्वामीजी महाराज अपने कक्ष से बाहर निकल कर विराज गए और बदनसिंह भी शरीर की जकड़न से मुक्त हो गया। तभी विवाहोत्सव में जाने वाले सेवक भी आश्रम में वापस आ गए। सेवकों के समक्ष ही बदनसिंह ने इस घटना का वृतान्त श्री चरणों में उसी समय निवेदन किया तो श्री प्रभु ने कहा कि- जिन महात्माओं से अन्तरङ्ग सम्बन्ध होते हैं वे शंकासमाधान हेतु आते रहते हैं। एक बार भानुपुरा पीठ निवृत्तमान शंकराचार्य श्री सत्यमित्रानन्द ''शंकराचार्य जयन्ती के अवसर पर'' श्री स्वामीजी के दर्शनों के लिए श्री पीताम्बरा पीठ, दतिया पधारे। यह उनका प्रथम आगमन था। अन्दर बगिया में पूजयपाद श्री स्वामीजी महाराज विराजे थे। शंकराचार्यों को धर्मगुरु होने के नाते वही सम्मान देते थे जो एक हिन्दू को देना चाहिए क्योंकि आपका एक कार्य मर्यादाओं की पुनर्स्थापना करना भी था। जब शंकराचार्य श्री सत्यमित्रानन्द जी आपके पास आए तो श्री प्रभु ने एक आसन (कुर्सी) उनके लिए भी पहले से ही रखवा दी। शंकराचार्य होने के कारण श्री सत्यमित्रानन्द किसी के भी सामने शीश नहीं झुकाते थे। उस समय बगिया से कुछ साधकों के अतिरिक्त सभी को हटा दिया गया था मात्र पाँच मिनट तक श्री सत्यमित्रानन्द जी आप से वार्तालाप करते रहे और अचानक आसन से उठकर खड़े होकर कहने लगे- आपके सामने मैं कुर्सी पर बैठने के योग्य नहीं हूँ, मैं तो ज़मीन पर ही

बैठूँगा''। यह निवेदन करते हुए वे ज़मीन पर एक सामान्य व्यक्ति की भाँति ही बैठ गए। कुछ और

बैठूँगा''। यह निवेदन करते हुए वे ज़मीन पर एक सामान्य व्यक्ति की भाँति ही बैठ गए। कुछ और जिज्ञासाएँ श्री प्रभु को निवेदन की और उनका समाधान प्राप्त कर अन्त में एक निवेदन और करने लगे। ''प्रभो ! मैं ईश्वर के दर्शन करना चाहता हूँ, मुझ पर कृपा कीजिए। शंकराचार्य जी की प्रार्थना सुनकर आपने उन्हें एक मन्त्र दिया और कहा कि इसका जप करो। मन्त्र ग्रहण कर श्री सत्यमित्रानन्द जी आपके समक्ष उसी प्रकार नतमस्तक हुए जिस भाँति आदि शंकराचार्य के समक्ष उनके श्री तोटकाचार्य आदि चारों शिष्य शंकराचार्य बनने के पश्चात् भी नतमस्तक होते थे। मन्त्रदीक्षा का प्रसाद लेने के पश्चात् श्री सत्यमित्रानन्द जी श्री प्रभु को प्रणाम करते हुए उठकर बाहर चले आए और बाहर आकर कहने लगे, ''मुझे तो आजतक चरणस्पर्श कराने का ही अनुभव था, गुरुस्थान के अतिरिक्त कोई स्थान ऐसा नहीं मिला जहाँ मैं भी सिर झुका सकता, परन्तु यहाँ आकर आज ही मुझे मालूम हुआ कि मुझे भी कहीं झुकना पड़ा। इसके बाद श्री स्वामीजी के द्वारा दिए गए मन्त्र का जप करते समय उसी रात्रि वनखण्डेश्वर शिव मन्दिर में ईश्वर के उन्हें दर्शन हुए। एक दिन बृजनन्दन और ललिता प्रसाद नाम के दो किशोर प्रातः काल में आश्रम पहुँचे तो उन्होंने देखा कि श्री स्वामीजी तो प्रातः कालीन कृत्य के लिए जङ्गल गए हैं। उनमें से ज्येष्ठ, कुछ बड़ी उम्र के वृजनन्दन ने कनिष्ठ ललिता प्रसाद से कहा, मैं तनिक बगिया में बैठकर बीड़ी पी लेता हूँ, तुम बाहर बैठकर चौकीदारी करो और पूज्यश्री आते दिखाई पड़े तो मुझे संकेत कर देना ताकि मैं बीड़ी को फेंक सकूँ। ललिता प्रसाद ने कहा- ठीक है। ललिता प्रसाद का ध्यान उनको सौंपी गई ज़िम्मेदारी से हट गया और वापस लौटते श्री स्वामीजी को नहीं देख सका। जब प्रभु अति निकट आ गए तो किशोर वृजनन्दन ने ही उन्हें देख लिया और अपराध को छुपाने के लिए बीड़ी फेंक कर भाग गया। बगिया में अन्दर बीड़ी की गन्ध आते देखकर आपने ललिता प्रसाद से पूछा-

क्या तुम यहाँ बीड़ी पी रहे थे ? ललिता प्रसाद ने सच-सच बात निवेदन कर दी कि महाराज ! बीड़ी तो वृजनन्दन पी रहे थे जो आपको देखते ही आँख बचाकर भाग गए हैं। मैं तो केवल चौकीदारी कर रहा था। यह सुनकर पहले तो श्रीनाथ कुछ मुस्कराए और फिर गम्भीर होकर बोले, ''कैसे चौकीदार हो तुम''? इस एक वाक्य ने ही ललिता प्रसाद को अत्यन्त लज्जित करते हुए सदैव अपने कर्तव्य की ओर सजग रहने की सीख दी। यही नहीं अपितु आपने स्वयं इन्हें संस्कृत पढ़ाकर शास्त्री और आचार्य बना दिया, सम्मान दिलाया। हे जगन्नाथ ! आप सब पर दया करने वाले हैं। और समाज में आई बुराइयों को निकालने के लिए मार्गदर्शन करते रहते हैं। एक बार आश्रम के ही शास्त्रियों में सबसे तरुण शास्त्री विष्णुकान्त मुड़िया व उनकी धर्मपत्नी अपने आपस में सदैव होने वाले कलह का न्याय कराने आए। उन्होंने न्यायविद् प्रभु को प्रणाम किया और पति ने कहा कि उसकी पत्नी उससे फ़जूल का झगड़ा करती है। यह सुनकर पत्नी भी श्री कैलाशनाथ से निवेदन करने लगी- मैं नहीं, ये खुद ही मुझ से अकारण क्लेश करते और झगड़ते रहते हैं। फ़ैसला कर दीजिए कि कौन ग़लती पर है। हे नाथ ! आपने दम्पती की ओर ग़ौर से देखा और पूछा- अच्छा ? तो मेरा निर्णय मानोगे ? दम्पती बोले- हाँ महाराज ! अवश्य मानेंगे। आपने कहा ठीक है, लेकिन कोई गवाह भी तो होना चाहिए। अतः श्री मुड़िया की माता जी को गवाह बनाया गया। श्री प्रभु ने निर्णय सुनाया- ''मेरा निर्णय है कि आज से तुम लोग झगड़ा नहीं करोगे''। वहाँ पर उपस्थित भक्त इस सरल निर्णय को देखकर बड़े प्रसन्न हुए और सोचने लगे कि श्री चरणों की ओर से नियंत्रण लग जाने से अब झगड़ा नहीं हो पाएगा। आपने दोनों को समझाते हुए कहा- क्रोध और लड़ाई-झगड़े से विवेक नष्ट होता है और अनिष्ट होता है। इस मानव जीवन में विवेक से संसार के धर्म का पालन करते हुए जीवन के प्रमुख लक्ष्य, परमपद को प्राप्त करना चाहिए।

से संसार के धर्म का पालन करते हुए जीवन के प्रमुख लक्ष्य, परमपद को प्राप्त करना चाहिए।

एक-दूसरे को सहयोग करना चाहिए। एक दूसरे को सहयोग देने से संसार में बहुत से कार्य सध जाते हैं, बड़े-बड़े काम सहयोग से सम्भव हो जाते हैं। हनुमान के सहयोग से रावण मारा गया था। अतः एक समान ज्ञानोपार्जन करो, समानता के साथ एक दूसरे से मिलो। अपने मन के संस्कारों को समान करो। पूर्व के देवों ने भी इसी प्रकार से एक्य समझकर संगठन किया था। ''संगठन में ही शक्ति है।'' इसलिए अपने-अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना चाहिए। हे महात्मन् ! आपसे बढ़कर कौन समाज सुधारक है? हे ज्ञानचक्षु ! आपकी अलौकिक लीलाओं का पार कौन पा सकता है ? आप दिक् और काल से परे हैं। प्रकृति स्वयं नतमस्तक होकर आपकी इच्छानुकूल चलने पर अपने सौभाग्य को सराहती हैं। अप्रत्यक्ष रूप में ही नहीं अपितु प्रत्यक्ष रूप से भी हितकारी बातें आप स्पष्ट रूप में बताते रहे। एक दिन एक जैन यात्री आया और प्रणाम करने के पश्चात् स्नान करने को जाता हुआ बोला- ''मेरा झोला यहाँ रखा है।'' आपने तुरन्त कहा- ''जैन साधु तो त्याग की पराकाष्ठा होते हैं। यहाँ तक कि लंगोटी भी छोड़ देते हैं। तुम्हारा मोह क्या इस झोले से भी नहीं छूटता ?'' उस साधु का अज्ञान तत्काल नष्ट हो गया। इस प्रकार हे अविकारी महात्मन् आपने छोटी-छोटी बातों में जीवन को बदल देने वाले सूत्रों को जन्म दिया और यह कार्यक्रम अनवरत रूप से चलता ही रहा। हे सद्गुरुनाथ ! लीलाएँ करना आपका स्वभाव है। इसीलिए आपको लीलामय प्रभु कहा जाता है। कितने ही भक्त और सेवक, अबोध बच्चे की स्थिति में आपके पास आए और आपकी कृपा से उच्च शिक्षा प्राप्त कर गए। सबसे पहली शिक्षा उनको श्री परमात्मा में प्रगाढ़ प्रेम एवं अटूट श्रद्धा रखने की मिली। जब हरगोविन्द गोस्वामी जिसको सबलोग बड़े कहकर भी पुकारते, श्री चरणों में आए तब से उन्होंने पढ़ाई-लिखाई को तिलान्जलि देकर प्रभु की सेवा में ही अपना पूर्ण ध्यान लगा दिया। कभी-कभी आप 'बड़े' से पूछते-

पढ़ाई-लिखाई क्यों नहीं करते ? तो उत्तर मिलता इसकी आवश्यता ही क्या है ? हे प्रतिभावान् ईश्वर ! तब आप बड़ी प्रसन्न मुद्रा में कहते- हाँ जो वनखण्डी के स्वामी के पास आता है, उसे पढ़ने की क्या आवश्यकता, वह तो बिना पढ़े ही पास हो जाता है। परीक्षा में जाने के पूर्व 'बड़े' आग्रहपूर्वक आप से चार-पाँच प्रश्नों पर निशान लगवाता और उन्हीं को याद कर वह परीक्षा में उत्तीर्ण होता रहा। हे महामहिम ! हे नारायण ! आप कहते थे कि साधुओं को चिन्ता से मुक्त होते हुए भी सनातन हितों के प्रति सचेष्ट रहना चाहिए। हे ज्ञानसिन्धो ! आप सदैव बताया करते थे कि ज्ञान बंदरी है और भक्ति बिलाई है। जिस प्रकार बिलाई अपने बच्चों को मुँह में दबाकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाती है जिसमें सम्पूर्ण ज़िम्मेदारी बिलाई खुद ही सम्भालती है और बच्चों को रोने के अतिरिक्त और कुछ नहीं करना पड़ता। ठीक उसी प्रकार भक्त की हिफ़ाज़त, पालन-पोषण आदि सभी काम इष्ट की ही ज़िम्मेदारी होती है। इसके विपरीत बन्दरी का बच्चा अपने पैरों के बल बंदरी के वक्षः स्थल से चिपका रहता है। उसकी रक्षा का भार स्वयं बच्चे पर ही रहता है। इसीलिए ज्ञानमार्ग अत्यन्त दुर्लभ बताया गया है। आपके पास परीक्षाकाल में विद्यार्थियों की भीड़ ज़्यादा हो जाया करती थी। हे पशुपते ! हे प्रज्ञाघन ! आपका व्यवहार बालकों में बालकों जैसा, विद्यार्थियों में सहपाठी जैसा और विद्वानों में सदा महापाण्डित्यपूर्ण परन्तु अत्यन्त मृदु रहता। आप योगियों में महायोगी, गुरुओं में देशिक प्रवर और ज्ञानियों में महाज्ञानी थे। बड़े-बड़े विद्वान् महामहोपाध्याय गिरधर शर्मा चतुर्वेदी, श्री करपात्री जी महाराज, ज्योतिर्मठ के जगदगुरु शंकराचार्य श्री स्वरूपानन्द जी महाराज, निवृतमान शंकराचार्य भानुपुरा पीठ श्री सत्यमित्रानन्द जी और अखण्डानन्द सरस्वती जी आदि आदि न जाने कितने आपके ज्ञानरूप को प्रणाम करके धन्य भाग्य होते रहे। "बालक से बालक बने, युवक युवक के साथ। वृद्धों के संग वृद्ध

हैं, सब रूपों में नाथ।।" हे महाराजाधिराज ! आपके योग, ऐश्वर्य, प्रज्ञा तथा अनुग्रह की अनुभूति वृन्दावन नगरी में एक ब्रह्मचारी ने जिस रूप में की वह आपकी रहस्यमयी लीला आपकी कृपा और सामर्थ्य का उद्घाटन करती है। आप सर्व शक्तिमान् हैं। हे यदुनाथ ! आपकी कृपा-कटाक्ष से सन्त जीवन धन्य हो गया। आपके द्वारा उस ब्रह्मचारी को स्पर्श करते ही वह नाचने लगा, रोने लगा और कम्पायमान होकर बैठ गया। ऐसा प्रतीत हुआ कि उसकी कुण्डलिनी शक्तिपात के कारण जागृत हो गई। अनेकों जन्म भोगने के पश्चात् भी जो आनन्द अलभ्य रहता है, वह चिरानन्द आपने क्षणमात्र में उस योगी को दे दिया। तभी वह योगी न जाने कहाँ चला गया। हे प्रभो ! आप न जाने किसको किस क्षण क्या प्रदान करते रहते हैं, यह जान पाना कठिन ही नहीं पूरी तरह असम्भव है। हे नाथ ! आपकी विलक्षण देन और राष्ट्रीय धरोहर, "सिद्धान्त रहस्य" नामक ग्रंथ गागर में सागर है। हे बृजभूषण ! आप अनन्त काल से भक्तों की, सेवकों की, दुष्ट और पापियों की, सबकी आर्त पुकार सुनते आ रहे हैं। हे नारायण ! हम सब भी आपके ही आश्रम पर पड़े हुए हैं। आश्रम में एक दिन सुबह से ही अशान्ति पूर्वक गतिविधियाँ चल रहीं थी। सरस्वती मन्दिर के कार्यालय का किसी चोर ने ताला तोड़कर कुछ वस्तुएँ चोरी कर ली थी। मन्दिर से भी जगदम्बा श्री पीताम्बरा देवी का स्वर्ण किरीट आदि आभूषण भी चोरी हो गए थे। हे परंतप ! आप निर्विकार और शान्त भाव से अपने मूढ़े पर बैठे तमाशा देखते रहे। सेवक मोतीलाल मास्टर ने निवेदन किया- पुलिस में रिपोर्ट करनी होगी। इस पर प्रभु ने कुछ नाराज़गी के स्वर में कहा- तुम कैसे कह सकते हो कि चोरी हो गई। ईश्वर तो चराचर में व्याप्त है। साहूकार भी वही है, और चोर भी वही है। मुझे इन वस्तुओं से कोई प्रयोजन नहीं है। इसलिए इन बातों में आने को मुझे बाध्य मत करो। सन्तों का स्वभाव नवनीत से भी अधिक कोमल होता है, सर्वज्ञ होने पर भी वे किसी

को दुःखी नहीं देख सकते। इसलिए ऐसा कहते हुए उठकर बगिया में चले गए। भक्तों ने पुलिस बुलवा ली, पुलिस ने तहक़ीक़ात की ओर रिपोर्ट लिखकर चली गई। पहले भी दो-तीन बार चोरी हो चुकी थी। एक बार चोर पकड़ा गया तो आपकी कृपा से बच गया था। बाद में उसने चोरी करनी भी छोड़ दी। इससे पुलिस वाले भी परेशान थे कि बड़ी मुश्किल से एक चोर पकड़ा और उसे भी तुम्हारे स्वामीजी ने छुड़वा दिया था। हम लोग फिर चोर पकड़ेंगे तो वे उसी प्रकार फिर उसे छुड़वा देंगे। तीसरे दिन लोग निवेदन करने लगे कि हे रसनिधि ! चोर अभी पकड़ा नहीं गया, अगर आप अपने श्रीमुख से एक बार भी कह दें कि पकड़ा जाएगा तो हम निश्चिन्त हो जाएँ। आपने नाराज़गी के स्वर में कहा- माता अपने आभूषण किसी पुत्र को दे दें, तो तुम लोगों को क्यों परेशानी हो रही है। यहाँ तुम लोग भजन-पूजन करने आते हो तो उसी से सम्बन्ध रखो। अपने लक्ष्य का ही हमेशा ध्यान रखना चाहिए। अनेक दासों ने श्री प्रभू के मुखारविन्द से एक कथा सुनी थी, श्रोतागण भी उसे सुनें- एक व्यापारी था, उसने ईसा का शिष्य बनना चाहा। ईसा ने कहा- धन सम्पत्ति बाँट दो तब आना। व्यापारी ने उत्तर दिया- यह नहीं हो सकेगा। इस पर ईसा ने कहा- सुई के छेद में से चाहे ऊँट चला जाय, लेकिन धनवान् को ईश्वर के दरबार में प्रवेश नहीं मिलेगा। सन्त तो निरासक्त रहकर सब पर समान भाव से कृपा करते रहते हैं। क्षमादान ही प्रभु का स्वभाव है। इसीलिए विद्वान उन्हें क्षमी भी कहते हैं। विश्राम के बाद श्री प्रभु ने अपने भक्तों से कहा- साधना मार्ग में कंचन, कामिनी और प्रतिष्ठा की लालसा सबसे बड़े विघ्न हैं। साधकों को सहन-शक्ति बढ़ाना चाहिए। इसी से विवेक और सद्विचार की स्वतंत्रता प्राप्त होती है। जो साधक सिद्धियों के चक्कर में फँस जाता है, उसका पतन हो जाता है। श्री प्रभु ने आगे कहा- उरई के एक वकील साहब एक महान् परिश्रमी और निष्ठावान साधक थे, लेकिन सिद्धि और धन के लालच में उनका

अधः पतन हो गया। अतः तुम लोगों को आश्रम में आने के बाद भगवत् चिन्तन ही करना चाहिए। विशेषकर गृहस्थ को प्रमाद, आलस्य और निन्दा से बचना चाहिए। यह मनुष्य शरीर बड़े भाग्य से मिलता है। यह देवताओं के लिए भी दुर्लभ है। सांसारिक बातें तो होती ही रहती हैं। पहले भी कुछ साधकों ने कहा था- हम तो महाराज जी के कारण स्थान पर आते हैं। जब यह चर्चा आपके कानों तक पहुँची, तो श्री प्रभु ने बड़े सहज भाव से कहा- भाई हमने तो सब कुछ छोड़ा है, हमारा अपना कुछ भी नहीं, जिन्हें साधना से लगाव है, माई से प्रेम है, वही यहाँ आया करें, मुझे तो उनकी आवश्यकता नहीं है। अब हमको अपना काम है, कहकर श्री प्रभु अन्दर चले गए। श्री सद्गुरुसमर्थ की आज्ञा का उल्लंघन कर उरई वाले वकील साहब लोभ लालच में पड़ गए थे। इसलिए अधोगति को प्राप्त हुए। झाँसी के एक कर्मकाण्डी व्यक्ति श्री दासीगुरु श्री शिवकुमार जो लोभ लालच में तो नहीं फँसे, किन्तु सिद्धि प्राप्ति के अहंकार के कारण विपत्ति में फँस गए। क्रमशः कथा सुनें- वकील साहब की कथा सुनिए- हे सर्वसाक्षीपरात्पर गुरु ! एक बार आपने कृपा करके बटुक भैरव की सिद्धि उरई वाले वकील साहब को बख़्श दी। वकील साहब बहुत प्रसन्न हुए और उरई आकर रहने लगे। सिद्धि प्राप्त होने के कारण वकील साहब को कुछ अभिमान ने आ घेरा और घर पर रहकर पाखण्ड करने लगे। आने-जाने वालों को सट्टे का नम्बर वग़ैरह बताने लगे। हे भूतभावन ! आपने करूणावश होकर वकील साहब को दतिया बुलाकर समझाया कि सिद्धि का दुरूपयोग नहीं करना चाहिए। श्री गुरुदेव ने कहा- संसार के पचड़े में मत फँसो, और आध्यात्म के मार्ग में आगे बढ़ने का प्रयत्न करो। परन्तु जब अहंकाररूपी दुर्भाग्य आता है तो सद्बुद्धि का नाश हो जाता है। वकील साहब ने अपना कार्य जारी रखा। एक दिन जिस समय वकील साहब साधना में रत थे, आप वहाँ प्रगट हो गए, और फूँक मारकर अखण्ड दीपक बुझा दिया तथा वकील साहब से कहा- तुम इस

पाखण्ड को बंद कर दो अन्यथा कुल का नाश हो जाएगा। सन्त-महात्मा कुमार्ग में जाने वालों को सन्मार्ग दिखाते हैं। इतना होने पर भी वकील साहब को समझ नहीं आई। और एक दिन उनकी शक्ति (सिद्धि) चली गई तो पछतावा करते और रोते-रोते श्री प्रभु के चरणों में जा पहुँचे। हे प्रभो ! आपने कहा- गई हुई शक्ति वापस नहीं आती है। शक्ति के दुरुपयोग के कारण वकील साहब को तीन भूतों (जिन्नात) ने बहुत परेशान किया। घर की सब सम्पत्ति नष्ट हो गई और अति दीन अवस्था में इन्होंने शरीर छोड़ दिया। जो शिष्य अपने गुरु की आज्ञा का पालन नहीं करता है, उसका विनाश होता है। गुरु से कभी झूठ नहीं बोलना चाहिए। झाँसी के श्री दासीगुरु बचपन से ही सरल ह्रदय और धार्मिक प्रवृत्ति के थे और युवावस्था में ही दतिया श्री प्रभु की शरण में आ गए। श्री दासी जी ने अपनी सेवा और साधना से देव देव श्री स्वामी जी महाराज को प्रसन्न कर लिया। श्री प्रभु ने इनको भी भगवान् बटुक भैरव की सिद्धि बख़्श दी। दासी जी को आश्रम में रहते हुए और प्रभु की सेवा करते वर्षों व्यतीत हो गए। एक दिन श्री प्रभु ने पूछा- तुमको इतना समय यहाँ रहते हो गया, क्या अपने परिवार की तुम्हें याद आती है ? दासीगुरु ने सच्चे ह्रदय से उत्तर दिया' हे समर्थ ! मैं माता का इकलौता पुत्र हूँ, इसलिए माता की याद आती है। श्री प्रभु ने उनको समझाते हुए कहा- मैं तुमसे प्रसन्न हूँ, और तुमने भगवान् बटुक भैरव की कृपा भी प्राप्त की हैं, लेकिन तुम्हारा ह्रदय इतने वर्षों के बाद भी मोह माया में अटका हुआ है, तुम घर जाओ और भगवती स्वरूप अपनी माता की सेवा करके उन्हें प्रसन्न करो। उसी से तुम्हें शान्ति मिलेगी। दासीगुरु झाँसी लौट आए। एक बार दासीगुरु एक विवाह में शामिल होने के लिए (बारात में) एक गाँव में गए। विवाह वाले दिन घनघोर घटा छा गई। और मूसलाधार वर्षा शुरू हो गई। विवाह कार्यक्रम एकदम फीका हो गया। साधक के रूप में इनकी ख्याति हो गई थी, अतः लोगों ने इनको

कार्यक्रम एकदम फीका हो गया। साधक के रूप में इनकी ख्याति हो गई थी, अतः लोगों ने इनको

भड़काया कि आपने बड़ी साधनाएँ की हैं। हम लोग विपत्ति में आ गए हैं। हम तो आपको तब मानेंगें जब यह बारिश रुक जाए। श्री दासीगुरु उनके बहकावे में आ गए और कहा- यह कौन-सी बड़ी बात है। अभी लो। यह कहकर हाथ में जल लेकर संकल्प करके जल आसमान की ओर फेंक दिया। उसी क्षण चमत्कार हुआ घनघोर घटा छायी रही, बिजलियाँ कड़कती रहीं लेकिन एक बूंद भी पानी नहीं गिरा। विवाह निर्विघ्न सम्पन्न हो गया। दासीगुरु की बड़ी-बड़ी तारीफ़ें होने लगीं और ये अपने अहंकार में भूल गए कि काम हो चुका अतः अपना प्रयोग वापस ले लें। ये झाँसी लौट आए। दो दिन बाद ही इनके सर में भयानक पीड़ा हुई। जब भी यह आँख बन्द करते तो एक छोटा बच्चा इनके सर पर आकर चपत मारता। चपत मारने वाली बात इन्होंने किसी को नहीं बताई, बड़े-बड़े डाक्टरों को महानगरों में दिखाया, एक्स-रे लिए, डाक्टरों ने कहा कि सर में बहुत बड़ा फोड़ा हो गया है। इस प्रकार दो वर्ष तक इनका सोना, खाना, पीना कठिन हो गया और बड़ी दुर्दशा में रहे। इनकी माता का रो-रो कर बुरा हाल हो गया। एक दिन इनकी माता ने कहा- तुम दतिया क्यों नहीं जाते। पहले मैं मना करती थी, तो नहीं मानते थे, अब विपत्ति में फँस गए वहीं श्री महाराज की शरण में जाओ। इनको अपनी भूल का एहसास हुआ और ये सीधे दतिया आकर श्री प्रभु के चरणों में गिर गए और सारी आप-बीती सुना दी। हे करूणानिधान ! आपको दासीगुरु की दुर्दशा पर बड़ी दया आयी और एक मन्त्र का जप करने के लिए उन्हें बताया। उस मन्त्र के जपने से तीन दिन में ही ये पूर्ण रूप से विपत्ति से छुटकारा पा गए। श्री प्रभु ने फ़रमाया- विषयी पुरुषों के कहने के अनुसार सिद्धियों का प्रयोग करने से क्षति उठानी पड़ती है। अहंकार का बीज रहने से इनसे अनर्थ होकर योगी का पतन भी हो सकता है। तुम्हारी भावनाएँ अहंकारयुक्त होते हुए भी ख़राब नहीं थी, इसलिए थोड़ी क्षति उठाकर ही बच गए। श्री महाराज ! हम सब आपके

चरणों में बार-बार प्रार्थना करते हैं कि- अपने भक्तों को सुबुद्धि और शक्ति दें जिससे हम आपके वचनों का सत्यरूप से पालन कर सकें। क्योंकि आपके वचन ही मंत्र हैं, आपकी मूर्ति ही ध्येय है और आपकी कृपा ही मोक्ष है। श्री स्वामीजी महाराज की जय। ''श्री स्वामी कथासार'' के इस अध्याय का श्रद्धा और भक्ति पूर्वक श्रवण और पाठ करने से भूत-प्रेत व्याधियों, पारिवारिक क्लेशों की शान्ति होती है और दिव्यात्माओं के प्रत्यक्ष दर्शनों की योग्यता प्राप्त होती है। श्री स्वामीजी महाराज के नाम का स्मरण ही सर्वसुखमय है।

श्री पीताम्बरा माता को सब कुछ अर्पण करें।

।। इति दशम् अध्याय समाप्त।।

।। श्री गणेशाय नमः ।।

श्री स्वामी कथासार

एकादश अध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे निर्मल मुखवाले देव हे अजेय वीर प्रभो ! आप जगत् के स्वामी हैं। आप देवताओं के भी आदि देव है। समस्त संसार आपके चरणों में मस्तक झुकाता है। कोई भी सिंहासन आपके बैठने योग्य नहीं है। आपका कोई नगर नहीं है और राजधानी भी नहीं है। किन्तु हे स्वामी ! आपका दिव्य आसन प्रत्येक प्राणी के हृदय कमल में अवस्थित है। इसी कारण प्रत्येक जीव आपकी कृपामयी करूण दृष्टि से बच नहीं पाता। अपने भक्तों का योगक्षेम कैसे निर्वाह करते हैं ? हे भक्तों इस रहस्य को सब भक्त हृदयंगम करें। श्री प्रभु आज बड़ी प्रसन्न मुद्रा में बाहर विराजे हैं। सर्दी के दिन थे, आपका भक्त-सेवक बादामसिंह यादव जाड़े से बचने के लिए एक कथरी (गुदड़ी) ओढ़े आया और आपको प्रणाम कर बैठ गया। आपने पूछा- यह तुम क्या ओढ़े हो ? मैं तो अधिक सर्दी में एक सूती चादर ओढ़ता हूँ। उसने बड़ी विनम्रता से हाथ जोड़कर कहा- यह तो कथरी है फिर पास खड़े सेवक हीरालाल सिंधी से पूछा कि- यह कथरी क्या होती है ? उसने बताया- फटे पुराने कपड़ों के टुकड़ों को जोड़कर और उसमें रुई भरकर कथरी बनायी जाती है। यह सुनकर आपने तत्काल अपने कुछ पुराने कपड़े लाकर दिए और कहा- हमारे लिए भी एक कथरी बना दो भाई ? यह वार्तालाप हो रहा था कि एक व्यक्ति जो झाँसी पोस्ट आफिस में डाकिए

का काम करता था, वहाँ आया और आपको प्रणाम करके बोला- हे अरिसूदन ! मैं आपकी शरण में आया हूँ, मुझे बचा लीजिए। इस पर आपने नाराज़ होते हुए कहा कि- कैसे-कैसे लोग सुबह-सुबह आ जाते हैं, बात करने का भी तरीक़ा नहीं जानते। आदमी पहले अपना परिचय देता है। दो लोग बातचीत कर रहे हों तो अनावश्यक बीच में बाधा नहीं डालना चाहिए। इतने में सेवक मास्टर ने उस आदमी से जो श्री प्रभु की नाराज़गी देखकर भयभीत हो गया था और रोने लगा था, से कहा- अभी तुम जाओ लेकिन हे दयालु ! उसका रोना देखकर आपने करूणावश पूछा- क्या बात हैं ? कहो, उस व्यक्ति ने दीनतापूर्वक उत्तर दिया- हे अभयदानी ! मैं चोर हूँ और झाँसी पोस्ट आफिस में काम करता हूँ, वहाँ से मैंने कुछ रुपयों का ग़बन किया है। मेरे एक मित्र ने बताया कि एक महात्मा दतिया में रहते हैं और सच बोलने वालों को पसन्द करते हैं, तुम उनकी शरण में जाओ और सब सच-सच बातें उनको बता दो, क्या पता तुम्हारे सच बोलने पर वे प्रसन्न हो जाएँ और तुम बच जाओ। अतः मैं आपकी शरण में आया हूँ। श्री प्रभु ने कहा- क्या चाहते हो ? उस व्यक्ति ने कहा- मुझसे भूल हो गई जिससे मुझे नौकरी से निलम्बित कर दिया गया है। तथा जेल भी अलग से होगी। हे विधाता ! आपने पूछा- कितना रुपया ग़बन किया है ? तब उस व्यक्ति ने स्पष्ट बतया कि कुल अस्सी रुपये है। यह सुनकर श्री प्रभु बहुत हँसे और विनोदपूर्वक कहा कैसा चोर है ? जब चोरी करनी ही थी तो ज़्यादा की करता। ख़ैर, तुम जाओ और चुपचाप दालान के उस कोने में बैठ जाओ। जब तक मैं तुम्हें जाने को न कहूँ तुम वहीं बैठे रहना। वह व्यक्ति निर्दिष्ट स्थान पर जाकर चुपचाप बैठ गया। उसने सत्यप्रिय प्रभु के वचनों का तुरन्त पालन किया। इसी समय आपकी शिष्या, डाक्टर तलवार, बड़ी शीघ्रता में आई और महाराज जी को प्रणाम कर

निवेदन करने लगी कि हे आनन्द बिहारी ! अस्पताल की कुछ समस्याओं को सुलझाने के लिए सी.एम.ओ. व मैट्रेन के इशारे पर मेरी शिकायत सुनने मिनिस्टर महोदय आ रहे हैं। वह घर पर अपनी आठ वर्ष की छोटी भानजी को अकेले ही छोड़कर आई थी। श्री प्रभु ने प्रसन्न होकर कहा- कि हाँ मैंने भी यह सुना है। लेकिन तुम उस कोने में बैठे हुए उस आदमी को देखो। उसने पोस्ट आफिस से अस्सी रुपयों का ग़बन किया है। अब तुम जाओ और अपना कर्तव्य पूरा करो। बेचारी डाक्टर तलवार को यह गोरख धन्धा समझ नहीं आया और वह प्रणाम कर चली गई। शाहों के शाह श्री प्रभु ने उस ग़बन करने वाले व्यक्ति को किस प्रकार दण्ड से मुक्ति दी अब इसकी कथा सुनिए- इसके बाद जो भी व्यक्ति दर्शनों को आता उससे आप कहते देखो ! उस कोने में जो एक आदमी बैठा है, उसने पोस्ट आफिस से अस्सी रुपयों का ग़बन किया है। इस तरह जितने भी लोग आते उनसे यह बात अवश्य कहते रहे। आपके द्वारा लोगों को इस तरह बताया जाने पर वह व्यक्ति लज्जित होते-होते पवित्र हो गया, उसका पश्चात्ताप होता रहा। किन्तु आपकी आज्ञानुसार वह दृढ़ता-पूर्वक वहीं बैठा रहा। संध्या समय आपने उसे कहा- अरे भाई ! माता से अपनी बात कहो; वह मन्दिर में बैठी हैं। वही सबसे बड़ी अदालत है। दण्ड देने या न देने का काम उन्हीं का है। उस व्यक्ति ने चुपचाप माता से अपनी प्रार्थना की और क्षमाशील प्रभु को प्रणाम कर अपने घर चला गया। हे कैलाशपति ! आपके भक्त तो समझ गए थे कि उस पर आपकी पूर्ण कृपा हो गई। एक सप्ताह के अन्दर ही उस व्यक्ति को नौकरी पर बहाल कर दिया गया और उस पर से मुक़दमा भी हटा लिया गया। हे भूतेश ! आपके द्वारा क्षमा और रक्षा करने का ढंग भी बड़ा निराला है। आपके इस रहस्य को समझने में कौन समर्थ है ? इस दण्डयुक्त मुक्ति को कोई विरला ही

समझ सकता है। सत्य व्रतधारी राजा हरिश्चन्द्र की रक्षा करने वाले उन्हीं प्रभु श्री स्वामिवर्य ने असत्य के परित्याग और सत्य के ग्रहण करने पर उस चोरी करने वाले डाकिये की रक्षा कर उसे पवित्र हृदय बना दिया। सम्पूर्ण शक्ति सत्य में ही हैं। जिससे मिट्टी, लकड़ी, पाषाण जैसी असत्य वस्तुएँ भी निश्चित फलों को देने में समर्थ होती हैं, उस सम्पूर्ण सिद्धियों को प्रदान करने वाले सत्य और विश्वास में ही सब भक्तगण आस्था करें। संध्या समय हो गया था। आपकी कथरी (गुदड़ी) बनकर आ गई थी। हे प्रभो ! हे भूतेश्वर ! वह आज भी आपके बिस्तरों में रखी हुई है। इधर आपकी लीला देखिए लड़की रेखा को डाक्टर तलवार घर पर यह कहकर छोड़ गई थी कि वह एक घण्टे में वापस आ जाएगी। उसे घबराने की ज़रूरत नहीं। डा. तलवार को मन्त्री महोदय से शाम तक फुरसत नहीं मिली और शाम होने पर वह अबोध बालिका घबरा गई और बहुत भयभीत होने लगी। सामने उसकी डाक्टर मौसी का एक चित्र दीवार पर लगा हुआ था, आपका स्मरण करती हुई वह उस चित्र को देखने लगी तो एकाएक उसने देखा कि आप उस फोटो में आकर खड़े हो गए और डाक्टर के सर पर हाथ रख दिया। जब डाक्टर घर आई तो बच्ची ने कहा- मौसी तुम्हारी विजय हुई है। बात बिल्कुल ही ठीक थी। मन्त्री महोदय ने डाक्टर साहिबा को निर्दोष पाया, जो भी आपकी शरण में एक बार भी आया उसको सदैव के लिए आपने अभय और पवित्र कर दिया। उन्हीं डाक्टर महोदया शकुन्तला तलवार को एम.बी.बी.एस. (डाक्टर डिग्री) पास करने के बीस वर्ष पश्चात् एम.एस. पास करने की इच्छा हो गई। कार्य बहुत कठिन था और अधिक परिश्रम करने की क्षमता भी उनमें नहीं थी। दतिया आकर दीनभाव से आपसे निवेदन किया कि आपकी कृपा हो तो मैं परीक्षा दे दूँ। अगर सच्चे मन से प्रार्थना हो तो भक्त की विनती कभी खाली नहीं जाती।

श्री प्रभो ! आपने कहा तुम्हारी पुकार माता शीघ्र ही सुनती है और तुम यह बात जानती भी हो, उन्हीं से अब भी पुकार करो। वह अपनी जात वालों की बात जल्दी सुनती है। वह मन्दिर में बैठी हैं। डाक्टर ने पुकार की और श्री प्रभु को प्रणाम करके चली गई। उसको आशा हो गई कि दतिया में सन्त शिरोमणि ने उसकी प्रार्थना सुन ली है। कुछ सयम बाद उसे एक स्वप्न हुआ और ऐसा लगा कि किसी के भारी पदचाप की आवाज़ आ रही है। जब वह आवाज़ पास आ गई तो देखा यह तो स्वयं श्री स्वामीजी ही हैं तथा दोनों हाथों में दो गठरियाँ उठाएँ है। हे जगन्नाथ ! आपने दोनों गठरियों को पास की मेज पर रख दिया और डाक्टर तलवार से कहा- ''देखो'' इन गठरियों को और आपने उसके सामने दोनों गठरियों को खोल दिया। उनमें से दो सुन्दर स्त्रियाँ सुन्दर वेशभूषा पहनकर बाहर निकली। यह दिखाकर आप मुस्कराए तथा अन्तर्ध्यान हो गए। श्री प्रभु की लीला देखिए कि- प्रेक्टिकल परीक्षा के एक दिन पूर्व जो डाक्टर परीक्षक उनकी परीक्षा लेने आने वाले थे, उन्होंने आने में असमर्थता प्रकट की। काफ़ी भागदौड़ के पश्चात् लखनऊ और दिल्ली से वायुयान द्वारा दो परीक्षकों को बुलाया गया। जिस समय डाक्टर परीक्षा स्थल के सामने बरामदें में बैठी थी तब वे दोनों परीक्षक (महिला डाक्टर) उनके सामने से गुजरी तो डा. शकुन्तला तलवार ने बड़े आश्चर्य से देखा कि - दोनों परीक्षक वे ही हैं, जिनको श्री महाराज ने गठरी में बाँधकर उनके स्वप्न में लाकर खड़ा किया था और कहा था- यह तुम्हारी परीक्षक हैं, इन्हें पहचान लो, यह तुम्हारी सहायता करेंगी, वास्तव में वे वहीं थी। परीक्षा में डा. शकुन्तला को सफल घोषित किया गया। वे सीधे दतिया आई और कृतज्ञतावश रोते-रोते श्री प्रभु से कहा- आपने मुझ पर बड़ी कृपा की है, अब मैं यहाँ आश्रम पर एक कमरा बनवाना चाहती हूँ। आपने कहा- कमरा तुम बनवाओ या न बनवाओ, तुम्हारी इच्छा है लेकिन तुमने माँ की लीला खुद देखी है। इसलिए उसका भजन

करके अपने जीवन को सफल बनाओं, तुम इसके योग्य भी हो, अपने को कमजोर समझकर हीन मत बनाओ। परमार्थ मार्ग में वीर बनो। हे सर्वलक्षण लक्षित ! हे कैवल्यपदरूप ! जन्मजन्मान्तर तक अपना सर्वस्व श्री चरणों में न्यौछावर करने पर भी आपकी कृपा बिन्दु के सहस्रांश से भी उऋण नहीं हुआ जा सकता है। सर्दी कड़ाके की पड़ रही थी। प्रातःकाल में हरिद्राकुण्ड के पास धूप में श्री प्रभु विराजे थे। कई भक्तगण भगवान् के दर्शन करके अपने भाग्य को सराह रहे थे। एक भक्त ने नत्थू जोगी की शिकायत की जो मन्त्र जप के लिए कमलगट्टे की माला बनाया करता था। श्री महाराज ने उसे बुलाया और कहा- देखो, यह तुम्हारे विषय में कुछ कह रहे हैं, इनकी बात सुनो। शिकायत करने वाले भक्त ने कहा- कि हे पुरुषोत्तम ! यह जो माला बनाता है, वह जल्दी टूट जाती है। और पैसे भी ज़्यादा लेता है। यह सुनकर नत्थू जोगी ने नाराज़गी में कहा- अगर आपको कोई परेशानी है, तो महाराज जी से मेरे बारे में क्या शिकायत करते हो, मुझसे बात करो, महाराज जी तो साक्षात् भगवान् हैं। उनको बीच में मत लाओ। अगर अच्छी माला चाहिए तो पैसे भी अच्छे दो इस प्रकार वे लोग आपस में लड़ने लगे। प्रभु राजेश्वर ने इस प्रकार का वातावरण देखा तो बाहर से उठे और बगीचे में आ विराजे। इतने में ही झाँसी से श्री वैद्यराज की ज्येष्ठ पुत्रवधू श्रीमती स्नेहलता शर्मा अपने गुरुदेव के दर्शनार्थ अनेक प्रकार के फूल, फल, कपड़े प्रसाद लेकर आई और महाराज जी को प्रणाम करके सामग्री अर्पण कर पूजा अर्चना करने लगी। योगेश्वर श्री प्रभु ने बड़ी प्रसन्न मुद्रा में पूछा- आज तो बहुत माल-मिठाई लेकर आयी हो, क्या बात है ? स्नेहलता देवी ने विनम्र शब्दों में कहा- हे जगत्पिता ! आपकी लीला को कौन जान सकता है। आपने ही मुझे नवजीवन दिया। आप अन्तर्यामी हैं, फिर भी मुझसे ही पूछ रहे हैं कि क्या बात

है ? हे करूणानिधान ! आप सब जानते हैं। महाराज जी ने सब सेवकों से आवाज लगाकर कहा-

है ? हे करूणानिधान ! आप सब जानते हैं। महाराज जी ने सब सेवकों से आवाज़ लगाकर कहा- चलो आओ और लोगों को भी बुलाओ। आज बहुत माल लड्डू, पेड़े, मिठाइयाँ आयी हैं। फिर अपने ही हाथों से सबको मिठाइयाँ देने लगे। स्नेहलता देवी से कहा- मैं तो कुछ जानता नहीं तुमको क्या लाभ हुआ? क्या बात हुई, हमको और इन सब भक्त लोगों को भी बताओ। परमात्मा के गुणगान और कृपा की चर्चा करने से सत्संग लाभ होता है, वह हम सबको भी होगा। श्रीमती स्नेहलता शर्मा ने सब लोगों की तरफ़ देखकर कहा- अभी कुछ दिन पहले अचानक मेरी तबियत बहुत ख़राब हो गई थी, मुझे तुरन्त मेडिकल कॉलेज ले गए। वहां डाक्टर ने कहा- हार्ट में इन्फैक्शन हो गया है, उसी की वजह से हार्ट अटेक हो गया है। मुझे नींद की दवा दे दी गई। मैंने स्वप्न में देखा कि भगवान् श्री महाराज जी ने स्वयं के पानी पीने के लाल रंग के पात्र को मुझे देते हुए कहा- ले, तुं यह सेव का रस पीले। मैंने उनसे रस लेकर पी लिया और जब मेरी आँखें खुली तो मेरा छोटा पुत्र वैसे ही एक पात्र में कुछ लिए बैठा था। मैंने पुत्र से पूछा- यह क्या है ? तो वह बोला कि डाक्टर ने आपको सेव का रस देने के लिए कहा है, सो मैं यह रस लाया हूँ, आप इसे पी लें। मैंने तुरन्त वह रस पी लिया। यह सब सुनकर सब भक्त लोग दीनबन्धु दीनानाथ की कृपाओं की जय जयकार करने लगे। स्नेहलता देवी ने आगे कहा- इसके पहले मन में डर लग रहा था कि अब पता नहीं क्या होगा। पर जब साक्षात्, कृपासागर श्री गुरुदेव ने स्वयं रस रूपी दवा का आशीर्वाद दिया तो मैं निर्भय हो गई कि अब मुझे कुछ भी नहीं होगा। हे भक्तों ! भोलेनाथ तो सचमुच ही भोलेनाथ हैं। इतना सबकुछ करके भी कितने भोलेपन से कह रहे हैं कि मैं कुछ भी नहीं जानता। तो भला आप बताओ इसका क्या जवाब दूँ। इस पर श्री प्रभु ने

कहा- अब तुम लोगों का काम हो गया। अब फ़जूल की बातें मत करो, अपना अपना काम करो, समय की क़ीमत समझो। उन भक्तों में नत्थू जोगी और वह भक्त भी बैठे थे, उन्होंने कहा- महाराज आप ठीक कह रहे हैं हम दोनों भी आपस में बेकार लड़े। आपको भी इससे परेशानी हुई। इसलिए अब हम लोगों ने विचार किया है कि लड़ना अच्छा नहीं होता, समय का सदुपयोग करेंगे। हे राजराजेश्वर ! आपने नत्थू जोगी से कहा- इस तरह की बातें मत बनाओ, तुमको हनुमान जी का मन्त्र उपदेश हुआ है, जो साधक जिस देवता की आराधना और पूजा करता है उसका आचरण (विशेष रूप से ब्रह्मचर्य का पालन) भी देवता की पसंद के अनुरूप ही होना चाहिए। यह समझो, जाओ और उनकी सेवा-पूजा-अर्चना करो। हे सच्चे सच्चिदानन्द, महाभैरव ! आप अपने प्रत्येक भक्त और सेवक को ब्रह्मचर्य का महत्त्व बताया करते थे कि जितनी भी सूक्ष्म दैवीय तथा व्यवहारिक शक्तियाँ हैं, वे सर्वप्रथम पूर्ण संयत वीर्य में ही अपना प्रभाव पैदा करती है। ब्रह्मचर्य से असम्भव कार्य भी सम्भव बनाए जा सकते हैं। हनुमान, भीष्म, शंकराचार्य, दयानन्द आदि पुण्य पुरुषों का चरित्र इसका साक्षी है। निर्भयता का अर्थ उच्छृंखलता नहीं है और न उसे स्वतंत्रता ही कहते हैं। किसी भी योगी साधक का पतन तभी हुआ है, जब कामिनी की ओर उसने दृष्टिपात किया है। आप स्वयं सन्यासी होते हुए भी तलवार चलाने, लाठी चलाने, कुश्ती के दाँव पेंच, मुद्‌गर घुमाने आदि में पारंगत थे। हे अमितविक्रम वीरेश्वर ! विश्वविजेता मल्ल गामा ने आपसे मल्ल विद्या के दाँव पेंच के रहस्य सीखे और आपने उसके बल की प्रशंसा की। इस प्रकार ब्रह्मचर्य के महत्त्व को ही सम्मान दिया। हे महातेज़ ! ज्ञान स्वरूप ईश्वर ! महामहोपाध्याय पं. गिरिधर शर्मा चतुर्वेदी जिनकी विद्वत्ता की प्रशंसा आपने की और जिन्होंने आपसे सम्मान पाया वे आपके दर्शनों के लिए, अपने को कृतार्थ करने दतिया आए। हे महातपस्वी ! आप तो विद्वानों के प्रेमी ही हैं। माई के चरणों में

को कृतार्थ करने दतिया आए। हे महातपस्वी ! आप तो विद्वानों के प्रेमी ही हैं। माई के चरणों में नम्रतापूर्वक शीश झुकाकर श्री गिरिधर शर्मा ने आपके चरणों में प्रणाम निवेदन किया। अपराजित रुद्ररूप श्री प्रभु ने उस समय अपने समस्त आश्रम वासियों को वहाँ बुलाया और कहा कि ''आज यहाँ देश का बहुत बड़ा विद्वान बैठा है। इनका व्याख्यान बड़ा आकर्षक और सारगर्भित होता है। हे गिरीश ! जब श्री गिरिधर शर्मा ने आपसे ज्योतिष्मती देने की प्रार्थना की तब, हे दक्षिणामूर्ति ! आपने कहा- कि पहले ज्ञान ज्योति की दक्षिणा दीजिए, आश्रम वासियों को अपना व्याख्यान सुनाईए, तब ही ज्योतिष्मती का प्रसाद मिलेगा। पंडित जी ने आपकी आज्ञा शिरोधार्य कर अपना सारगर्भित व्याख्यान गुरुतत्त्व पर सुनाया। हे ज्ञानसागर ! आपने व्याख्यान सुनकर बड़ा सन्तोष प्रकट कर पंडित जी को ज्योतिष्मती प्रदान की। बाद में श्री चतुर्वेदी जी ने श्री स्वामीजी द्वारा कृत पंचोपनिशद् के प्रकाशभाष्य का मनन करके लिखा कि हे महिमामण्डित भुवननाथ ! आपने अपने प्रकाशभाष्य में उपनिषद् के जिन रहस्यों को खोला है, वे तो आदि शंकराचार्य से भी अछूते रह गए और आज तक लिखे गए भाष्यों में कहीं भी नहीं मिलते। यह तो एक नया ही प्रकाश मिला है। हे विद्वद्वन्द्य ! आपने इस पर प्रसन्नता प्रकट की और कहा कि दो महामहोपाध्यायों ने हमारे भाष्य को समझ लिया है, एक गिरिधर शर्मा और दूसरे उमेश मिश्र अपनी प्रचंड विद्वता और तपस्या के कारण हे देव ! राष्ट्रगुरु की उपाधि के आपके द्वारा ग्रहण न किए जाने पर भी सारे देश की जनता ने आपको अपने हृदय मन्दिर में राष्ट्रगुरु के रूप में पूजित किया। हे कल्याणमूर्ति राष्ट्रगुरु ! गुरुपूर्णिमा का वह एक पवित्र अवसर था जब सभी शिष्यगण आनन्द से भरे वातावरण में पंक्तिबद्ध होकर क्रम से आपका पूजन कर अपने को धन्य-धन्य कर रहे थे। उनके भाग्य से देवगण भी अवश्य ही ईर्ष्या कर रहे होंगे। वैद्य मोहनलाल भी उसी पंक्ति में अपने पूजन के अवसर

की प्रतीक्षा में थे। जब उनका अवसर आया तो, आपने कहा- वैद्य जी आप हमारा पूजन नहीं कर सकते। इस पर वैद्य जी ने चकित होकर हाथ जोड़कर पूछा कि प्रभो, मैं आपका पूजन क्यों नहीं कर सकता ? महाराज श्री ने कहा- आपने तो हम से कोई दीक्षा ग्रहण नहीं की है। अतः आपको हमारे पूजन का कोई अधिकार नहीं है। तब वैद्य जी ने पुनः श्री चरणों में नम्र निवेदन किया कि सर्वेश्वर ! आप तो समस्त भारत के राष्ट्रगुरु हैं, और मैं भी इसी राष्ट्र का निवासी हूँ। आपने ज्ञान के अनेक ग्रन्थ लिखे हैं जिनसे सारा राष्ट्र लाभ उठा रहा है और मैं भी उन्हीं से लाभ प्राप्त कर रहा हूँ। हे देवेश ! आपके ग्रन्थों से मैंने बहुत ज्ञान प्राप्त किया है। यह मेरे हृदय का अनुभव है। अतः प्रभो आप मेरे भी पूज्य गुरुदेव हैं और मुझे भी आपके पूजन करने का पूर्ण अधिकार है। वैद्य मोहनलाल के इस उत्तर को सुनकर आशुतोष महेश्वर बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने स्नेह से वैद्य को पूजन करने की आज्ञा प्रदान कर दी और कहा ''वैद्य जी आप बड़े चतुर हैं।'' हे प्रलयन्कर ! हे सच्चिदानन्द ! कितने क्रान्तिकारियों ने आपसे स्वतंत्रता का पाठ पढ़ा ? कहा नहीं जा सकता। एक बार महान् क्रान्तिकारी चन्द्रशेखर आज़ाद वेश बदलकर आपसे वार्तालाप करता रहा। अचानक वार्तालाप के बीच आपने उससे कहा, पंडित ''हम तोहके जानत हंई तू के होआ'' (मैं तुम्हें पहचानता हूँ, तुम कौन हो) इस प्रकार गामा हो या चन्द्रशेखर आज़ाद, सन्त हो या फक़ीर, धनवान हो या ग़रीब सभी आपसे प्रेरणा और मार्गदर्शन पाते रहे। सन् १९४६ में दतिया में हुए अहिंसात्मक आन्दोलन की चमत्कारपूर्ण व असाधारण सफलता की सराहना स्वयं महात्मा गाँधी ने की थी। महान् क्रांतिकारी नेता राजा महेन्द्र प्रतापसिंह को हमेशा आपका मार्गदर्शन मिला। "हे हरिहर ब्रह्म आप दिखा रहे क्या–क्या नहीं कमाल। डगमग होते जब क़दम लेते तुरन्त सम्भाल।'' हे

परमपुरुष जनार्दन ! भक्तवत्सल ! विधाता ! यदि हम लोगों से रूठ जाएँ तो आपकी शरण मिल जाती है। लेकिन यदि आप रूठ जाएँ तो विधाता के यहाँ भी शरण नहीं मिलती। बाहर से धूप कमरे में आने के लिए खड़ी है, अनन्तकाल से इन्तिज़ार कर रही है, लेकिन दरवाज़ा बन्द है, यदि उसे थोड़ा सा छिद्र भी मिल जाय तो वह प्रवेश कर जाय। इसी प्रकार अनन्तकाल से परमात्मा भी जीव के हृदयरूपी कपाटों के खुलने की प्रतीक्षा कर रहा है। विट्ठल अभी भी अनन्त युगों से भीमातट के किनारे इन्तिज़ार कर रहा है। मेरे रामरूपी प्यारे मस्त आओ मैं तुम्हें कलेजे से लगाकर दुलार करूँ। श्री स्वामीजी महाराज की जय। ''श्री स्वामी कथासार'' के इस अध्याय का श्रद्धापूर्वक नित्य पाठ करने से और भक्तिपूर्वक श्रवण करने से बल, विद्या और पाण्डित्य की प्राप्ति, इन गुणों का उत्तरोत्तर विकास होता है।

इस पाठ को भगवती पीताम्बरा माता को अर्पण करें।

।। एकादश अध्याय समाप्त।।

।।श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथा सार

द्वादश अध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे आदिदेव ओंकार ! श्री महराज ! हे महाकाल ! आपके विस्तार का स्वरूप ही जगत् है। ऊँ ही शब्द ब्रह्म है। ॐ ही नाद ब्रह्म है। अन्त समय में ऊँ शब्द का उच्चारण करने वाले की मुक्ति हो जाती है ऐसा श्रुति में लिखा हुआ है। काशी में जीव जब मरने लगता है, तब भगवान् शंकर तारक अर्थात् ओंकार ब्रह्म का उपदेश करते हैं। क्योंकि यही सब मन्त्रों में श्रेष्ठ और मुक्ति का देने वाला है। ओंकार की सहायता से सोऽहम्- मैं ब्रह्म या शिव हूँ इस भाव की आवृती की जाती है। पक्के अभ्यास से जीवन काल में ही ब्रह्मभाव अद्वैत का साक्षात्कार होता है और पुरुष जीवन मुक्त हो जाता है। हे महानाद रूप पीताम्बरापीठाधीश्वर श्री महाराज ! अन्त समय में श्री स्वामी अथवा श्री महाराज नाम उच्चारण करने वाले की भी मुक्ति हो जाती है, आपके अवतार का कार्य जीवमात्र को मुक्ति देना है। यह कार्य अनादि काल से आपने ही सम्भाल रखा है। श्री प्रभो ! आपके परमभक्त नारायणसिंह, श्री कृष्णानन्द बुधौलिया आदि अनेक अन्त समय में आपका नाम लेकर सहज ही पार हो गए। हे गोविन्द ! जैसी मुक्ति आपने हीरालाल को दी जैसी कि आपके मुखारविन्द से भक्तों ने सुना। भक्त हीरालाल सिंधी आश्रम में ही रहता था और प्रतिदिन बड़े प्रेम और श्रद्धा से हे प्रभो ! श्रद्धापूर्वक चाय तैयार कर आपको अर्पण करता

था और प्रतिदिन बड़े प्रेम और श्रद्धा से हे प्रभो ! श्रद्धापूर्वक चाय तैयार कर आपको अर्पण करता

था। उसके भोलेपन, उसकी सरलता, उसकी सच्चाई और पवित्रता पर आप बड़े प्रसन्न रहते थे। एक दिन अचानक हीरालाल का देहान्त हो गया, एक सेवक ने दौड़कर इसकी सूचना श्री प्रभु को दी, तो हे स्वामी महेश्वर ! आपने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा- ''भाई अभी तो उसने हमें चाय भी नहीं पिलाई हैं, बग़ैर चाय पिलाए उसकी मृत्यु कैसे हो सकती है। यह ब्रह्म वाक्य सुनते ही हे नारायण ! लोगों ने दौड़कर वापस जाकर देखा हीरालाल स्टोव जलाकर चाय बना रहा था। इसके बाद उसने चाय लाकर अपने स्वामी को पिलायी। कालान्तर में उसका देहान्त हुआ। डबरा शुगर मिल में कार्यरत हीरालाल के छोटे भाई जयकिशन को तो परमगति ही प्रदान कर दी। हे प्रभु ! तो आपने कहा- मुझे मालूम है। वह रात को मेरे पास आया था। सेवक और स्वामी का संबंध ही ऐसा होता है, शिष्य गुरु के माध्यम से ही आगे जाता है। उसका शरीर लाल था जो आपके प्रकाश से आलोकित था तथा स्वर्ग से भी धवल प्रकाश से आश्रम जगमगा उठा। हे प्रभो ! हे महेश्वर ! उस समय आप आसन पर विराजे थे, उसने आपको प्रणाम किया और घुटनों के बल हाथ जोड़कर आपके सामने बैठ गया। उस महान सेवक ने आपसे निवेदन किया कि- उसे क्या आज्ञा होती है। आपने उसको बड़े स्नेह से देखा और आज्ञा दी- तुमको निरन्जनधाम जाना है। उसको लेने आए देवदूत तो अभी तक विनम्रता पूर्वक हाथ जोड़े हुए खड़े थे। आपकी आज्ञा की प्रतीक्षा कर रहे थे। शिशु के झूलने जैसा एक स्वर्णिम पालना लेकर दूत आगे बढ़े और सेवक जयकिशन से विनम्रतापूर्वक निवेदन करने लगे महाराज ! पालने में विराजें। हम आपके सेवक हैं जो आपको शिवाज्ञा से निरन्जनधाम पहुँचाने आए हैं। हे भक्त श्रोताओं इसीलिए गुरुसेवा महानतम साधना मानी गई है। इसका फल मोक्ष के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता। इस तरह परमात्मा अपने भक्तों पर कृपा करता है, अपने भक्तों के लिए कितना बावला हो जाता है। हे लोकपाल ! हे चराचर को

बनाने वाले ! आपके लिए यह बात कोई कठिन, असम्भव और नई नहीं है, लेकिन हे प्रभो ! आपने सेवक का जो कल्याण किया वह अद्वितीय है और देवतागण भी उसके लिए तरसते हैं। "जहँ बोल तहँ अक्सर आवा, जहँ न बोल तहँ मन न रहावा। बोल अबोध मध्य है जोई, जस वो है तस लखे न कोई।।" हे देवों में श्रेष्ठ महायोगी ! आप देवताओं के भी आराध्य देव हैं। चराचर के स्वामी और काल के नियन्ता है। हे पीताम्बरापीठाधीश्वर श्री महाराज ! प्रलय तभी होता है जब आप तीसरा नेत्र खोलते हैं। आपकी इच्छा मात्र से संसार की उत्पत्ति होती है। सन् १९६२ ई. में चीन देश द्वारा आक्रमण करने से देश पर संकट आया था। चीन की चङ्गेजी हुकूमत और हरकतें थीं। देश की आज़ादी शैशवास्था में थी। वहाँ के नेता माओत्सेतुङ्ग और चाऊएनलाई ने भारत से मित्रता कर धोका दिया था। हे कामेश्वर ! आपकी इच्छा मात्र से ही कामनाएँ पूर्ण हो जाती हैं। सच्चे देशभक्त की भाँति श्री प्रभु का हृदय राष्ट्र पर आई विपत्ति को देखकर द्रवित हो उठा। प्रभु ने राष्ट्र को निर्लिप्त रखकर उस महानतम विपत्ति से किस प्रकार बचाया, इसका स्मरण कर उनका गुणगान कर अपने जीवन को पवित्र और धन्य बनाएँ। श्री स्वामीजी ने एक शास्त्री को बुलाकर कहा देश पर संकट है और यह दैवीय उपाय से ही टाला जा सकता है। बड़े बलिदानों के बाद हमारा देश स्वतंत्र हुआ है, परन्तु शत्रु आक्रमण करके देश को फिर से गुलाम बनाना चाहता है। इन शत्रुओं की बर्बरता हमारे आर्य धर्म के लिए अत्यन्त घातक सिद्ध होगी। देश में न राम रहेगा न दास। देश में नास्तिकता घर कर जाएगी। शास्त्री ने जिज्ञासा की- क्या इसका कोई उपाय किया जा सकता है ? प्रभो ! श्री महाराज जी ने उत्तर दिया- साधु शस्त्र लेकर तो लड़ नहीं सकते, पर जगदम्बा का प्रार्थना रूप अनुष्ठान अवश्य करा सकते हैं। इसके लिए सौ कर्मकाण्डी पण्डितों की आवश्यकता होगी, जो नित्य दुर्गा सप्तशती का पाठ करते हैं। जो अपने भजन का विक्रय न करते

हों, जो शक्ति मन्त्र से दीक्षित हों, इसके लिए धन भी चाहिए। फिर चीन तो क्या ब्रह्माण्ड भी बदला जा सकता है, परन्तु पण्डित कहाँ रहे। तुम कार्यक्रम तैयार करो। शास्त्री ने घर आकर विचार किया कि- इसमें तो लाखों रुपये ख़र्च होंगे, धन कहाँ से आएगा? दूसरे दिन श्री महाराज ने पूछा- ''क्या कार्यक्रम बना लिया है''? नहीं महाराज जी अभी बना रहा हूँ। कहकर बात टाल दी। महाराज जी ने कहा शीघ्रता से बनाओ। तीसरे दिन भक्त रामदास बाबा ने देखा- महाराज जी व्यग्रता और बैचेनी से शिव मन्दिर के पास टहल रहे हैं। डरते-डरते पास जाकर उन्होंने देखा कि- महाराज जी का शरीर काँप रहा है नेत्रों में लाली छायी है, और मुँह से सिंह जैसी गर्जना निकल रही है। उन्होंने देखा कि श्री महाराज जी ने दाहिने हाथ की मुट्ठी को बाँधकर अपने सीने पर बड़े जोर से मारा जिससे बड़े धमाके की आवाज़ हुई। फिर सिंह गर्जनाकर बोले- चीन अवश्य वापस जाएगा, चाहे मुझे इसके लिए अपना सर्वस्व ही क्यों न लगाना पड़े। इस देश का अन्न खाया है। रामदास बाबा से कहकर उस शास्त्री को बुलवा कर पूछा- क्या तुमने कार्यक्रम बना लिया है ? शास्त्री ने कहा- महाराज बना रहा हूँ। यह सुनते ही महाराज जी ने कहा- ''तुम बड़े सुस्त हो। देश पर संकट आया है और तुम काम में देर कर रहे हो।'' शास्त्री मन ही मन सोच रहे थे- चलो कार्यक्रम तो बना देते हैं होना जाना तो कुछ है नहीं क्योंकि ख़र्च का प्रबन्ध कहाँ से होगा। अभी यह बात सोच ही रहे थे कि देखा दवाईयाँ बनाने वाली कम्पनी ''बैद्यनाथ भवन'' के मालिक पण्डित रामनारायण वैद्य आपके दर्शनों को बड़ी व्यग्रता से अन्दर आ रहे हैं। वैद्य जी ने आते ही प्रणाम करके कहा- प्रभो देश पर महान संकट आया है, क्या किया जाए ? श्री स्वामी जी ने उत्तर दिया- ''उपाय तो है लेकिन धन की आवश्यकता पड़ेगी।'' वैद्यजी ने शीघ्र उत्तर दिया- मेरी अपनी सम्पूर्ण सम्पत्ति जो आपकी कृपा से ही मुझे प्राप्त हुई है, राष्ट्र को समर्पित है। यह सुनकर शास्त्री

सोचने लगे मुझे इतने दिन प्रभु के पास आते हुए हो गए। मैंने अभी इन्हें पहचाना नहीं और बात को टालता रहा, वे लज्जित होकर शीघ्र ही कार्यक्रम बनाने में जुट गए। वैद्यजी ने धन और पण्डित सबका प्रबन्ध किया, अनुष्ठान प्रारम्भ हो गया। अनुष्ठान के मध्य में ही हे भगवान् नरसिंहावतार् ! आपने अनुष्ठान की सफलता की घोषणा कर दी। इस अनुष्ठान में त्रैलोक्य स्तम्भिनी जगन्माता भगवती बगलामुखी एवं भगवती धूमावती का आह्वान किया गया था। संसार भर में बिकने वाली ''इलस्ट्रेटेड वीकली'' ने अपने अंक दि. ६-१०-७३ के पृष्ठ संख्या १६ पर सम्पादकीय ''चिअरो'' शीर्षक के अन्तर्गत इस राष्ट्र रक्षा अनुष्ठान का एक विस्तृत एवं सजीव चित्रण किया जो श्री महाराज जी से आज्ञा प्राप्त डॉ.इन्द्रमणि शुक्ल ने समस्त भक्त गणों को पढ़कर सुनाया था। किन्तु आपकी इच्छा अनुसार उसको प्रचार का रूप नहीं दिया गया। इस अनुष्ठान को अत्यन्त गोपनीय रखा गया। अनुष्ठान के दौरान जबकि अनुष्ठान प्रारंभ हुए क़रीब एक सप्ताह हुआ था श्री प्रभु ने अपने रात्रि के एक स्वप्न का साधकजनों को विस्तृत विवरण दिया - ''रात्रि को हमने स्वप्न में क्या देखा कि हम घूमते हुए एक उद्यान में पहुँचे जहाँ एक छोटा सा जलाशय भी है। समीप जाकर क्या देखते हैं, जलाशय के किनारे एक काले रंग की बुढ़िया बैठी है और उसके पास एक बालक भी खड़ा है। पास आने पर बुढ़िया अंग्रेज़ी में बोली ''आई डोन्ट नो यू''। यह वचन सुनकर मैंने हाथ जोड़कर उसका अभिवादन किया। इतने में हमारी नींद टूट गई तब से हम यही सोच रहे हैं कि यह तो धूमावती देवी थी। हम हमेशा इनका स्मरण भी करते हैं फिर भी इन्होने यह क्यों कहा ''आई डोन्ट नो यू'' श्री महाराज के श्री मुख से यह शब्द बड़े ही प्यारे मालुम हुए। श्री राघवेन्द्र ने आगे कहा - ''मालुम होता है कि इस अनुष्ठान में हमने इनका योगदान नहीं लिया है शायद वे इसलिए असंतुष्ट हैं। हमें उनका भी योग इस अनुष्ठान में लेना होगा। फिर वैसा ही किया गया।

धूमावती माई, भूखी माई के नाम से भी जानी जाती है एक बार भूख के कारण अत्यन्त विकल होकर यह अपने पति शिव को ही निगल गई थी। शिव इनके शरीर से धुएँ के रूप में प्रकट हुए इसलिए इनका नाम भूखी माई या भूखी माता पड़ा। उस समय से ही यह विधवा स्त्री का रूप धारण किए हुए हैं। भक्त गोपालदास जो वहाँ बैठे थे, श्री महाराज से आज्ञा माँगकर भगवती धूमावती के संस्मरण सुनाने लगे जो अनुष्ठान के समय में हुए थे। श्री प्रभु ने उनको आदेश दिया था कि-भगवती धूमावती के चित्र से, जो दीपक के सामने स्थित है, यदि कोई अनुभव या मूक भाषा सुनाई दे तो वह तुरन्त आपको सुनाया जाए। ग्यारहवें दिन अर्ध रात्रि को आश्रम में निर्मित अखाड़े के पास एक भयानक तांत्रिक पशु की ध्वनि हुई। तुरन्त जाकर आपको बताया गया। आपने प्रसन्न मुद्रा में कहा - आरंभ शुभ है जाओ अपना काम करो। पन्द्रहवें दिन चित्र से आदेश मिला मैं भूखी हूँ। यह भी प्रभू को बतलाया, तो आपने पूरा विवरण सुनकर कहा - वह तो हमेशा भूखी रहती हैं, उनको बली देना अत्यन्त कठिन है। चावल, साबुत उड़द, शुद्ध घी, गुड़ और दही सम्मिश्रण कर भोजन कराओ''। दूसरे दिन पुनः चित्र से संकेत प्राप्त हुआ - भोजन पर्याप्त नहीं है। आप श्री की आज्ञा से घी चुपड़ी चार रोटी और बढ़ा दी गई। अगली रात पुनः चित्र से संकेत मिला कि अभी जप कम हो रहा है, पाँच माला और बढ़ाओ। आपने पाँच माला का जप और बढ़ाने का आदेश दिया। इक्कीसवें दिन जप करते हुए गोपालदास अर्धनिद्रित हो गए तभी भगवती धूमावती ने उनका हाथ पकड़ कर कहा - मेरे साथ मोटर में बैठकर चीन चलो। गोपालदास ने उत्तर में कहा - मैं अनुष्ठान कर रहा हूँ, अनुष्ठान छोड़कर मैं कैसे जा सकता हूँ, कृपा करके आप अकेली चली जाएँ। जगदम्बा धूमावती कार में बैठ गयी, मोटर प्रारंभ होने की आवाज आयी और अदृश्य हो गयी। यह बात श्री प्रभु से कही, तो आपने कहा-तुमने ग़लती की तुम्हें माँ के साथ जाना था, ख़ैर!

अब हमको जाना पड़ेगा। उसके दूसरी रात्रि को जपकर्ताओं ने जप करते समय अर्धोन्मीलित नेत्रों से देखा कि-भगवती धूमामाई चीनी सेना पर प्रहार कर रही है, परिणाम स्वरूप चीनी सेना में भगदड़ सी मच रही है और वह अपने देश को वापस जा रही है। बाद में पूर्णाहुति से पूर्व ही चीन ने युद्ध विराम की घोषणा कर दी। इन्हीं दिनों देवरिया के एक वकील साहब ने आपकी आज्ञा से सन् १६७२ ई. में भगवती धूमावती के लिए एक छोटा सा मंदिर निर्मित करा दिया। क्योंकि जगन्माता ने हे त्रिलोकपति ! आपसे स्वयं यह कहा था ''मैंने तुम्हारा काम किया है अब तुम भी मेरा काम करो''। अर्थात् मेरा भी आश्रम में एक मंदिर बनवाओ। इस कारण भगवान् ने देवरिया के वकील साहब को मंदिर निर्माण हेतु आज्ञा प्रदान कर दी थी। त्रैलोक्य स्तम्भिनी ब्रह्मास्त्रविद्या, बगलामुखी अपने दाहिने हाथ में गदा लिए हुए हैं और बाएँ हाथ में शत्रु रूपी राक्षस की जीभ पकड़े हुए हैं। अक्सर देखा गया है वाणी ही सब झगड़ों की जड़ है। द्रौपदी के यह कहने पर कि ''अंधे के अंधा ही पैदा हुआ, महाभारत युद्ध में बड़ा नरसंहार हुआ जिससे देश को कभी न पूरी होने वाली क्षति हुई और देश अपनी गरिमा को खो बैठा। भारत सरकार के तत्कालीन दार्शनिक राष्ट्रपति सर्वपल्ली डॉ.राधाकृष्णन ने अनुष्ठान के सफलता पूर्वक सम्पन्न हो जाने पर आपको राष्ट्रगुरु स्वीकार कर कृतज्ञता प्रकट की। लेकिन श्री प्रभु ने यह कहते हुए - राष्ट्रगुरु की उपाधि अस्वीकार कर दी कि - ''समस्त उपाधियों को त्यागने के बाद ही संन्यासी का जीवन सार्थक होता है''। संन्यासी को उपाधि से क्या तात्पर्य परन्तु आपकी अस्वीकृति होने पर भी लोग आपको राष्ट्रगुरु के नाम से भी जानने लगे। ''कह रहा है मौजे दरिया से समुन्दर का सकूँ। जिसमें जितना जर्फ़ है उतना ही वो ख़ामोश है।।'' लहरे कह रही हैं, दरिया से कि अरे तुम ज़रा समुद्र की महान शान्ति के रहस्य को सुनो-जिसमें जितनी गहराई होती है, वह उतना ही ख़ामोश हो जाता

है।" हे सर्व समर्थ ! आपकी कृपा से देश दो बार गुलाम होने से बच गया। सारा राष्ट्र आपका कृतज्ञ है। आपको समर्पित करने के लिए अपना है ही क्या; हाथ जोड़ने के सिवाय। देश की शान्ति व समृद्धि के लिए ब्रह्मयज्ञ अनुष्ठान हुआ जो कई दिनों तक चलकर सम्पूर्ण हुआ, जिसमें चारों साङ्गोपाङ्ग वेदों के ज्ञाता ब्राह्मणों ने सस्वर पाठ किया। इस तरह का ब्रह्मयज्ञ महाभारतकाल में पाँच हज़ार वर्ष पूर्व हुआ था। इस ब्रह्मयज्ञ में पूजन एवं हवन का कार्यक्रम भी साथ चला। सायँकाल कों आरती से पूर्व यज्ञ में भाग लेने आए ब्राह्मण पंक्ति में बैठ जाते थे। और हे अक्षत ! दामोदर ! आप अपने आसन पर विराजमान होकर उन लोगों का सस्वर पाठ सुनते थे। एक दिन एक कृष्ण यजुर्वेदीय ब्राह्मण पाठ करता करता कहीं से भूल गया। क्षण भर के लिए निस्तब्धता छा गयी तो दूसरे ही क्षण आपने स्वयं उसी स्थल से आगे पाठ प्रारंभ कर दिया। यह सुचारू रूप से चल रहा था कि एक दिन यज्ञ के आचार्य रामनाथजी मिश्र की वाणी लड़खड़ाने लगी देखते ही देखते एक घड़घड़ाहट के साथ आवाज़ बंद हो गयी। श्री प्रभु ने शिष्य डॉ.योगेश मिश्र एवं डॉ.अधिकारी को आज्ञा दी कि - पंडित जी को जाकर देखो। यथोपचार करने के बाद उन्हें झाँसी बड़े हॉस्पिटल में भेज दिया गया। वहाँ से वे तीन चार दिन बाद स्वस्थ होकर लौट आए। उन पर दुष्टों द्वारा कृत्या द्वारा कृत्या का मारण प्रयोग किया गया था ताकि यज्ञ विध्वंस हो जाय, जिसे स्वयं महाकाल श्री स्वामीजी ने शांत कर दिया। लोकाचार की दृष्टि से आचार्य को अस्पताल भेजा गया था। हे विशालाक्ष ! आपने बताया कि ब्रह्मकामकला एवं चण्ड रूद्रेश्वर का अनुष्ठान इस यज्ञ की रक्षा के हेतु आपने स्वयं किया था। अपनी तपस्या अपनी शक्ति और अपने भौतिक शरीर की आहुति देकर सन्त शिरोमणि ने राष्ट्र की स्वतंत्रता, राष्ट्र रक्षा एवं ब्रह्मयज्ञ अनुष्ठान जैसे परम अलौकिक कार्य सम्पन्न कराए। हे शब्दब्रह्म निष्णात ! भारतीय संगीत के अद्वितीय विद्वान संगीत की शास्त्रीयता

एवं स्वरों के गूढ़ मर्मज्ञ, नाद ब्रह्मरूप, जगत् के दृष्टा और सृष्टा रूप में आपको शत-शत नमन। संगीत और अध्यात्म का क्या संबंध है कि रागरागनी का क्या प्रभाव होता है, किस समय कौन-सा राग क्यों गाना चाहिए इत्यादि बातों का ज्ञान संगीत के साधकों ने आपसे प्राप्त कर देश-विदेश में भारत का गौरव बढ़ाया है। सूर, तुलसी के पदों का शास्त्रीय संगीत में बड़े मधुर स्वर में आपका गायन कितना मधुर लगता था, यह वाणी से नहीं कहा जा सकता। आचार्य बृहस्पति द्वारा एक दिन आपसे यह पूछे जाने पर कि हे गानज्ञान परायण प्रभु ! योग का क्या अर्थ है। आपने कहा - परमात्मा से आत्मा का मिलन योग कहा जाता है, जो स्वर ज्ञान के द्वारा प्राप्त किया जाता है। स्वरों को जानकर जो इस महाविद्या को प्राप्त कर लेता है वो ही मोक्ष का द्वार खोलता है। यह जगत् संगीत-ताल पर ही आधारित है। यह विद्या शुद्ध ईश्वरीय ज्ञान के लिए है। संगीत के बड़े-बड़े महान् धुरन्धर कलाकार जैसे विष्णु दिगम्बर, फय्याज ख़ाँ, नारायण रावजी व्यास, इनायत ख़ाँ, अलाउद्दीन ख़ाँ, कण्ठे महाराज, गुदई महाराज, दिलीप कुमार राय, आदिल ख़ाँ इत्यादि ने दरबार में कला का प्रदर्शन कर आपसे आशीर्वाद ले अपने को धन्य बताया। सितार वादक निखिल बनर्जी ने दतिया आश्रम में आपसे आश्चर्य पूर्वक पूछा कि-आप कौन हैं, आपका स्वरूप क्या है। क्या आप संगीत के देवता तो नहीं। मैंने आजतक आप जैसा संगीत का महान मर्मज्ञ नहीं देखा। डागर बन्धु जो गुमनामी के अंधेरे में खो गए थे। आज आपकी कृपा से सारे विश्व में फिर से मशहूर हो गए हैं। डागर बन्धुओं ने स्वयं बार-बार कहा है कि आश्रम में जाकर कितना आनन्द मिलता है, यह शब्दों के द्वारा वर्णन नहीं कर सकते। श्री नासिर अहमद का कहना था कि-महाराज जैसा संगीत का जानकार कोई नहीं है। श्रीमती मालिनी राजूरकर ने एक बार कहा-मैं तो स्वयं ही वहाँ जाने की इच्छुक थी जबसे उनके विषय में सुना है। उस महान् आत्मा के सामने जो भी थोड़ा बहुत

सीखा है उसे सुनाने की इच्छा रही है। मालिनी के गुरुजी का रचा - ''देव देव महादेव'' गीत आपको बहुत भाया। एक नाथ जी तो कई बार गा चुके हैं। आचार्य बृहस्पति जी तो समय-समय पर अपनी पत्नी श्रीमती सुलोचना यजुर्वेदी सहित आश्रम पर आकर कई दिनों तक ठहरते थे। सलिल शंकर (सितारवादक) ने एक बार आश्रम में एक महीने रहकर आपकी कृपा प्राप्त की थी। श्री रामचन्द्र माधव अग्निहोत्री का कथन था कि दतिया जाकर गाने से मन को बड़ी शान्ति मिलती है। संगीतज्ञ अपनी हाज़िरी श्री चरणों में देने के पश्चात् आपसे आशीर्वाद पाने हेतु प्रार्थना करते थे। जिस कलाकार पर भी आपकी निगाह हो गई वह निहाल हो गया। अनगिनत महान् संगीतकारों ने श्री चरणकमलों में अपनी कला का निवेदन कर अपने को गौरवान्वित किया जैसे पटना के सियाराम तिवारी, कुमार गंधर्व, राजन साजन मिश्र, श्रीमती निर्मला देवी, श्री कृष्णराव शंकर पण्डित, आर.के.शुंगे इत्यादि। काशी के स्वर्गीय पं.बड़े रामदास जी, स्व. पं.छोटे रामदास जी आदि प्रमुख संगीतज्ञ आपसे संगीत विषयक चर्चा किया करते थे। एक बार अलाउद्दीन खाँ, दतिया रियासत के राजा को अपनी कला दिखाने आए। बीच राह में ही आश्रम पड़ता था, पहले वहाँ रूककर आपको सरोदवादन सुनाने लगे और वे राजा के यहाँ जाना भूल गए, इसी में आधी रात हो गयी। बाद में ध्यान आया तो यह कहकर कि दुनिया के सम्राट को अपनी कला पेश कर दी हैं तो अब किसको क्या सुनाऊँ और वहीं से वापस चले गये। आपको ध्रुपद-गायन से विशेष लगाव रहा। कई बार व्यथित होकर कहते-ध्रुपद-धमार का प्रचलन तो समाप्त ही समझो। हे संगीत के देवता ! बहुत पहले सलिल शंकर प्रथम बार दतिया आए, ताकि आपको सितार सुनाकर प्रसन्न कर ले और आपकी कृपा उस पर हो जाए। जिससे संगीत मार्ग में उसे सफलता मिल जायेगी। लेकिन प्रभु आपने उसे मना कर दिया इससे वह अत्यन्त दु:खित हुआ और आश्रम के दरवाज़े

के बाहर सड़क के किनारे रात भर बैठकर सितार बजाता रहा, सोचा आप यहीं से सुन लेंगे, तो भी वह अपने को भाग्यवान् समझेगा। प्रातःकाल हे गानज्ञानेश्वर ! आपके भक्त रेवाराम ने श्री चरणों में निवेदन किया कि जो व्यक्ति कल आपको सितार सुनाने आया था दयनीय स्थिति में दरवाज़े पर बैठा सितार बजा रहा है। दीनानाथ आप उस पर कृपा करें, यह आपसे हाथ जोड़कर प्रार्थना है। हे श्रेष्ठवर ! आपने कहा उसे बुलाओ, वह पास हो गया है। उसे अपनी कला के प्रति प्रेम है और सच्ची लगन है। आपने सलिल शंकर का सितार सुना, उसकी लगन और कला की प्रशंसा की तथा मंत्र प्रदान करते हुए कहा-जाओ संगीत से ही परमात्मा को प्राप्त करो और देश का गौरव बढ़ाओ। संगीत से ही तुम्हें ज्ञान की प्राप्ति होगी। आपने आगे कहा - दृढ़ संकल्प से ही सिद्धि मिलती है। बालक ध्रुव ने पक्का निश्चय किया कि वह भगवान् की गोद में ही बैठेगा और उस निश्चयात्मक बुद्धि से ही उसने कठोर तपस्या की, तो उसे सफलता मिली। हे संगीतविद्याधर ! आपने सलिल शंकर को उपदेश दिया, आपकी अमृतवाणी सुनकर सलिल शंकर के हृदय की ज्वाला शांत हो गई। उसे कल्पवृक्ष की छाया मिल गई। वह अपने भाग्य को सराहता हुआ सन्तशिरोमणि को प्रणाम करके चला गया। पं.ओंकारनाथ ने आपको अपना गायन सुनाया था। संगीत के देवता महाकाल भैरव की मूर्ति प्रतिष्ठा आश्रम पर कराई गई। मियां आदिल खाँ उस्ताद भारत के तीसरे नम्बर के गवैये थे। उस्ताद गा रहे थे - तुझै ऐतबारे उल्फ़त जो न हो सका अभी तक। मैं समझ गया यक़ीनन अभी मुझ में कुछ कमी है।। जब यह समाप्त हो गया तो हे नटराज ! आपने उस्ताद से कहा-चलो माला लो। मैं अरबी और संस्कृत दोनों के मंत्र जानता हूँ, बोलो अरबी तथा संस्कृत में से कौन-सा मंत्र तुम्हें चाहिए। मियाँ आदिल ने अदब से उत्तर दिया-मुझे अरबी और संस्कृत से क्या मतलब। मुझे तो तुमसे मतलब है। यह सुनकर रसराज श्री

प्रभु बड़े प्रसन्न हुए। उस्ताद आदिल ख़ाँ को आपकी शरण प्राप्त हो गई। आदिल ख़ाँ का लम्बी बीमारी के बाद जब देहान्त हुआ और यह ख़बर आपको हुई, उस समय आप मूढ़ा से टिके हुए थे सो सीधे बैठ गए। बायाँ हाथ उठाकर हृदय की तरफ़ इशारा करके कहा - ''हमें यहाँ कष्ट हुआ। जाता तो सब कोई है, लेकिन उस्ताद बड़े कलाकार थे। सही मायने में फ़क़ीर थे।'' श्री सद्गुरु समर्थ ने उस्ताद को अपना परधाम बख़्श दिया, बीच में कोई रोकटोक नहीं। जिसका पीर स्वयं महेश्वर है उसके लिए रोकटोक कैसे हो सकती है। श्री उस्ताद ने संगीत के माध्यम से गुरु को प्रसन्न किया। किसी पर आप क्यों प्रसन्न हुए ? यह रहस्य कोई नहीं जान सकता। यह तो आपकी मेहर का सौदा है। दूध बेचने वाला, बादामसिंह जिसे, हे रमापति ! आपने कहा था - मैं तेरा पिता हूँ, मैं तेरी मदद करूँगा, घबराना नहीं। एक दिन वह और उसका एक साथी लच्छी दालान में बैठे माला फेर रहे थे। श्री प्रभु आप वहाँ से निकले और उनसे पूछा - क्या जपते हो ? बादामसिंह ने शरमाते हुए और झिझकते हुए हाथ जोड़कर कहा-हे मन्त्रेश्वर! हम लोग ''स्वामीजी महाराज की जय, स्वामीजी महाराज की जय'', इस प्रकार जप कर रहे हैं। वहाँ अन्य साधक भी साधना कर रहे थे, उन सबके सामने आपने कहा-यह बहुत बड़े आदमी हैं, इन्होने मंत्र बना लिया है, और इनका मंत्र तो सिद्ध हुआ। सन्त के अवतार तो जन कल्याण के लिए होते हैं, उनकी क़ीमत तो वे उनके प्रकृति धर्म देखकर किया करते हैं। बादामसिंह उस समय मण्डी में पल्लेदारी (तुलाई-ढुलाई) का काम करता था। दो जून की रोटी बड़ी मुश्किल से पैदा होती थी। एक दिन आपने बादामसिंह को बुलाकर कहा-तुम यादव-बालक हो, गाँव से दूध लाकर दतिया में बेचा करो, ईमानदारी से काम करोगे तो सब ठीक होगा। साधु ही ग़रीब का दुःख जानते हैं। मुझे अपने साथ सदा समझना। ईमानदारी का साथ यदि छोड़ोगे तो समझ लेना मेरा साथ टूट गया। हे

श्रीवर्धन ! आपकी कृपा दृष्टि हो जाए तो रंक से राजा होने में देर नहीं लगती। बादामसिंह ने दस किलो दूध से अपना काम शुरू किया था। कुछ समय बाद उसकी अपनी दुकान हो गयी। दुकान पर इतनी भीड़ होने लगी कि शहर में नये थानेदार आए थे वह भीड़ देखकर समझे कोई झगड़ा हो गया है। भाग्यवान् व्यक्ति को ही ऐसे सिद्धयोगी के दर्शन प्राप्त होते हैं। वह कृपा पात्र होता है। हे करूणासिंधु ! दाता ! विद्याराम हो या बादामसिंह, राजमाता सिंधिया हो या कमलापति त्रिपाठी जिसने भी सच्चे हृदय से आपको पुकारा उसके लोक और परलोक दोनों ही सुधर गए। सन्त हृदय सच्चे और निःस्वार्थ प्रेम, करूणा, दया, ममता आदि का मूर्तिमान रूप होता है। दतिया निवासी रतनसिंह परमार्य जब बहुत छोटे थे तो इनकी माता का स्वर्गवास हो गया। मानों इनकी दुनिया ही उजड़ गयी। माता-हीन पुत्र को कंगाल ही समझना चाहिए। क्योंकि पिता तो बहुत कठोर होता है। ये बहुत दुःखी होकर इधर- उधर फिरते थे, जैसे बिना माँ का बछड़ा माँ को दौड़-दौड़ कर चिल्लाता हुआ ढूँढ़ता है। एक दिन ये आश्रम पर गए, तो आपने संकेत से इनको अपने पास बुलाकर बैठा लिया। संत सचमुच ही त्रिकालज्ञ होते हैं और वहाँ लोगों से बोले-तुम सब लोग बहुत देर से आलसियों की तरह यहाँ बैठे हो, कुछ काम धाम नहीं करते हो, यहाँ से सब लोग जाओ। मेरा बाल-गोपाल मुझे बहुत दिन बाद मिला है। यह कहकर सबको वहाँ से हटा दिया। फिर मधुर स्वर में रतनसिंह से पूछा-क्या तुम्हारी माता हैं। रतनसिंह ने रोते रोते कहा-महाराज मैं उजड़ गया, मेरी माँ मर गयी। मुझे कोई देखने वाला नहीं। यह सुनकर हे भक्तवत्सलमाधव ! आपने वात्सल्य से उसे गोदी में बैठा लिया जैसे माता यशोदा अपने दुलारे को गोदी में बैठाती थी। भक्त जिन चीज़ों की इच्छा करते हैं, उनकी तो पूर्ति सन्त या भगवान् से ही होती है। आपने रतनसिंह से बहुत मीठे और प्यार भरे शब्दों में कहा-उधर देखो मंदिर में पीताम्बरा माँ की जो मूर्ति

है वही तेरी सच्ची माँ है। जन्म देने वाली माता तो किसी का जीवन पर्यन्त साथ नहीं देती हैं, और

रतनसिंह से बहुत मीठे और प्यार भरे शब्दों में कहा-उधर देखो मंदिर में पीताम्बरा माँ की जो मूर्ति

है वही तेरी सच्ची माँ है। जन्म देने वाली माता तो किसी का जीवन पर्यन्त साथ नहीं देती हैं, और जो जगत् माता है, वह सदैव ही रहती है तथा अपने जनों का सदा ध्यान रखती है। मैंने अपनी जन्म देने वाली माता की सेवा न कर और उसे छोड़कर इस विराजित श्री पीताम्बरा की सेवा की है, इस प्रकार तू भी इसी की सेवा कर। हे अमृतसागर ! अविनाशी ! पूर्णातिपूर्ण ! आपने उस बच्चे को पुत्रवत् पाला, यज्ञोपवीत कराया, दीक्षा दी। आपके जैसे महान् विरक्त ने जैसे यशोदा माता ने नन्द दुलारे को अपने आँचल में छुपाकर रखा, उसी तरह से इस बच्चे को भी अपनी करूणा के आँचल में रखा। हे निरन्जन ! आपने सबका रन्जन किया। श्री स्वामीजी महाराज की जय। ''श्री स्वामी कथासार'' के इस अध्याय का विशेष रूप से बार-बार पाठ करने और सुनने से मोक्ष की प्राप्ति होती है। किसी कुत्सित भावना से ''श्री स्वामी कथासार'' पूरे का अथवा किसी एक अध्याय का भी पाठ करना और सुनना निषिद्ध है।

अब इसको भगवती श्री पीताम्बरा माता को अर्पित करें।

।। इति द्वादश अध्याय समाप्त।।

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

त्रयोदश अध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे पशुपतिनाथ! आपने इस जगत् की रचना की, अपनी लीलाभूमि बनाया। आप ही यहाँ लीला नायक हैं और आप ही साक्षीभूत। अलख होकर भी अनेक रूपों में प्रकट हो रहे हैं। पिता और पुत्र दोनों ही स्वरूपों में आप ही विद्यमान हैं। आप स्वयं ही गौ माता का रूप धारण करते हैं और बछड़े के रूप में होकर उसी माता का आप ही दूध भी पीते हैं। ब्रह्म के आनन्द रस को ब्रह्म ही ग्रहण कर रहा है। यदि बछड़े का जन्म न होता तो दूध के आनन्द को कौन ग्रहण करता ? हे पूर्ण ब्रह्मज्ञानराशि! आपके प्रिय भक्त भी आपकी करूणा का, आपकी लीला का दुःख हो या सुख, सब में ही आनन्द देखते हैं, रस ग्रहण करते हैं। क्योंकि वे जानते हैं कि एक सच्चिदानन्दन ही हैं जो चराचर में व्याप्त हैं। सामान्य लोग जिसे दुःख समझते हैं, भक्तों के लिए वह सुख है, क्योंकि उसमें "आपका" रस है। यह गुप्त रहस्य भक्त ही जानता है। श्रीमद् भागवत् में भगवान् ने बार-बार श्रीमुख से कहा है-केवल अनन्य भक्ति के द्वारा ही मेरा यह यथार्थ ज्ञान होता है कि मैं कैसा हूँ और मेरा प्रभाव कितना है। जिस भक्ति की इतनी महिमा है वह भक्ति जिसके हृदय में हो, उस भाग्यवान् भक्त के महत्त्व का वर्णन भला कौन कर सकता है ? वास्तव में भगवान् और भक्त नाम मात्र के लिए ही पृथक् हैं। भक्त भगवान् के साकार विग्रह का ही नाम

है। भगवान् स्वयं ही कहते हैं - मैं तो भक्तों के अधीन हूँ, कोई मेरे प्रति अपराध कर दे तो उसे मैं क्षमा भी कर सकता हूँ, लेकिन भक्त-द्रोही के अपराध को मैं क्षमा कर सकने में असमर्थ हूँ। यहीं तक नहीं भगवान् स्वयं भक्तों का भजन भी करते हैं, ऐसा शास्त्रों का मत है। एक गृहस्थ आर्थिक कठिनाईयों से परेशान होकर अपना घर छोड़कर भटकता हुआ महाराज जी के पास आया। महाराज जी ने उसकी दीनता और परेशानी की अवस्था देखकर उसे अपने पास रखवाया और स्नान करवाकर उसे मंत्र दिया। सन्त ऐसा कार्य करते हैं ताकि सामान्य जन अपने भविष्य को समझ जाए। वह कुछ दिन रहकर मंत्र जप करने लगा, फिर तो उसे आनन्द आने लगा और जीवन में आशा की किरण फूटने लगी। वह नित्य महाराज जी से माता के साक्षात् दर्शन कराने का अनुरोध करने लगा। उस युवक का भजन करने में मन इतना रम गया कि उसने यह निश्चय कर लिया, वह सन्यास लेगा। उसकी बड़ी आर्तता और तीव्रता देखकर कई अन्य भक्त भी श्री महाराज से उस युवक का पक्ष लेकर उसे संन्यास दीक्षा देने की प्रार्थना करने लगे। एक दिन उन लोगों से कहा कि तुम लोग बिना विचारे बात मत किया करो। कोई भी कार्य करना हो तो सबसे पहले साधन, परिणाम, लोक कल्याण और आत्म कल्याण पर दृष्टि डालना चाहिए। श्री प्रभु ने आगे बताया कि गृहस्थ लोगों को सन्यास की दीक्षा नहीं देनी चाहिए, क्योंकि उसका पहले से चला आ रहा आश्रम दूषित हो जाता है। सन्यासी को पूर्ण ब्रह्मचर्य व्रत का पालन करना होता है। सन्यास धर्म में बड़े कठोर नियम होते हैं, जिनका पालन करना बहुत कठिन होता है। इसलिए मेरे गुरु ने जब मुझे सन्यास दीक्षा दी थी तो यह आदेश दिया था कि कभी गृहस्थ को सन्यास दीक्षा न देना और न ही किसी को अपना उत्तराधिकारी बनाना तथा न ही एक स्थान पर आश्रम बनाकर रहना, उसका कारण मैंने तुम लोगों को बता दिया है। इसी बीच आपको ज्ञात हो गया था कि उस लड़के

के माँ, भाई-बहिन, स्त्री सब हैं। आप ने उचित समय देखकर उससे कहा कि साक्षात् दुर्गा तेरे घर बैठी है और तू उसकी सेवा से दूर भाग खड़ा हुआ है, तो फिर इन आँखों से जगदम्बा के दर्शन कैसे कर पाएगा। इस प्रकार उसे चेतना देकर घर जाकर माँ की सेवा करने के लिए और गृहस्थ धर्म का ठीक प्रकार से पालन के लिए वापस भेज दिया। आगे आपने बताया-गृहस्थ आश्रम सबसे बड़ा आश्रम है। इसी से अन्य आश्रमों का पोषण होता है। बड़े-बड़े सन्त सद्गृहस्थ हुए हैं। तुम लोग गृहस्थ धर्म का ठीक-ठीक पालन करते हुए अपने आचार-विचारों को पवित्र रखोगे, परमात्मा को याद रखोगे तो परमात्मा ज़रूर मिलेगा। जिस तरह स्त्री पानी से भरे हुए घड़े पर घड़े सिर पर रखकर कुएँ से अपनी दूसरी सहेलियों से बात करती हुई चलती है. लेकिन उसका ध्यान घड़े पर ही लगा रहता है। उसी तरह गृहस्थ को भी सब काम करते हुए परमात्मा का सदैव ध्यान करना चाहिए। आपने किसी को अपना उत्तराधिकारी नहीं बनाया। शिष्य या चेले के रूप में किसी को भी सन्यास की दीक्षा नहीं दी। स्थान की व्यवस्था हेतु भक्तों ने एक ट्रस्ट ज़रूर बना लिया ताकि माता की पूजा-पाठ सुचारू रूप से होती रहे। हे कृष्णगोविन्द ! आपने कहा-हमें न स्थान बनाने की चिन्ता रही और आगे बिगड़ भी जाय तो दुःख नहीं। लेकिन कर्तव्य के रूप में इसकी व्यवस्था करनी है। यदि व्यवस्थापक अच्छे लोग निकले तो स्थान बहुत समय तक चलेगा अन्यथा नाशवान तो दुनिया की सभी वस्तुएँ हैं। एक बार दतिया रियासत में हसमत अली दीवान पद पर नियुक्त हुए थे। ये बड़े घमण्डी और सनकी थे। रियासत के उच्चवर्गीय जागीरदार एवं अन्य संभ्रान्त नागरिक दीवान के उपेक्षा भरे अशिष्ट व्यवहार से घोर असंतुष्ट हो गए थे। जैसी करनी वैसी भरनी इस न्याय से झूठे अंधकार और घमण्ड का फल भी मिलता है। बुन्देलखण्ड के पोलिटिकल एजेन्ट की असहमति होते हुए भी दतिया के राजा गोविन्दसिंह ने दीवान की नियुक्ति तीन वर्ष के लिए

कर ली थी। इससे दीवान हसमतअली का दिमाग़ आसमान पर चढ़ गया था। वह दीवान, राजा गोविन्दसिंह की भी अवहेलना करने लगा। राजा गोविन्दसिंह ने पूज्यपाद स्वामीजी महाराज से इस विषय में सहायता की प्रार्थना की परन्तु पूज्यपाद ने यह कहकर टाल दिया कि हम राज्य के झंझटों में नहीं पड़ते। एक दिन घोड़े पर सवार होकर दीवान रानी की ड्योढ़ी पर पहुँचा। दोपहर के समय अचानक दीवान के आने पर रानी को आश्चर्य हुआ तथा कारण जानने की इच्छा से पुछवाया। दीवान ने उत्तर दिया कि-मैं हर तरह की ख़िदमत के लिए तैयार होकर हाज़िर हुआ हूँ। दीवान के इस असभ्यतापूर्ण उत्तर से रानी का क्रोध सीमा लाँघ गया। तुरन्त राजा को ख़बर दी गयी, राजा ने उसे हटाना चाहा। किन्तु सावधि-नियुक्ति के कारण पोलटिकल विभाग ने दीवान को हटाने में सहमति नहीं दी। तब रानी ने कर्नल रघुनाथसिंह के द्वारा श्री स्वाजीजी महाराज से दीवान द्वारा किए गए अभद्र व्यवहार का समाचार भेज कर प्रार्थना की कि दीवान को पदच्युत करने का उपाय करने की कृपा करें। पहले श्री प्रभु ने यह कहकर मना कर दिया कि - साधु को राजकीय कार्यों से क्या प्रयोजन। परन्तु रानी के प्रति दीवान द्वारा कहे गए शब्द जब बताए गए तो श्री मुख से निकला- ''स्त्री'' का अपनमान करने वाला दतिया में नहीं रहेगा और आज्ञा दी राज्याचार्य व पुरोहित को मेरे पास भेज दो। राज्याचार्य पं. श्रीराम द्विवेदी तथा राजपुरोहित श्री नन्दू पुरोहित एवं पण्डित बाबूलाल गोस्वामी आपके पास आए। रात्रि में उनको एक मन्त्र बताकर कहा कि इसका जप करो। सामने मौलश्री का घना वृक्ष था। थोड़ी देर में वृक्ष बड़े वेग से हिलने लगा जैसे तूफ़ान आया हो, लेकिन वहाँ न तो आँधी थी न तूफ़ान। तभी श्री प्रभु ने कहा ''दीपक बुझा दो क्योंकि काम हो गया है और चुपचाप जाकर सो जाओ''। दूसरे दिन पं. बाबूलाल गोस्वामी ने जो बाद में चलकर नवभारत टाइम्स, दिल्ली के संवाददाता बने, विनय पूर्वक वृक्ष हिलने का

करण पूछने लगे- तब महाराज जी ने कहा ''एक अलौकिक शक्ति आई थी। दीवान हसमत को कल दोपहर तक बरख़ास्त कर दिया जाएगा।'' ठीक दूसरे दिन दीवान को बरख़ास्त करने का हुक्म मिल गया। समुद्र मंथन के समय जब कालकूट विष की ज्वाला से सब देवता और राक्षस जल उठे तब आप दया करके तुरन्त उस विष को पी गए। कामदेव को भस्म करके फिर बिना ही शरीर जगत् में रहने दिया। द्रौपदी की रक्षा के लिए तो आप अपना आपा ही भूल कर दौड़ आए। हे विश्वात्मन् ! जो एक बार आपकी शरण में आया कभी खाली हाथ नहीं गया, उसकी लाज अपनी ही मान ली। इस प्रकार देश के विभाजन के समय नोआखाली में हज़ारों युवतियों के साथ बलात्कार, अपहरण और पशुता का क्रूर कृत्य हुआ। हे दुःखहर्ता-सुखकर्ता आदिनाथ ! आप इस घटना को सहन नहीं कर सके और चिन्तित रहने लगे। आश्रम पर आने वाले लोगों को बहुधा आप कहते- जिस देश में नारी का सम्मान होता है, वह देश शक्तिशाली और विजयी होता है। तुम लोग नारी का सम्मान करना भूल गए हो, इसी कारण आज यह दिन देखना पड़ रहा है। तुम लोग समझो, नारी साक्षात् भगवती का ही रूप होती है। शक्ति का सम्मान करने से ही शक्ति आती है। एक दिन बलवीरसिंह बहुत से अख़बार लेकर आश्रम पर आए और प्रणाम कर निवेदन किया- हे सत्यधर्म परायण ! नोआखाली में हुए अत्याचार पर जबकि देश के बड़े बड़े सुधारक और राष्ट्रवादी मौन थे, उस समय जो आपने वक्तव्य दिया था वह देश के हिन्दी अंग्रेज़ी के अख़बारों में छप गया है। महाराज जी ने उत्तर दिया- अच्छा है लोगों में जागृति आए और वे अपना कर्तव्य समझें। अख़बारों में क्या लिखा है बताओ। श्री बलवीरसिंह फ़ौजदार ने पढ़कर सुनाया कि पूरे बंगाल में जो बलात्कार से धर्म-परिवर्तन तथा अधार्मिक बातें हिन्दुओं के साथ की जा रही हैं, सिद्धान्ततः हिन्दु समाज में ऐसे हिन्दुओं को मिला लेना धर्म एवं धर्मशास्त्र के विरूद्ध नहीं है। हिन्दु धर्म के

बड़े-बड़े धर्माचार्यों तथा पण्डितों एवं समाज का इस समय कर्तव्य है कि अपनी अपनी व्यवस्थाओं के द्वारा उन असहाय लोगों स्त्रियों को पुनः समाज में मिलाने की शीघ्रातिशीघ्र व्यवस्था करें। यह वाचन सुनकर हे लक्ष्मीनारायण ! आप बड़े प्रसन्न हुए और फिर पुनः गम्भीर होकर बोले- आज तुम लोगों की जो दुर्दशा है, विशेषकर हिन्दु जाति की वह नारी का सम्मान न करने के कारण ही है। इसलिए परमात्मा की माता के रूप में उपासना होती है। बिना शक्ति के कोई भी लड़ाई नहीं लड़ी जा सकती। वहाँ सब भक्त और सेवकगण यह सुनकर बड़े हर्षित हुए और आपकी जय जयकार करते हुए स्तुति करने लगे- हे द्रौपदीरक्षक ब्रजनन्दन ! आपने द्वापर युग में भी स्त्रियों की लाज रखने के लिए अपना परम स्वरूप प्रकट किया था। आपने दतिया की रानी की लाज की रक्षा ही नहीं की वरन् देश की लाज की रक्षा की। वही स्वरूप आपने इस घटना द्वारा प्रगट किया है और निर्दोष अबलाओं की रक्षा की है। आपका प्रेमयोग समस्त योगों से बड़ा है। हे श्रोताओं ! एक बार बहुत से विदेशी लोग श्री प्रभु के दर्शनों के हेतु दतिया आए। कुछ वार्तालाप के बाद ही वे लोग समझ गए कि वे एक महान् दार्शनिक महात्मा के आगे बैठे हैं। विदेशी लोग विद्वानों का बड़ा आदर करते हैं। उन लोगों को बड़ा आश्चर्य हुआ कि- संसार का यह महानतम दार्शनिक कई देशी विदेशी भाषाओं का जानकार और प्रकाण्ड पण्डित है, इसका न कोई खाने का प्रबन्ध है और न रहने का। एक उजड़े तालाब के किनारे पड़ा हुआ है। वे सब लोग वहीं जमकर बैठ गए और कहने लगे कि महाराज आप इतने बड़े विद्वान् हैं लेकिन आपके ज्ञान विज्ञान का उपयोग आपके देशवासी नहीं ले पा रहे हैं, ज्ञानी पुरुषों का सम्मान करना तथा उचित आदर देना तो सभी लोगों का कर्तव्य है। आप हमारे देश जर्मनी चलिए हमारे वहाँ विद्वानों की बड़ी क़द्र होती है। वहाँ हम तो क्या सारा देश ही आपको सिर आँखों पर बैठाएगा और आपका सम्मान करके

अपना गौरव समझेगा। श्री प्रभु आपने मना कर दिया, लेकिन वे लोग बहुत जिद्द करने लगे तब श्री आपने कहा- ''जो व्यक्ति जिस देश में जन्म लेता है वह उसी देश का होता है। चाहे वह कैसी भी स्थिति में क्यों न रहे। यदि आपके देश में मेरी आवश्यकता होती तो परमात्मा मुझे आपके देश में ही जन्म देता। जिससे जिसको सीखना होता है वह उसके पास जाता है, यदि हमें आपसे कुछ सीखना है तो हम आपके देश आएँगे, यदि आपको हमसे सीखना है तो आपको हमारे देश में आना पड़ेगा तथा यहाँ के आचार-विचार का पालन करना होगा''। बाद में हताश होकर और यह कहकर कि सारे संसार में घूमने (विश्व भ्रमण) के बाद हम लोगों ने जिसे पूर्ण मानव और विद्वान्श्री कहा जा सकता है, उसके दर्शन किए। हम लोगों का भारत भ्रमण सफल हुआ। आपकी हमेशा याद रहेगी। विदेशी लोगों के जाने के बाद वहाँ आए भक्तों से महाराज ने बड़े नाराज़गी के स्वर में कहा- अंग्रेज़ हमारे यहाँ दो सौ वर्ष राज्य कर गए। उनमें चार गुण विशेष हैं- एक तो वे समय के पाबन्द होते हैं, दूसरे वे ईमानदारी से, मेहनत से, दृढ़तापूर्वक काम करते हैं, तीसरे राष्ट्रभक्त होते हैं, चौथे वे लोग विद्वानों का सम्मान करते हैं। किन्तु हम भारतवासी दो सौ वर्ष के सम्पर्क के बाद भी उनसे यह गुण ग्रहण नहीं कर सके। बल्कि उनके खाने व पहनने की नकल में लगे हैं। तुम लोगों में न तो, समय की पाबन्दी है और न ही दृढ़ता ही है। हम कितने पतित हो गए है। अपने देश को अपना कहने में शर्म करते हैं। हमें शिक्षा दी जा रही है कि हम भारत को अपना देश न कहें। बच्चों को पढ़ाते हैं कि भारत एक कृषि प्रधान देश है यह नहीं पढ़ाते कि हमारा देश कृषि प्रधान है। नेता कहते हैं हम ''इंडिया'' को यहाँ ले जाएँगे, वहाँ ले जाएँगे जैसे ''इंडिया'' किसी अन्य वस्तु का नाम है। यह नहीं कहते कि हम अपने देश को यहाँ ले जाएँगे, वहाँ ले जाएँगे। हम हार

गए या जीत गए न कहकर कहेंगे- इंडिया जीत गई या हार गई फिर अपनी मातृभूमि के प्रति प्रेम कैसे होगा ? यह कहकर श्री महाराज कुछ गम्भीर हो गए। भक्तगण और सेवक कुछ भयभीत से चुपचाप बैठे रहे अभी-अभी वे लोग विदेशियों के द्वारा जो सम्मान श्री महाराज का किया गया था, उससे बड़े प्रसन्न हो रहे थे, लेकिन इस उपदेश के कारण वे लज्जित से बैठे थे। कुछ क्षण पश्चात् ही अधमों का उद्धार करने वाले ओंकार महापुरूष ने आगे कहा कि- मेरे श्री सद्गुरू ने "आश्रम की स्थापना न करना" ऐसा कहा था, लेकिन मुझे तुम लोगों के लिए आश्रम बनाना पड़ा ताकि तुम लोग संगठन में रहना सीखो। यहाँ आकर शक्ति की आराधना करके शक्तिशाली बनो, समय की क़ीमत समझो। लोक कल्याण का काम एक स्थान पर रहकर ही किया जा सकता है। इसी कारण मुझे इस स्थान पर बैठना पड़ा। भगवान् उसी की मदद करता है जो सच्चे हृदय से उन्हें पुकारता है और क़दम आगे बढ़ाता है। यह कहकर बड़े खिन्न मन से बगीचे में चले गए। भटके हुए लोगों को सही रास्ते पर लाने के लिए ही तो परमात्मा सन्त रूप में स्वयं दिव्य जन्म लेता है। हे योगेश्वर नीलकण्ठ ! कौन नहीं जानता कि दतिया नगर के पीताम्बरापीठ आश्रम में आप पचपन वर्ष तक मनुष्यों द्वारा किए गए घोर पापों के फलस्वरूप उत्पन्न हुए भीषण ज़हर को पीते रहे, इतना ही नहीं महा-वियोग के बाद भी हे नीलकण्ठ ! स्वयं ही प्रस्तर विग्रह के रूप में वनखण्डेश्वर महादेव के मन्दिर में आकर विराजमान हो गए ताकि आपके भक्त कहीं पाप रूपी ज़हर की ज्वाला में जलकर भस्म न हो जाए। आप भक्तों के रक्षक जो हैं। उसी दिन संध्या के समय श्री प्रभु प्रसन्न मुद्रा में बगिया में विराजमान अनेक भक्तों से घिरे बैठे थे। एक भक्त भोलानाथ ने कहा-हे सत्यपुरुष लक्ष्मीनारायण ! आज प्रातः काल आपने जो हम लोगों की कमजोरी बताई, उससे हम लोग बहुत लज्जित हैं। हे बृजभूषण आनन्देश्वर ! हम लोगों ने अपने कर्म और

आचरण से विदेशों में यह धारणा उत्पन्न कर दी कि भारत-देश अनपढ़ एवं असभ्य, जंगली और ग़रीब नग्न रहने वाले लोगों का देश है। उन्होंने यहाँ की संस्कृति को नष्ट किया और उत्कृष्ट शास्त्र ग्रन्थों तथा वेद आदि को यहाँ से विदेश ले गए। बड़े-बड़े विदेशी धर्माचार्य धर्म का ढोंग फैलाने यहाँ आने लगे हैं। हे कलानिधि ! आपका आगमन दीनदुःखियों, साधु-सन्यासियों और धर्म की रक्षा के लिए ही हुआ है। बहुत से विदेशी धर्माचार्य धर्म का और ज्ञानाचार्य ज्ञान का ढोंग फैलाने यहाँ श्री चरणों में भी आए। किन्तु शर्मिन्दगी से सिर झुकाए वापस चले गए। आपने देश का गौरव बढ़ाया है। जय-जय समर्थ, जय जय योगिराज। "इसी बुद्धि से चल रहे उपदेशों के दान। गुरु कोई मानव नहीं पारब्रह्म ही जान।।" तीन विदेशी धर्माचार्य भारत भ्रमण करते-करते दतिया आ पहुँचे। सन्त फ्रांसिस, सन्त जोज़िफ और सन्त पीटर का दतिया के राजकीय विश्राम गृह में रात्रि को विश्राम का प्रबन्ध किसी के द्वारा पूर्व से ही किया हुआ था। ये तीनों सन्त योग्य और जिज्ञासु प्रवृत्ति के थे। दतिया में वे श्री स्वामीजी की ख्याति को सुनकर ही आए थे। अनेक लोगों ने प्रभु की विद्वत्ता एवं साधना का गुणगान किया था क्योंकि उदय हो रहे सूर्य के प्रकाश को कौन रोक सका है ? वे तीनों सन्त चोगा पहने श्री स्वामी जी के दर्शनों के लिए आश्रम आए। प्रभु उस समय आश्रम के प्राङ्गण में सैंभल के एक वृक्ष के नीचे विराजे थे। श्री प्रभु का उन्होंने अभिवादन किया और फिर बैठ गए। वे टूटी-फूटी हिन्दी भी बोलते थे। बड़े जिज्ञासु भाव से उन विदेशी धर्माचार्यो ने हे सन्तशिरोमणि ! आप से पूछा- श्रीमान् ! मनुष्य ईश्वर से मिलने के लिए बहुत से प्रयत्न करता है और फिर खुद उससे मिलने जाता है। हम जानना चाहते हैं कि क्या कभी ईश्वर भी मनुष्य से मिलने के लिए आता है ? श्री स्वामी जी मुस्कराए और कहने लगे- हे ईश्वर को चाहने वाले बन्दो ! ईश्वर मनुष्यों से मिलने के लिए हमारे देश में तो आता है, लेकिन तुम्हारे देश में आता

है या नहीं, तुम लोग अनुसंधान करो। यह सुनकर वे पुनः प्रभु अच्युतानन्द भगवान् से पूछने लगे- क्या आपने कभी ईश्वर को देखा है ? श्री गुरुदेव ने उत्तर दिया- मैंने तो ईश्वर को नहीं देखा है लेकिन क्या तुमने भी कभी अपने प्रभु यीशुख्रीष्ट को देखा है ? वे विदेशी साधु कहने लगे- नहीं। तब प्रभु श्री ने कहा- यदि लड़का (पुत्र) होता है तो उसका पिता भी होता है। जिस काया का पुत्र होता है। उसी काया का बाप होना आवश्यक है अन्यथा पिता नहीं माना जा सकता। रात्रि के समय अपने प्रभु यीशु से पूछना कि आपका पिता कौन है और हमें उनके दर्शन कराओ। यह सुनकर वे तीनों विदेशी साधु राजकीय विश्राम गृह चले गए। रात्रि में सोने से पहले उन तीनों ने अपने प्रभु यीशु से उसी प्रकार प्रार्थना की। प्रार्थना करने के पश्चात् वे तीनों अलग-अलग तीन कमरों में सो गए। रात्रि में तीनों साधुओं ने एक ही से स्वप्न देखे। उन्होंने देखा कि यीशूख्रीष्ट उनके पास आए और उनसे कहने लगे कि मेरे पिता वे ही हैं जिनके तुमने दिन में दर्शन किये थे। यीशुख्रीष्ट ने श्री स्वामीजी का एक चित्र भी उन साधुओं को दिखाया। सूर्योदय से पहले ही वे तीनों विदेशी सन्त आश्रम पहुँच गए और बरामदे में विराजे श्री प्रभु स्वामीजी को साष्टाङ्ग नमन कर कहने लगे - हमने यीशुख्रीष्ट के पिता को देख लिया है और यह भी जान गए हैं कि ईश्वर मनुष्य से मिलने के लिए स्वयं भी आता है। भारत आने का उद्देश्य हमारा पूरा हो गया, अब हम अपने देश चले जाएँगे। प्रिय भक्तों, आगे के गम्भीर विषय का पठन-पाठन विशेष रूप से ध्यानपूर्वक करें। भगवान् साधना मन्दिर का उद्घाटन करने के लिए झाँसी पधारे। उद्घाटन के पश्चात् अपने भक्तों के साथ दतिया वापस आए। उनके साथ लौटते समय झाँसी के वैद्यजी श्री रामनारायण जी तथा एक रमते हुए सन्यासी भी दतिया पधारे। विश्राम के पश्चात् जब महाराज जी बगिया में मूढ़े पर विराजे तो मिस एलिस बोनर भी अपने कमरे से आकर प्रणाम कर बैठ गई। मिस एलिस बोनर

स्विट्झरलैण्ड की रहने वाली थी। काशी से दतिया आकर आपसे ब्रह्मविद्या पढ़ा करती थी। जब भी वह आश्रम में आती, वहाँ एक डेढ़ महिने रहा करती थी। उस वक्त महाराज जी बड़ी प्रसन्न मुद्रा में थे। पूर्ण ब्रह्मज्ञान-राशि श्री प्रभु ने एलिस बोनर से पूछा- आप काशी छोड़कर जो सभी विद्वानों की खान है तथा जहाँ सभी विषयों के चूडान्त (मूर्धन्य) विद्वान् मिलते हैं, यहाँ क्यों आया करती हो ? उसने उत्तर दिया- हे वेदवेदांगविशारद महाराज ! आपको छोड़कर कोई भी दूसरा ऐसा विद्वान् नहीं है जो इस विद्या को समझा सके। हे छिन्नशंशय ! आपको इसका शास्त्रीय और क्रियात्मक दोनों ज्ञान हैं। सारे विश्व के आप सच्चे शिरोमणि सन्त हैं। यह सुनकर रमते हुए साधु जो झाँसी से वैद्यजी के साथ आए थे और देश के अनेक भागों में बड़े-बड़े साधुओं से मिल चुके थे, उन्होंने आपसे कहा- कि यह महिला ठीक ही कह रही है। मैंने मूलाधार, मणिपुर और स्वाधिष्ठान चक्रों के भेदन की क्रिया तो प्राप्त कर ली है, किन्तु अनाहत का भेदन नहीं हो पा रहा है। मैं सब जगह भटक चुका हूँ, कोई भी यह क्रिया बताने में समर्थ नहीं है। मैं अब आपकी शरण में आया हूँ। हे गुणवारिधि ! आप कुछ मुस्कराए और सन्यासी को आश्रम में ठहरने के लिए कहा। वैद्यजी ने श्री महाराज जी से निवेदन किया कि - श्री प्रभु ! इस समय बड़े-बड़े साधक और विद्वान् यहाँ बैठे हैं कृपया कुछ कुण्डलिनी के विषय में बताएँ तो हम लोगों का भी ऐसे मौक़े पर भला हो जाएगा। श्री प्रभु यह सुनकर बड़े प्रसन्न हुए और उन्होंने कहा बहुत अच्छा प्रश्न पूछा। मैं तुमसे प्रसन्न हूँ, इससे मुझे बड़ा हर्ष हुआ। अच्छा, कुण्डलिनी के विषय में तुम लोग ध्यान पूर्वक सुनो- कुण्डलिनी का उत्थान एक अत्यन्त कठिन कार्य है। इस कार्य में प्राणायाम का साधन मुख्य है। कुछ लोग कुण्डलिनी शक्ति को वायु या एक प्रकार की नाड़ी मानते हैं, तथापि इस विषय में वास्तविकता ऐसी है- जैसे रेडियम लगी हुई घड़ियों में अन्धकार एवं प्रकाश दोनों एक साथ रहते

हैं, इसी तरह बिजली के बारीक़ तारों के सदृश मूलाधार चक्र के ऊपर की और चक्करदार साढ़े तीन फेरे में प्रकाश जो कुछ पीले रंग का होता है अन्धेरे के साथ मिला हुआ दिखाई देता है। उस अन्धकार को हठयोग की क्रियाओं द्वारा हटाया जाता है, अन्धकार के हटने के बाद अपने आप वह गोलाकार प्रकाश सीधा होकर उर्ध्वगमन करता है। जैसे चक्करदार तार को खींच कर सीधा करते हैं, वैसा ही इस विषय में भी समझना चाहिए। कुण्डलिनी की उर्ध्व गति ठीक साँप जैसी होती है। भिन्न-भिन्न चक्रों में से इसका जो गमन है, वही अनेक प्रकार की सिद्धियों का जनक है। सहस्रार में पहुँच कर चिन्तन द्वारा पुनः उसको मूलाधार में स्थापित किया जाता है, इसमें कोई विशेष श्रम नहीं होता है। सब चक्रों के अनुभव के बाद वह अपने आप अपने स्थान में पूर्व रूप में चली जाती है। एक बार अभ्यास में आने पर फिर कठिनाई का अनुभव नहीं होता। मूलाधार, स्वाधिष्ठान और मणिपुर तक तो इसकी गति का स्पष्ट दर्शन नहीं होता, मणिपुर से ऊपर प्रत्यक्ष रूप में साधक इसको देखता है। जिस समय कुण्डलिनी की जागृति होती है उस समय मेरुदण्ड के मार्ग में गम्भीर प्रकाश छा जाता है, जो अपूर्व आनन्द का जनक होता है। बस इतना ही उत्थान क्रिया का रहस्य है। भस्त्राकुम्भक, भुजंगासन, विपरीतकरण मुद्रा, महामुद्रा, मयूर आसन, पश्चिमोत्तान आसन, मूलबन्ध, उड़ीयान बन्ध, जालन्धर-बन्ध और सूर्यबेध प्राणायाम इस कार्य में सहायक और अत्यन्त उपयोगी साधन हैं। इन हठयोग के साधनों के अभ्यास काल में कुण्डलिनी स्तोत्र तथा कुण्डलिनीक़वच, महाविद्या स्तोत्र एवं कवच का पाठ तथा गुरु ग्रन्थ साहब का, सुखमनी साहब का पाठ एवं विचार भी इस कार्य का सहायक है। मन्त्र शास्त्र में मन्त्र की सिद्धि, देवता का साक्षात्कार, मन्त्र-चैतन्य भी कुण्डलिनी से ही माने गए हैं। तन्त्र में इसे इस जगत् का अभिन्न निमित्तोपादान कारण बताया गया है। इसके उत्थान होते ही शरीर में रहे हुए विभिन्न चक्रों का ज्ञान योगी को अनायास ही हो

जाता है- १. मूलाधार, २. स्वाधिष्ठान, ३. मणिपूर, ४. अनाहत, ५. विशुद्धि और ६. आज्ञा यही षट्चक्र कहलाते हैं, इनसे ऊपर सहस्रार है। कुण्डलिनी की जागृति भक्तियोग, भगवन्नामजप, ज्ञानयोग आदि द्वारा भी होती है, तथापि ये हठयोग की क्रियाएँ ही पूर्ण सफलता पर पहुँचाती हैं। अन्य साधन इस विषय में मन्द गति वाले हैं। हठयोग के सामने वे दुर्बल हैं इसकी उग्रता को देखकर दुर्बल चित्त से मनुष्य भयभीत होकर इसकी निन्दा भी करने लगते हैं, तथापि योग्य गुरु के समीप रहकर यह साधन सुखपूर्वक किया जा सकता है। इसके साधन से शारीरिक, दैविक और आध्यात्मिक तीनों लाभ होते हैं, वास्तव में यह साधन-राज है। नेती, धौत, कर्म आदि षट्कर्म से शरीर शुद्ध करके सिद्धासन या वज्रासन से बैठकर पहले-पहल २० से आरम्भ करके ८० तक प्राणायाम तीन मास तक अभ्यास करना चाहिए, क्रम से बढ़ाते हुए ३२० तक करने से योग सिद्ध होता है। इस प्रकार अभ्यास से ऐश्वर्यकामी को ऐश्वर्य एवं मुमुक्षुओं को परम पद की प्राप्ति का द्वार खुल जाता है। यह सुनकर सब लोगों ने कहा- महाराज ! आज हम लोगों का बड़ा शुभ दिन था जो इतने अत्यन्त कठिन विषय को आपके द्वारा अत्यन्त सरल करके बताए जाने पर हम लोगों के शास्त्रीय ज्ञान में वृद्धि हुई। वैद्यजी ने, जिनको किसी काम से कलकत्ता जाना था, आपसे जाने की इजाज़त माँगी। हे सर्वप्रकाशक ! आपने उनको कहा- सुनो वैद्यराज कलकत्ते में एक सेठ रामसहाय मोर चितरन्जन रोड पर रहते हैं, उसने सभी पुराणों का प्रकाशन किया है। एक निरुक्त पर यज्वा टीका प्रकाशित की है, वह उसे मुफ़्त में ही बाँटता है, वह पुस्तक ले आना। लेकिन देखो कैसा ज़माना आया है। वह वणिक् (बनिया) विद्या का प्रचार करता है, यह काम तो तुम ब्राह्मणों का है। क्या तुमको कोई रुपये पैसे की कमी है ? वैद्यजी ने विनम्रतापूर्वक कहा - हे नित्यनिर्मल ! मुझे अपनी भूल का भान आपने करा दिया, आप मार्गदर्शन करें मैं भी धार्मिक पुस्तकों का

प्रकाशन करूँगा और प्रणाम करके वे चले गए। कुछ दिनों में वह रमता साधु जो महाराज जी की आज्ञा से आश्रम में ठहर गया था, सभी चक्रों के भेदन की क्रिया सीखकर वहाँ से चला गया। बहुत क्या वर्णन करें। इसी प्रकार बीज मन्त्रों के एक जिज्ञासु पंडित जी, हे अकालपुरुष ! आपके पास पहुँचे। बीज मन्त्रों की रचना और प्रयोग विधि के सम्बन्ध में आपने दो-चार प्रारंभिक बातें ही कही थीं कि इतने में ही उसको अनुभव हो गया कि वह अपने विशाल अध्ययन के बाद भी आपके श्री चरणों में बैठकर प्रश्न करने लायक़ नहीं है। इसके पश्चात् वे प्रायः मौन बैठकर केवल उपदेश सुनते थे। कुछ दिनों बाद एक दिन श्री महाराज बगिया में मूढ़े पर विराजमान थे और आपके स्नान की तैयारियाँ हो रही थी, उस समय गरम पानी का बर्तन आपके एक सेवक भोलानाथ ने सिगड़ी पर से उठाया लेकिन पैर फिसल जाने की वजह से वह सारा पानी सेवक के पाँव पर बिखर गया जिससे उसका पूरा पाँव जल गया। उस समय झाँसी के वैद्य जी कलकत्ता से कुछ पुस्तकें लाए थे। उनके साथ कलकत्ता के वेणीशंकर शर्मा भूतपूर्व संसद सदस्य जिन्होने स्वामी विवेकानन्द पर एक बहुत उच्च कोटि की पुस्तक लिखी थी (अनफारगैटन चैप्टर आफ विवेकानन्द) वे भी पुस्तक भेंट करने के पश्चात् वहीं बैठे थे। वैद्य जी ने उसके जले हुए पाँव को देखकर कहा - जल्दी ही दवा लगानी चाहिए। नहीं तो पाँव में फफोले हो जाएँगे और फूटने पर तक़लीफ़ होगी। यह सुनकर हे अनन्तनामी शुद्धात्मा ! आपने कहा - हम ग़रीब लोग हैं दवाई कहाँ से लाएँगे। मिट्टी को दवाई समझ कर काम चला लेते हैं और भोला को आज्ञा दी कि उस गीली जगह से जो पानी बिखरने से हो गई है, मिट्टी उठाकर पाँव पर मल लो। भोला ने तुरन्त आज्ञा का पालन किया। थोड़ी देर बाद ही लोगों ने प्रत्यक्ष देखा कि पाँव एकदम ठीक हो गया। श्री प्रभु ! कलकत्ता से आये वेणीशंकर शर्मा से बड़े प्रेम पूर्वक बातचीत करने लगे और कहा - अरे पण्डित ! तुमने विवेकानन्द

की पुस्तक में यह तो लिखा ही नहीं कि अजीतसिंह कौन से ठाकुर थे। मुझे फिर बताना। यह सुनकर शर्मा जी एकदम घबरा गए और सोचते ही रह गए कि अभी-अभी ही तो पुस्तक भेंट की है जिसे इन्होने ठीक से खोला भी नहीं है। फिर भी इन्हें यह कैसे ज्ञात हो गया और देखो कितनी बारीक़ बात बोल रहे हैं। भक्त अपने मन में विचार करते हैं कि सन्त तो सर्वसाक्षी सर्वज्ञ होता है। भोले लोग सच्चे सन्त को पहचान नहीं पाते इसलिए तरह-तरह की शंका और भ्रम में फँसे रहते हैं। जैसे झाँसी निवासी खेर नाम का युवक श्री योगेश्वर की ख्याति सुनकर दतिया आया, लेकिन आपसे मिलकर उसको बड़ी निराशा हुई। वह यह सोचकर आया था कि कोई महात्मा आसन लगाएँ हुये, शरीर से दुबले पतले, गंभीर धूनी रमाए बैठे होंगे, परन्तु उसने देखा-यहाँ तो मूढ़े पर एक मोटा साधु बैठा चाय पी रहा है। यह कैसे योगी हो सकता है ? हे सुदर्शन ! आपकी तीनों लोकों को भेदने वाली आँखों से उसकी निराशा छुप नहीं सकी। सेवक को कहकर खेर साहब को बुलवाया और बोले - क्या तुम हाथ-पैर, ऊँचे-नीचे करने की, नटकला को योग समझते हो ? योग का मतलब तो आत्मा का परमात्मा से मिलन है। अंधेरा दूर करने के लिए चित्रांकित सूर्य व्यर्थ है। सहसा वह एकदम सोच में पड़ गया कि इन्होने मेरे अंदर की बात कैसे जान ली। ये ज़रूर अन्तर्यामी योगेश्वर हैं। अपनी भूल का अहसास होने पर कहा-महाराज ! मुझसे भूल हुई। आप ठीक कह रहे है। मेरी सारी ग़लत धारणाएँ जड़ से नष्ट हो गयी हैं, अब आप मुझे अपने चरणों में जगह दें ताकि मेरा तथा मेरे परिवार का कल्याण हो। हे सर्वतत्त्व-पोषक ! आप यह सुनकर बड़े प्रसन्न हुए। आपने आगे कहा - अपनी त्रुटि को मानने वाला ही सुधार कर सकता है। कोई भी कार्य जब तक स्वयं अनुभव न कर लिया जाय तब तक अज्ञान रहता है। अधूरी ज़िम्मेदारी पर कोई बात किसी को नहीं बताना चाहिए। यह वार्तालाप चल रहा था कि घनश्याम दुबे ने चरणों

में ... निवेदन किया, कुछ विद्वान लोग वृन्दावन से आये हैं और आपके दर्शन

कोई बात किसी को नहीं बताना चाहिए। यह वार्तालाप चल रहा था कि घनश्याम दुबे ने चरणों

में आकर विनम्रतापूर्वक निवेदन किया, कुछ विद्वान् लोग वृन्दावन से आये हैं और आपके दर्शन करना चाहते हैं। क्या हुक्म है बताएँ। श्री प्रभु ने उत्तर दिया-इस समय मैं विशेष कार्यक्रम में व्यस्त हूँ, उनको ज़रा रूकने के लिए कहो और उनको आदर सत्कार से बैठाओं। भक्त के चले जाने पर श्री वासुदेव गोस्वामी से कहा कि अमेरिका से श्री विद्यानिवास मिश्र का जो पत्र आया है जिसका तुम अभी ज़िक्र कर रहे थे उसे पढ़कर सुनाओ। वासुदेव गोस्वामी ने पत्र पढ़कर सुनाया-लिखा था - चित्त में शान्ति नहीं मिलती क्या करूँ। मैं मानता हूँ कि आपसे ही वह शांति प्राप्त होगी जो मुझे यहाँ संकटों से पार करेगी। हे धर्माध्यक्ष ! विद्वत्पूज्य ! एक और जिज्ञासा है-श्री शंकराचार्य के प्रस्थान में तथा भदन्त नागार्जुन के माध्यमिक प्रस्थान में कौन से मुख्य भेद हैं। पाश्चात्य विद्वानों को इस विषय में निश्चित जानकारी नहीं है। अपने देश में भी प्राचीन लोगों ने इसका समाधान नहीं किया है। यदि आप इस भेद का विवरण भेज दें तो यह जन कृतार्थ होगा। आपने वासुदेव गोस्वामी को इसका समाधान लिखाया और आज्ञा दी कि इसे श्री विद्यानिवास मिश्र को केलिफोर्निया भेज दो। इस सबका विवरण पीठ से प्रकाशित लेखसंग्रह नामक पुस्तक में पूरा दिया हुआ है। थोड़ी देर बाद आपने वृन्दावन से आए विद्वानों को अपने पास बुलाया। उन्होने आकर निवेदन किया कि हम वृन्दावन के संस्कृत महाविद्यालय के प्राचार्य एवं आचार्य हैं, ऋग्वेद की एक ऋचा को समझना चाहते हैं, इस पर श्री प्रभु ने अपने एक भक्त को ऋग्वेद की प्रति लाने का निर्देश देते हुए ऋचा पर चर्चा प्रारंभ कर दी। इतने में ग्रंथ आया उसे पंडितों की ओर सरकाते हुए ज्ञाननिधि श्री महाराज ने कहा-अमुक पृष्ठ खोलिए अमुक स्थान पर ऋचा अंकित है, और वैसा ही हुआ। ऋचा संकेतित स्थान पर मिली। ज्ञानराशि श्री प्रभादीप्त ने कई भाष्यकारों की सम्मति पर प्रकाश डालते हुए अन्त में अपना विचार दिया। हे स्वामी ! आपकी निज की व्याख्या में पण्डितों

|卐|

को समाधान मिल गया और वे पूर्ण संतुष्ट होकर प्रणाम करके वृन्दावन वापस चले गए। यह सिलसिला चलता ही रहता। आपने किसी को राम दिया किसी को कृष्ण, किसी को हनुमान तो किसी को माई। भक्ति, ज्ञान-वैराग्य मुक्त हस्त से प्रदान करते रहे। एक बार कनाडा के राजदूत तथा उसकी पत्नी हे प्रभो ! आपके दर्शन के लिए आए। ये महोदय बहुत विद्वान और तंत्र-मंत्र के जानकार और जिज्ञासु थे। वह आपके भोजन का समय था और आप बगिया में बैठे थे सेवक मास्टर आपको भोजन परोस रहे थे। तभी एक अन्य सेवक ने आकर निवेदन किया-हे स्वामी ! राजमाता सिंधिया के दो मेहमान विदेशी हैं, एक भारतीय महिला के साथ भगवन् आपके दर्शनों को आए हैं। श्री प्रभु ने कहा-जो समय दिया था, उस समय पर नहीं आए। उन्हें बैठाओ, जल इत्यादि की सेवा करो। हम भोजन उपरान्त विश्राम के बाद ही उनसे वार्ता करेंगे। सन्त किसी का चाकर नहीं होता, वह तो सर्वतंत्र-स्वतंत्र होता है। वह तो भक्ति भाव शुद्ध प्रेम का चाकर होता है। विमुक्तात्मा श्री प्रभु समय की पाबंदी का विशेष ध्यान रखते थे। लेकिन यदि कोई विद्वान् और श्रद्धावान ग़रीब भक्त आपके दर्शन को आता तो समय का नियम भंग हो जाता था। सच्चा सन्त अपनी करनी से लोक शिक्षा देता है और सही पथी का मार्गदर्शन करता है, जिससे साधक का मानवीय जीवन धन्य हो जाता है। सच्चे सन्त की दिनचर्या बताना बड़ा कठिन है। जब जैसी उसकी मौज हो वही दिनचर्या समझो। आयी मौज फ़क़ीर की दिया झोपड़ा फूँक। इस कहावत को प्रायः सभी जानते हैं। हे महाकर्म योगी ! विश्राम के बाद जब आप बाहर आए तब विदेशियों ने साष्टांग प्रणाम किया। श्री प्रभु ने पूछा - आप क्या जानना चाहते हैं ? जार्ज नामधारी व्यक्ति ने पूछा - तंत्र क्या है ? श्री प्रभु ने उत्तर दिया-तनु विस्तारे नामक धातु से इस तत्त्व की प्राप्ति होती है उसे तंत्र

कहा जाता है। यह सुनकर मि.जार्ज आश्चर्य चकित रहे गए। उन्होने कहा हे विद्वान सन्त ! सारे

क्या है ? श्री प्रभु ने उत्तर दिया-तनु विस्तारे नामक धातु से इस तत्त्व की प्राप्ति होती है उसे तंत्र

कहा जाता है। यह सुनकर मि.जार्ज आश्चर्य चकित रहे गए। उन्होने कहा हे विद्वान सन्त ! सारे भारत वर्ष और नेपाल में भी बड़े-बड़े तंत्रज्ञों से मिला हूँ। परन्तु किसी ने भी मुझे तंत्र की ऐसी व्याख्या नहीं बतलायी। जार्ज ने आगे पूछा-"सहस्रदल पद्म मस्तिष्क के भीतर है या बाहर"। प्रजापति श्री महाराज ने कहा-"मस्तिष्क के भीतर है"। इस पर विदेशी महिला ने गौतम बुद्ध का वह चित्र दिखाया जिसमें बहुत से घुँघराले बाल घनें हैं जो सहस्र-दल का प्रतीक है। श्री प्रभु ने हिन्दू तंत्र एवं बौद्ध तंत्र पर विस्तृत प्रकाश डाला और बताया कि -बौद्ध तंत्र हिन्दू तंत्र के अनुयायी हैं, तथा बाद में बने हैं। हिन्दू देवी-देवताओं को बौद्ध तंत्रों ने मान्यता दी है। इस प्रकार अनेक विषयों पर एक घंटे वार्तालाप चला। विदेशी संतुष्ट होकर साष्टांग प्रणाम कर चले गए। अब श्रोताओं, महाराज जी ने एक लीला की। जाने के पूर्व श्री प्रभु ने जार्ज से कहा-तुम्हें तुम्हारे गुरु से मंत्र प्राप्त हो चुका है। तुम उसका नियमित रूप से जप नहीं करते हो। सद्गुरु ने जो तुम्हें बताया-पहले उस आज्ञा का पालन करो और बातें बाद में करना चाहिए। यह क्रियात्मक मार्ग है। यह सुनकर विदेशियों ने कहा-हे अदृश्य दृष्टा ! आज हमें सच्चा गुरु मिला जिसने हमको सत्य वचन कहे हैं। हम प्रतिज्ञा करते हैं कि-सद्गुरु की आज्ञा का पालन तन, मन, धन से करेंगे। उनके चले जाने के बाद श्री प्रभु ने उनके जिज्ञासु होने की प्रशंसा की और रहस्यमय ढंग से बोले कि-ये लोग एक लौकिक बात पूछने आए थे, वह नहीं पूछ सके। वह बात उनकी व्यक्तिगत थी। हे स्वयंप्रकाश परमात्मा ! आपके सामने आपकी मर्ज़ी के ख़िलाफ़ कोई क्या बोल सकता है। तू जो चाहेगा वह ही वह व्यक्ति बोलेगा। बिजली मिलने का काम पावर हाऊस से ही होता है। निश्चय तू ही कर्ता-धर्ता और हर्ता है। आपको कोटिशः प्रणाम है। एक दिन आपके भक्त श्री दुबे, भक्त मंगल आदि विचार कर रहे थे कि आपके विश्राम का समय बीत गया फिर भी आप अन्दर बगिया

में बैठे किस बात का इंतिज़ार कर रहे हैं? भाण्डेर निवासी श्री कृष्णानन्द बुधौलिया को वेदान्त शास्त्री की परीक्षा देने इलाहाबाद जाना था। आपके किसी एक भक्त ने उनको बतलाया कि अगर तुमको अच्छी श्रेणी में परीक्षा पास करनी हो तो तुम वनखण्डी आश्रम में एक महात्मा रहते हैं, उनसे वेदान्त पढ़ो। हे स्वामी ! आपके सेवकों ने देखा-एक ३५-४० वर्ष का युवक बगिया की तरफ़ आ रहा है और आपने उसको देखकर कहा-आ गए तुम ! जैसे बहुत पुराना परिचय हो। आगन्तुक व्यक्ति ने भी उसी सहज भाव से उत्तर दिया-जी महाराज आ गया, जैसे वे यहाँ आते रहते हो। श्री कृष्णानन्द बुधौलिया आपके चरणों के पास बैठ गये और महाराज जी को वेदान्त की पुस्तक देते हुए बोले-महाराज! मैं वेदान्त पढ़ना चाहता हूँ। महाराज जी ने पुस्तक हाथ में लेकर पुस्तक खोली और जहाँ से बन्द पुस्तक खुली सिर्फ़ वही पृष्ठ उनको पढ़ाया और पुस्तक बन्द कर वापस दे दी और कहा-"बस हो गया जी हो गया"। बुधौलिया जी भी चुपचाप उठकर चले गए। परीक्षा में वही पढ़ा हुआ पूछा गया और इन्होने प्रथम श्रेणी में भी प्रथम स्थान प्राप्त किया। बुधौलिया समझ गए कि महाराज पहुँचे हुए साक्षात्कारी योगीराज हैं। अब बुधौलिया जी नियमित रूप से दतिया प्रभु दर्शन को आने लगे। वे भाण्डेर में वकालत कार्य करते थे जब खरा-सच्चा हीरा मिल गया तो पीतल में किसकी रूचि होगी ? काम में रूचि धीरे-धीरे कम होती गई। दतिया आवागमन बढ़ाया गया और एक दिन वकालत बन्द कर दी। इन्होने पूर्ण समर्पण कर दिया और आश्रम के एक छोटे से कमरे में रहने लगे। श्री कृष्णानन्द जैसे भक्त को पाकर महाराज जी बड़े प्रसन्न रहते थे। बुधौलिया जी ने महाराज जी से कई बार कहा कि-हे मंत्रदृष्टा ! शास्त्रों के अध्ययन के अलावा मुझे आप कोई मंत्र भी दें, लेकिन आपने हमेशा यही कहा-"क्यों मुल्ला बनना चाहते हो ? इस प्रकार

पन्द्रह वर्ष बुधौलिया जी को मंत्र दीक्षा नहीं दी। बुधौलिया जी का वकीली का व्यवसाय बन्द हो गया था, लेकिन आश्चर्य इस बात का, कि उनके परिवार को कभी किसी बात की आर्थिक कठिनाई नहीं हुई। हे सर्वदाता ! आपके प्रिय भक्त को इस लोक और परलोक में क्या कमी है। लड़कियों की शादी धूमधाम से हुई, ख़र्चा कहाँ से हुआ कुछ पता नहीं चला। लड़के ख़ूब पढ़ लिखकर अच्छी नौकरी पर चले गए। सच्चे दरबार की महिमा का बखान क्या कोई कर सकता है? एक दिन शिष्य डॉ.योगेश मिश्र से श्री स्वामी जी ने कहा-मेरे पास आने वाले सेवकों और भक्तों में बुधौलिया जैसी लगन के आदमी बहुत कम हैं। श्री कृष्णानन्द बुधौलिया जी ने कई विद्वत्तापूर्ण ग्रंथों का श्री चरण कमलों में बैठकर अनुवाद किया। वे अच्छी तरह जानते थे कि उनका योग क्षेम वहन करने वाला स्वयं साक्षात् योगेश्वर स्वामी है। उन्होने अपने हृदयरूपी कमरे का दरवाज़ा पूरा खोल दिया जिससे ज्ञान प्रकाश की किरणों को अन्दर आने में कोई असुविधा न हो उन्होने अपनी क्षमता भर ज्ञान को अपनी झोली में समेटा। अपने सर्वस्व प्राणनाथ का महानिर्वाण भी आपने देखा और अपनी सद्गति की प्राप्ति भी। गुरुधाम जाने के एक सप्ताह पूर्व श्री बुधौलिया जी दतिया साधकावास के कमरे की चाबी आश्रम को वापस कर चुपचाप अपने घर (भाण्डेर) पहुँच गए। वहाँ पुराने परिचितों से मिले और कहा-अब हम अपने घर जाएँगे। जिसका जो लेना देना था पूरा किया और गुरुधाम गमन करने के आधे घंटे पूर्व अपने परिवार वालों को कहा-मेरे स्वामी कुछ समय बाद स्वयं ही मुझे लेने आ रहे हैं। तुम लोग सुख शान्ति से रहना और कोई शोक मत करना। क्योंकि यह शोक का नहीं आनन्द का समय है और कुर्सी पर बैठ कर गुरुजी-गुरुजी शब्दों का धीरे-धीरे उच्चारण करने लगे इन शब्दों के उच्चारण से वहाँ पवित्र शान्ति का गहन वातावरण छा

।५८।

गया। हे भक्तवत्सल ! करूणासिन्धु महेश्वर ! आपकी कृपा और करूणा निर्मल प्रकाश का रूप धारण कर श्री बुधौलिया जी को आपके दिव्य लोक में ले गयी। ऐसे भक्त धन्य हैं। "न थी उम्मीद दरिया–ए–शहादत, तैर निकलेंगे। खुद को आबरू रखनी थी, बेड़ा पार होना था।।" हे भक्त वत्सल! आपकी भक्त वत्सलता का इससे अनूठा उदाहरण और क्या मिल सकता है? श्री स्वामी जी महाराज की जय। "श्री स्वामी कथासार" के इस अध्याय का जो व्यक्ति बार-बार श्रद्धापूर्वक पाठ करता है और एकाग्र चित्त होकर सुनता है उसको बड़ी सरलतापूर्वक सद्‌गुरु और अध्यात्म विद्या की प्राप्ति होती है।

यह श्री पीताम्बरा जी के चरण कमलों में समर्पित है।

।। इति त्रयोदश अध्याय समाप्त।।

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

चतुर्दश अध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे अनन्तशक्तिरूप परमात्मा ! आपने अपनी अनेक प्रकार की शक्तियों से हर-एक पदार्थ को व्याप्त कर रखा हैं नाम और नामी का अभेद है। नानक देव संसार को दिव्य मार्ग की राह दिखा गए, दादू विमल आदेश दे गए। सूर ने भक्ति भरे पद दान दे दिए, श्री गुरुचरण सरोजरज कहकर तुलसीदास दुनिया में एक नया उल्लास भर गए। हे मनमोहन ! आप सोए हुए लोगों में पुरुषार्थ के प्रति महान् विश्वास जगाते रहे। भोलानाथ स्वामीजी का एक सेवक, श्री प्रभु के तख़्त के बगल में पृथ्वी पर सोया करता था। एक सुबह उसने अपने स्वामी के चरणों का स्पर्श किया और प्रातः अपने बिछौने को उठाया तो तक़िये के नीचे से बहुत बड़ा साँप निकल कर भागा। श्री प्रभु ने उससे कहा-तुम बगल के तख़्त पर या पत्थर की पट्टी पर सोया करो। लेकिन श्री प्रभु की इस प्रकार की आज्ञा होने के बावजूद जब तक आप जागते रहते तब तक ही वह ऊँची जगह पर सोने का अभिनय करता। श्री प्रभु के निद्रित होते ही फिर ज़मीन पर बिछौना बिछाकर उसी स्थान पर सो जाता था। भोलानाथ को अपने स्वामी पर गर्व था, वह सोचा करता था कि उसके स्वामी सर्व शक्तिमान् हैं, उनकी इच्छा के बिना पत्ता भी नहीं हिल सकता। उसके तक़िये के नीचे सोता हुआ भयंकर साँप भी अपनी ही जान बचाकर भाग गया, इस घटना ने उसके

विश्वास को और पक्का कर दिया। वह आपके इन शब्दों को गुनगुनाता रहता। "जो सेवक स्वामी से आशीर्वाद चाहता है, वह सेवक नहीं है और जो स्वामी स्वामित्व की रक्षा के लिए आशीर्वाद देता है, वह स्वामी नहीं है।" इसी प्रकार की घटना श्री ब्रजनन्दन शास्त्री के साथ भी घटित हुयी थी। वे चौक में मेंहदी के झाड़ के पास सोने लगे थे वहाँ पहले से ही एक सर्प रहता था। वे दोनों कई मास तक साथ में सोते रहे, बाद में सर्प कहीं चला गया। हे भक्त वत्सल श्री प्रभो ! एक दिन भोला झाँसी जाना चाहता था। बाहर सामने मोटर बस खड़ी थी। उसने आपसे आज्ञा माँगी। श्री प्रभो, आपने कहा-ठहरो, पहले चाय बनाओ। इस प्रकार चाय बनी, आपने भी ग्रहण की और भोला को भी पिलायी। पहली बस जा चुकी थी अतः दूसरी बस से उसको जाना पड़ा। हे भूतनाथ! आप संध्या समय एक बार ही चाय पीते थे, लेकिन इस दिन दोपहर को भी चाय बनवाकर ग्रहण की। भोला दूसरी बस से गया उसने देखा कि जिस पहली बस से वह चलने वाला था, झाँसी के सूरी सामयाना हाऊस के पश्चिम की तरफ़ उलटी पड़ी थी, कई लोग मृतक हो गए थे, कई लोग गंभीर रूप से घायल हो गए थे, भोला को चाय बनाओ का अर्थ उसी समय समझ में आ गया। बाबूलाल गुवरैले-ट्रेन टिकट चेकर का लड़का किशन, हे समर्थ ! जब आप तख्त पर विश्राम कर रहे थे, तब प्रणाम करने के लिए आया। उसी समय सोनागिरी स्टेशन पर उनके पिता टिकट चैक करके एक गाड़ी से दूसरी गाड़ी में जो दूसरी तरफ़ खड़ी थी चैक करने के लिए कूदकर उतरने की कोशिश करने लगे तो उनका पैर फिसल गया और पटरी पर गिर गए। गाड़ी चल चुकी थी, ये इंजिन के आगे विरोधी हवा से पटरी की ओर खिंचने लगे। ट्रेन के डिब्बे से लोगों की चीखने की आवाज़ें आने लगी-"आहः मरा-मरा-मर गया"। इधर बाबूलाल के लड़के किशन ने श्री प्रभु के चरणों पर प्रणाम करने के लिए अपना मस्तक रखा। प्रभो ! आपने उसे पकड़कर ज़ोर से अपने

सीने पर दबा लिया। भयभीत किशन ने बलपूर्वक छूटना चाहा। हे चिन्मय पुरुष ! आपने कहा-"नहीं, अभी नहीं, अभी नहीं"। उधर सोनागिरी स्टेशन पर कोई ऐसी शक्ति आयी, जिसने किशन के पिता को इंजिन की तरफ़ खिंचने नहीं दिया और पटरी के बाहर फेंक दिया। डिब्बे से आवाज़ें आने लगी-वाहः वाहः मारने से बचाने वाले के हाथ विशाल हैं। टिकट चैकर महाशय उठकर खड़े हो गए, इधर श्री प्रभु ने किशन को छोड़ दिया और कहा -"टल गया, टल गया"। हे अनामी महाभाग, परमपुरुष ! जिस प्रकार आप मुक्ति प्रदान करने में मुक्त हस्त हैं, सिद्धि प्रदान करने में सिद्धहस्त हैं, उसी प्रकार भक्तों की रक्षा के लिए सदैव तत्पर हैं। आपकी कृपाओं का कैसे वर्णन किया जाय। अन्तर्यामी आप हैं तो प्राणादि सबके संचालक भी आप ही हैं। आपकी स्तुति में भी मेरी स्वतंत्रता नहीं है, वाणी भी आपकी प्रेरणा से प्रकाशित होती है। प्रभु आपकी प्रेरणा से ही प्राण का स्पन्दन होता है। मनुष्य ही नहीं सब देवों के भी मालिक आप ही है। जो लोग आपकी शरण में आ जाते हैं उनके आप आत्मबन्धु हैं-शरीर बन्धु हैं। आपकी कृपालुता की सीमा नहीं, मैं आपकी स्तुति कैसे करूँ, शब्द नहीं मिल रहे। हे परमज्योति रूप ! आपकी कृपाएँ विलक्षण हैं, आपके रहस्यों को कौन जान सका है। शाहों के शाह ने जो दान दिया, वह शाही दान ही दिया। काश्मीर बार्डर पर दो सैनिक जिसमें एक बड़े भाई को ब्लड कैंसर था। वह दो साल से सैनिक अस्पताल में भयानक कष्ट पाते हुए मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहा था। उसके सैनिक छोटे भाई को अफसरों ने बड़े भाई की देखभाल के लिए नियुक्त किया था। इन दोनों ने कभी दतिया अथवा राज राजेश्वर श्री महाराज का पता व नाम नहीं सुना था। आपके किसी एक भक्त ने वहाँ उनको सलाह दी- यहाँ तो तुमको मरना ही है। डॉक्टर तुमको अस्पताल छोड़ने की इजाज़त नहीं देंगे, चुपचाप यहाँ से भाग जाओ और दतिया में एक सन्त हैं, उनकी शरण में पहुँच जाओ। एक दिन

वे दोनों खाली हाथ, ना तो ओढ़ने पहनने का सामान था और ना ही धन था, भागकर दतिया पहुँच गए। मरीज़ की स्थिति मरणासन्न थी। हे कैवल्य सुखदायक श्री प्रभो! पहले आप उन पर नाराज़ हुये किन्तु मरीज़ के छोटे भाई की बड़े भाई के प्रति भक्ति देखकर आपने आश्रम में ठहरने की इजाज़त दे दी। तीसरे दिन रात्रि को मरीज़ की मृत्यु हो गयी और प्रातःकाल उस ग़रीब व मुहताज का शव देश के बड़े-बड़े ब्राह्मण साधकों के कंधों पर रखकर श्मशान ले जाया गया। उस मृतात्मा का अंतिम संस्कार श्री ललिता प्रसाद नामक शास्त्री द्वारा सम्पन्न हुआ। हे मोक्षदाता ! एक अंजान व्यक्ति किस प्रेरणा से आपके द्वार पर आया और किस सम्मान के साथ उसका दाहसंस्कार हुआ। आश्रम के प्रांगण में उसने अंतिम सांस लेने का वैभव प्राप्त किया। ऐसी लीला करने वाले लीलाधाम के श्री चरणों में बारम्बार प्रणाम। दरबार में खाली हाथ आने वाले ने भरे हाथों से अंतिम यात्रा की। "पूरे क़द से मैं खड़ा हूँ, यह करम है तेरा। मुझे झुकने नहीं देता है, सहारा तेरा।।" क्यों कोई खाली हाथ जाता है और क्यों कोई भरे हाथ जाता है। इस बात का विचार श्रोतागण आगे की कथा सुनकर स्वयं करें। अजामिल के पापों को तो लोगों ने देखा, लेकिन क्या यह भी देखा कि उसके हृदय में प्रभु भक्ति की महान अजस्र धारा अवश्य बहती होगी। इलाहाबाद हाईकोर्ट के दो वकील बाजपेयी और अग्रवाल आए थे, बाजपेयी का लड़का अमेरिका में इंजीनियर था। बाजपेयी विवाह के लिए उसे बुला रहे थे, वह नहीं आ रहा था। उनको आशंका थी कि कहीं अमेरिका में ही वह किसी लड़की से शादी न कर ले। वे चाहते थे कि उसके चित्त में उच्चाटन हो जाए और यहाँ आकर माँ-बाप द्वारा तय किए गए संबंध को ही स्वीकार कर ले। उनको इलाहाबाद में पता हो गया था कि दतिया में कोई महायोगी रहते हैं। यह योग विद्या ऐसी गूढ़ है, इतनी

विलक्षण घटनाएँ घटित होती हैं कि जिनका पार पाना मुश्किल है। उन लोगों ने आपके दर्शन कर अपने मनोरथ को कहा। महाराज जी ने उन लोगों से कहा-तुम लोग फ़ज़ूल बातें मत करो। योग विद्या भगवान् को प्राप्त करने के लिए होती है, किसी जादूगर के पास जाओ, हम से इस प्रकार की बात करना ठीक नहीं। हे प्रभो भुवनेश्वर ! आपने उनको समझाया - तुम वकील लोग बड़े चतुर होते हो, साधुओं को मूर्ख समझते हो, चाहते हो स्वामी जी अपनी कमाई तुमको दे दें, तुम्हारा काम बन जाय मैं अपनी कमाई तुमको क्यों दूँ ? मन्त्र चाहो तो दे दूँगा, मुफ़्त का खाना अच्छा नहीं होता, तुम स्वयं कमाओ और अपना काम बनाओ। सबको स्वावलम्बी होना चाहिए। जो सन्त सच्चा होता है, वह सच्ची बात ही बोलता है। जैसे ज़हर और अमृत का कोई साथ नहीं होता, झूठ और सच एक-दूसरे के विपरीत होते हैं। हे सन्त शिरोमणि ! आपने सभी को सच्ची हिदायतें ही दी। क्योंकि सच्चे सन्तों का काम ही सत्य का प्रसार करना होता है। धौलपुर के श्री बृजमोहन जुत्सी की तरह ही एक दिन बुधौलिया जी ने श्री प्रभु से निवेदन किया था। हे सर्वेश्वर ! मैं भी अनाथ हूँ, मेरी गृहस्थी भी अनाथ है। आपकी चरण-शरण से मुझे तो मेरा स्वामी मिल गया। कृपा करके परिवार को शरण में लेकर इन्हें भी सनाथ बनाएँ। जिसके घर में निर्मल चिन्तामणि विद्यमान है वह काँच क्यों बटोरेगा ? मुझे तो इसी बात की बड़ी चिन्ता लग रही है। सच्चे भक्त की भावना देखकर आपने 'तथास्तु' कह दिया। श्री हरि बुधौलिया अपने पिता श्री कृष्णानन्द जी से मिलने तथा श्री प्रभु के दर्शनों के लिए आए। आर्थिक स्थिति ठीक नहीं थी। आश्रम के बरामदे में बैठकर माला जपने लगे माला जपने की जगह सोचने लगे कि मैं बहुत ज़्यादा सिगरेट पीता हूँ, अगर महाराज जी आदेश दे दें तो मैं धूम्रपान सदा के लिए छोड़ दूँ। तभी इन्होने देखा आप अन्दर से आ रहे हैं। आपने पूछा-तू क्या कर रहा है ? बुधौलिया जी के मुख से निकल गया कि - हे

स्वामी ! मैं माला फेर रहा हूँ। श्री प्रभु ने तुरन्त कहा- माला फेरने वाला मालदार होता है, तू अब मालदार हो रहा है। फिर श्री प्रभु ने ठहाका लगाते हुए आगे कहा - तुझे कम बोलना चाहिए तथा भोजन भी कम करना चाहिए और धूम्रपान भी नहीं करना चाहिए। बुधौलिया जी ने तीनों आज्ञाओं का पालन किया। इसके बाद शीघ्र ही डाकतार विभाग भोपाल में एक यूनियन में उन्हें सचिव चुना गया। बुधौलिया जी दतिया आए, महाराज जी को प्रणाम करके अपनी उपलब्धि बताते हुए कहा - अन्नदाता ! मैं यूनियन में सेक्रेटरी चुना गया हूँ। भक्तवत्सल आनन्देश्वर श्री प्रभु ने कहा - तुम सेक्रेटरी शब्द का अर्थ जानते हो क्या ? फिर इस शब्द की व्याख्या श्री प्रभु ने हिन्दी तथा अंग्रेजी मैं इस प्रकार की- "वन हूँ कीप्स सीक्रेटस इज सेक्रेटरी" और मंत्री वह होता है जिससे मन्त्रणा की जाती है। साथ ही आवश्यक नीतिगत उपदेश भी दिए। बाद में हरि जी तरक़्की के पथ पर बड़ी शीघ्रता से बढ़ते ही चलें गए। एक दिन दतिया आकर हरि बुधौलिया ने देवाधिदेव के श्री चरणों में प्रार्थना की, कि उनके वरिष्ठ राजनीतिक अधिकारी नौकरी से निकालना चाहते हैं। श्री प्रभु ने उन्हें एक मन्त्र दिया और कहा-इस मंत्र की सौ माला तीस दिन तक फेरना। अपनी खुद की मेहनत की कमाई करो और खाओ। उस समय दरबार लगा हुआ था, तभी किसी ने श्री प्रभु से अपनी किसी समस्या के बारे में कहा-भगवान् उमाकान्त ने जवाब में कहा-मैं कोई चमत्कार नहीं करता। फिर हरि बुधौलिया की तरफ़ मुख करके आगे बोले-ईसा मसीह चमत्कार करते थे, उन्होने बहुत से अन्धों को आँखें दे दी, उन्होने लंगड़ों के पैर ठीक कर दिये पर उन्हें इन चमत्कारों के कारण दूसरों का भोग स्वयं भोगना पड़ा। अन्त में ईसा को स्वयं सूली पर टाँग दिया गया। यहाँ वह रहस्य भक्तों को बताना आवश्यक है कि अपना कमाओ, अपना खाओ के सिद्धान्त को

कठोरता से पालन करने वाले हे करुणानिधान श्री प्रभो ! आपने करुणावश अनेक भक्तों को भोग से मुक्त करके उस भोग को स्वयं भोगा। श्री प्रभु ने आगे कुछ उदास स्वर में कहा-हिन्दूजन धर्म परिवर्तन कर अन्य धर्म स्वीकार कर रहे हैं लेकिन हिन्दूओं के पास माँ गंगा है। गंगा में जो भी व्यक्ति डुबकी लगाकर निकलेगा वह हिन्दू ही होगा। किन्तु हिन्दू स्वयं इतने संकीर्ण हो गए हैं कि वह दूसरों को अपने धर्म में मिलाने को तैयार नहीं हैं। सनातन धर्म में संकीर्णता नहीं आनी चाहिए। हे सत्संगियों ! सनातन का अर्थ होता है जो कभी नष्ट न हो, बदले नहीं, सदैव सत्य रहे। सदैव बनी रहने वाली सत्य वस्तु आत्मा है। अतः जो आत्मा का धर्म है वही सनातन धर्म है। आत्मा सर्व व्यापक है अतः सनातन धर्म भी सर्व व्यापक है इसी कारण वह सब धर्मों को अपने में समाहित कर लेता है। दीनबन्धु परमगति दाता ! इस प्रकार कृष्णानन्द बुधौलिया जी के शरण में आने पर उस महासाधक को मोक्ष ही नहीं प्रदान किया वरन् उनके बच्चों को आन्तरिक प्रेरणा देकर माला पकड़ा कर मालामाल किया। स्नेह रूपी कृपा की छाया में, पूरे परिवार का ही योग क्षेम वहन किया। जैसा गीता में आपने कहा है- उसे लोगों ने प्रत्यक्ष अनुभव किया और देखा। झाँसी के परम भक्त सच्चे धर्म परायण वैद्य रामनारायण जी जिन्होंने तन-मन-धन से श्री सद्गुरू समर्थ की सेवा की, अपना कुछ भी नहीं माना। जिनकी गणना भारत के बड़े धनपतियों में होती थी, ज्योतिष्मयी नाम की जो औषधि जिस कारख़ाने से बनकर आती थी वह भी वैद्यजी ही का था, एक दिन की बात है-हे ईश्वरों के ईश्वर ! वनमाली शास्त्री नाम का एक ग़रीब शिष्य औषधि वितरण का कार्य कर रहा था। वैद्य जी भी उस समय आपकी सेवा में आए हुए थे, वैद्यजी ने भाई वनमाली के पास जाकर कड़े शब्दों में कहा-इतनी अधिक दवाई क्यों देते हो ? इस पर भाई वनमाली ने कहा-श्री प्रभु स्वामी जी की आज्ञा से दे रहा हूँ, ये सज्जन बाहर दूर से आए हैं, इसलिए अधिक दवाई दे

रहा हूँ, तथा यह वार्तालाप उसी समय श्री प्रभु को जाकर बता दिया। यह बात सुनकर आपने कहा-कि "अब दवाई देने वाले की श्रृद्धा नहीं रही। दवाई आज अभी बन्द"। वैद्यजी यह सुनकर बहुत घबरा गए और श्री प्रभु से क्षमा याचना की। तब हे कृपासिन्धु ! आपने कहा-जिसका अपमान हुआ है, उससे कहना चाहिए। इस पर वैद्य जी ने भाई वनमाली जी को प्रणाम किया और क्षमा माँगी। भाई वनमाली ने हे अचल पुण्यधाम ! आपको इस बात से भी अवगत करा दिया। औषधि वितरण पूर्वानुसार प्रारम्भ हो गया। धन्य हैं, ऐसे धनपति शिष्य, धन्य है, उनकी गुरूभक्ति, धन्य है उनका समर्पण और धन्य है ग़रीब भाई वनमाली, जिसे समर्थ सद्‌गुरू ने नवाज़ा। आश्रम पर तो वैदिक समाजवाद का वातावरण था। क्या मजाल, किसी का अपमान हो जाए। प्रभो, आपके ग़रीब भक्त बालक, बड़े गुसाई को एक बहुत पुराने धनपति भक्त ने किसी कारणवश थप्पड़ मार दिया। हे जटाधर ! भक्तवत्सल ! इस कारण बीसों वर्ष पुराने उस सेवक धनपति को गुरूपूर्णिमा के दिन गुरू पूजन से वन्चित होना पड़ा। गुरू के विकट स्वभाव को परम निकट से जान। जीवन धन्य बना लिया करता मनुज सुजान।। झाँसी के वैद्य जी ने आप की अंतः प्रेरणा से अपने धन का बहुत सदुपयोग किया। वैद्य जी शास्त्रों को मानने वाले थे। दतिया आश्रम पर जो भी साधक रहना चाहता है, उसे अपने खाने पीने का प्रबन्ध स्वयं करना पड़ता है। श्री प्रभु साधकों के प्रति बहुत कठोर व्यवहार करते थे। यहाँ तक कि बिजली का पंखा और पानी का नल आश्रम में पहले नहीं थे। हे चतुर्भुजधारी ! आप बहुधा कहा करते कि-साधकों को शरीर का मोह और भोगों का साथ दृढ़तापूर्वक छोड़ना चाहिए। तभी क्रिया शक्ति का स्फुरण होता है। एक बार वैद्यजी ने आश्रम में रहने वाले बाबा रामदास को कुछ गेहूँ और चावल दिए। यह बात श्री प्रभु को

ज्ञात हुई। आपने रामदास जी को बुलाया और बड़े कठोर शब्दों में कहा-साधक को प्रतिदिन का

ज्ञात हुई। आपने रामदास जी को बुलाया और बड़े कठोर शब्दों में कहा-साधक को प्रतिदिन का भोजन छोड़कर खाद्य संग्रह नहीं करना चाहिए। किसी का दान नहीं लेना चाहिए। तुम यहाँ भजन करने के लिए रहते हो, अन्न संग्रह करके अच्छा नहीं किया। इस प्रकार श्री प्रभु बहुत नाराज़ हो गए। यह सुनकर रामदास बाबा को लगा जैसे उनके शरीर में प्राण नहीं रहे। लगातार रोते रहे और अन्न,जल ग्रहण नहीं किया, इसी तरह तीन-चार दिन व्यतीत हो गए, आख़िर एकदम दुःखी होकर माई के मन्दिर में आ गए और खिड़की के बाहर खड़े होकर प्रार्थना की - क्या अब हम मर जाएँ? उसी क्षण श्री प्रभु मन्दिर में आ गए और खिड़की के सामने खड़े हो गए और कहा-तुम प्रायश्चित्त स्वरूप सवा लाख गायत्री का जप करो, इस प्रकार जो हुक्म हुआ वह बाबा रामदास ने पूरा किया। श्री समर्थगुरु का क्रोध देखकर बाबा बहुत ही भयभीत हो गए थे। एक दिन आपने रामदास बाबा को बुलाया और बड़े स्नेह से कहा- हम लोग यहाँ साधना करने आए हैं, क्रोध करने नहीं। तुम पर जो क्रोध किया वह बनावटी था, तुम्हारे कल्याणार्थ ही तुम्हें डाँटा था, अब तुमने प्रायश्चित्त कर लिया है तो उस चावल-दाल का उपयोग करो। परमात्मा को आत्म समर्पण धीरता एवं दृढ़तापूर्वक करना चाहिए। वैद्यजी भी इस घटना से समझ गए धन का सदुपयोग बहुत ही विवेक पूर्ण होना चाहिए। दरिद्र अहंकार मुक्त होता है, समस्त पद से भी मुक्त होता है, प्रारब्धवश जो कुछ कष्ट मिलता है वह उसके लिए परम तपस्या हो जाती है। निरन्तर पीड़ित अन्नहीन दरिद्र की इन्द्रियाँ सूखती रहती हैं और उससे हिंसा भी निवृत्त हो जाती है।दरिद्र से ही समदर्शि साधु मिलते हैं जो उसकी विषय तृष्णा को नष्ट कर देते हैं और वह विशुद्ध हो जाता है। हे विद्येश्वर ! आप कहा करते थे कि नौकरी अधम कर्म है। नौकरी तो सिर्फ़ उस महान् की ही करनी चाहिए। परन्तु समय की कठिनता के कारण यह करनी पड़ती है इसलिए अपने नौकर पेशा शिष्यों

को नौकरी छोड़ने के लिए नहीं कहते थे। पराधीन व्यक्ति की क्या स्थिति होती है, इसको बताने के लिए वे एक कुत्ते और नौकर का दृष्टान्त इस प्रकार दिया करते थे- एक घनघोर अन्धेरी रात्रि को तूफ़ानी हवा चल रही थी और घनघोर वर्षा हो रही थी। ऐसे भयानक वातावरण में मनुष्य को तो क्या जानवर भी अपना आश्रय ढूँढ़कर छुप गए थे। एक कमरे में भयानक वातावरण से बचने के लिए दो आदमी छुपे हुए बैठे थे। तभी उन्होंने बाहर रास्ते में किसी के पदचाप की आहट सुनी,तो उनमें से एक व्यक्ति ने कहा कि आधी रात को ऐसे खराब मौसम में कौन जा रहा है। यह सुनकर व्यक्ति ने उत्तर दिया- कुत्ता होगा। वहीं एक कोने में एक कुत्ता भी छुपा हुआ बैठा था। उस कुत्ते ने कहा-मैं क्यों होने लगा, मैं तो यहाँ बैठा हूँ। वह तो कोई नौकर होगा जो अपने मालिक की आज्ञा से कहीं जा रहा होगा क्योंकि नौकर तो पराधीन होता है। चतुर्भुज शर्मा चुनाव जीत जाएँ इसलिए दुर्गा प्रसाद और रामदास बाबा उरई नगर गए और अनुष्ठान किया। चुनाव परिणाम आने लगे तो शर्मा जी की हार होने लगी। दोनों को बड़ी शर्म महसूस होने लगी। इन्होंने उसी समय भगवती धूमावती का मन्त्र जप शुरू कर दिया। थोड़ी देर में बाबा रामदास को एकाएक तन्द्रा आ गई और उन्होंने देखा कि बाक़ी बची मत पेटियों पर माता धूमावती बैठी हैं और हाथ में हंटर लिए हुए हैं। रात्रि तक परिणाम घोषित हो गया। शर्मा जी चुनाव जीत गए। ये दोनों लौटकर आश्रम पर आए तो हे सर्वतोबाहु गोविन्द ! आपने पूछा-तुम्हें क्या मिला ? रामदास बाबा ने कहा-महाराज ३०० रूपये दक्षिणा में मिला। श्री प्रभु ने उत्तर दिया- नहीं तुम्हें यश मिला, दक्षिणा को गौण समझो। हे दयालु आपकी लीलाओं का वर्णन कैसे किया जाय, किस प्रकार आपकी प्रेरणा से संयोग बनते थे और साधकों को लाभ मिलता था, हर दृष्टिकोण से साधकों का भला होता था और वे अपने मार्ग में और आगे अग्रसर होते थे। हे महातेज ! आपने बताया- मनुष्य जैसा चिन्तन

से संयोग बनते थे और साधकों को लाभ मिलता था, हर दृष्टिकोण से साधकों का भला होता था और वे अपने मार्ग में और आगे अग्रसर होते थे। हे महातेज ! आपने बताया- मनुष्य जैसा चिन्तन करता है वैसा बन जाता है। यह सिद्धान्त उपासना का मूल है। इसी भाव को आगे रखकर उपासना की सृष्टि हुई है। जो साधन भगवत् कृपा या सद्गुरू कृपा से प्राप्त होता है वही मनुष्य का कल्याण करने वाला होता है। साधक को पूर्ण आस्था के साथ उसका अवलम्बन करना चाहिए यदि किंचित भी संदेह होगा तो लाभ नहीं होगा। चतुर्भुज शर्मा के लड़के माणिक शर्मा एक बार चुनाव हार गए। हे स्वामी ! आपने कहा- इस संसार में हार गया तो क्या हुआ। तू उस संसार में तो जीत गया है। श्री महेश दत्त शास्त्री एक गुरुबन्धु अपने मन्तव्य को लेकर दतिया आने लगे। उन पर मन्त्र के साथ करूणा और कृपा की वर्षा हुई। उनकी एक पुत्री जो जन्म से गूँगी थी। पाँच वर्ष की आयु में भी बोल नहीं सकती थी मगर नाम उसका रखा गया था सरस्वती। जब महेश जी के साथ सरस्वती आयीं तो स्वामी जी ने उस लड़की से पूछा- क्या नाम है? गूँगी सरस्वती उसी क्षण बोल उठी- ''सरस्वती '' और बाद में वह सरस्वती, ''सरस्वती स्तोत्र का पाठ करके परम विदुषी हो गई। ''मूक होहि वाचाल'' कहावत चरितार्थ हुई। आज भी स्वामीजी की करूणा का रसास्वादन कर रही है। हे भक्तवत्सल! सिद्धार्थ ! आप महाशक्ति के परम उदारविचारक हैं। आप सर्वत्र अभयदान के हाथ फैला रहे हैं। चन्दन की सुगन्ध बिना गूदे के सार रहित बास में नहीं जाती। हे करूणा की खान ! हम सब तो अपार अपराधों की खान हैं, तुम अन्तर्यामी सब जानते हो, तुम्हारी शरण में पड़े हैं। तुम्हारे संकेत मात्र से गूँगा बोलने लगता है। हे स्वामी ! हम सभी पर कृपा दृष्टि हो। प्रातः बेला थी। महाराज श्री, मूढ़े पर विराजमान थे। पास में सेवक बादामसिंह अपनी प्रातः कालीन सेवा से निवृत्त होकर जप कर रहे थे। एक चालिस वर्ष का अधेड़ ब्राह्मण

अपनी बारह वर्ष की कन्या को लेकर आया। प्रणाम किया। पूज्यपाद जी ने पूछा-कौन हो ? उत्तर-''ब्राह्मण'' श्री प्रभु ने पूछा- क्या बात है ? उत्तर -यह लड़की काँपती है। सारे शरीर में कम्प होता है। आँखे भी मटकती हैं। आपने कहा- मैं क्या कोई डाक्टर हूँ ? किसी अच्छे डाक्टर या वैद्य के पास जाओ। ब्राह्मण करूण स्वर में बोला- पैसा नहीं है। आज अच्छी-अच्छी लड़कियों के लिए बहुत सारा दहेज़ देना पड़ता है। हमारी लड़की बीमार है। हमारा यह बोझ कौन लेगा ? आप द्रवित हुए और कहा देखो- हमारी तो वो माई है। उसी से अपनी सब बात कहो। ब्राह्मण झट से माई की खिड़की के पास जाकर अपनी सब बात कह आया। आपने फिर कहा।मन्दिर में विराजमान सभी देवताओं से अपनी बात कह आओ कि हमारी लड़की को ठीक करो। आदेश पाकर वे ब्राह्मण सभी देवताओं से अपनी प्रार्थना कर आए। श्री प्रभु बोले-देखो यहाँ से एक दवा ज्योतिष्मती बताशे में दी जाती है जो सब बीमारियों पर काम करती है। भाग्य से उस दिन सोमवार था। सोमवार या शुक्रवार से ही यह ज्योतिष्मयी दवा प्रारम्भ करायी जाती थी। जो आज भी नियमपूर्वक दी जाती है। बताशें में एक बूंद लड़की को खिलाई गई और कहा कि-आठ दिन बाद फिर आना और माई से बता जाना जो फ़ायदा हो। आठ दिन तक दवा सेवन कराने के बाद ब्राह्मण लड़की को लेकर पुनः श्री चरणों में उपस्थित हुआ। इस बार लड़की स्वस्थ्य दिख रही थी। शरीर में कम्प नहीं था। केवल आँखों में मटकपन था। श्री प्रभु लड़की की हालत देखकर अन्दर ही अन्दर प्रसन्न हुए। इस प्रसन्नता को उन्होंने प्रकट नहीं किया। पूछा- क्या हाल है ? उत्तर मिला- आपकी कृपा से लड़की काफी ठीक है। केवल आँखें मटकाना शेष है। आप बोले-जाओ माई से अपना सब हाल कह जाओ फिर सब देवताओं से कह आना। ब्राह्मण माई से प्रार्थना कर सभी देवताओं के पास गए। इधर लड़की से बोले-लड़की अब तू ठीक हो गई लाओ एक हज़ार रूपया

से अपना सब हाल कह जाओ फिर सब देवताओं से कह आना। ब्राह्मण माई से प्रार्थना कर सभी देवताओं के पास गए। इधर लड़की से बोले-लड़की अब तू ठीक हो गई लाओ एक हज़ार रूपया दक्षिणा के। लड़की खुश थी, बोली -दूँगी महाराज। ''कहाँ से दोगी ?'' तेरा पिता तो कहता था-हम ग़रीब हैं। लड़की ने कहा-कहीं से क़र्ज़ निकाल कर देंगे। हे विधाता ! आपने कहा नहीं हम तो हँसी में कह रहे थे। हाथ बढ़ाकर लड़की को तो दिया जाता है। लड़की से लिया थोड़े ही जाता है। हम तो हँस रहे थे। लड़की स्वस्थ्य हो गई। आँख भी ठीक हो गई। यह अद्‌भुत कृपा महाराज जी ने की है। क्या वर्णन किया जाय-उनकी कृपा का। जितना किया जाय वह थोड़ा ही रहेगा। परम कृपालु हैं, दीन बन्धु, ग़रीब नवाज़ हैं। दतिया के मुन्ना मास्टर की पुत्री के विवाह के दिन बारातियों ने शराब पीकर एक बड़ा ही दुःखद वातावरण पैदा कर दिया और वधु के पिता से कहा-हमें दहेज़ और चाहिए, न देने पर हम लोग वापस चले जाएँगे, और आपस में गाली-गलौज, मारपीट भी करने लगे। हे कृपाधन ! वह गरीब भागकर आपकी शरण में आया ''हारे के बलराम''। हे शोक नाशक ! भवभय भन्जन ! आपने भक्त सेवक दूर्वार को एक मन्त्र तथा स्तोत्र पाठ करने की आज्ञा दी तथा लड़की के पिता से कहा-तुम शादी के कार्यक्रम को छोड़कर यहाँ आए हो, शीघ्र वापस जाकर बचे काम पूर्ण करो। हे प्रभो ! मुन्ना ने घर लौटकर देखा तो सब बाराती आपस में लड़कर बस में बैठकर भाग गए हैं। केवल लड़का और उसका बाप तथा दो मित्र रह गए हैं। शादी आनन्द से सम्पन्न हुई और इस प्रकार ग़रीब की लाज, ग़रीब नवाज़ ने रख ली। हे प्रभो ! आप सांसारिक कामों में और आध्यात्मिक कामों में अपरोक्ष रूप से सहायता देकर अपने भक्तों का योग क्षेम पूरा करते हुए उनको साधना मार्ग में प्रवृत्त करते हैं। किसी धर्म का, किसी चमत्कार का, किसी भी कृपा का श्रेय आपने अपने ऊपर नहीं लिया। हमेशा कहा-माता से प्रार्थना करो, परमात्मा की जैसी इच्छा होगी वैसा ही होगा। हरि भजनकारों के लिए देवगणों द्वारा अनेक विघ्न उपस्थित होते

हैं, किन्तु भक्तजन गुरू कृपा से विघ्न बाधाओं के सर पर पैर रखकर सफलतापूर्वक लक्ष्य को पा लेते हैं। दतिया में श्री किशोरी शरण चउदा जन्मजात बीमारी के कारण मृत्यु शैय्या पर पहुँच गए थे। डाक्टरों, वैद्यों ने उसे बचाने की बड़ी कोशिश की, लेकिन प्रयत्न असफल हो गए। घर परिवार वाले बहुत रोने पीटने लगे कि अब यह बचेगा नहीं। उसके अच्छे होने के लिए भगवान् से बड़ी बड़ी मनौतियाँ माँगी, फिर भी असफल रहे। मरीज़ के पिता श्री महाराज जी के भक्त थे। इनके परिवार वालों को ख़्याल आया कि दतिया में तो स्वयं भगवान धन्वन्तरि विराजे हुए हैं। अभी तक उनका ख़्याल क्यों नहीं आया यह सोचते हुए उसके घर वाले महाराज जी के चरणों में पहुँचे और उन्होंने महाराज जी से कहा-भगवान हम लोग बड़े मूर्ख और पापी हैं। हीरा तो तिजोरी के बाहर रखा है और लोहे रूपी वैद्य को तिजोरी में रखा है। हमें चरणोदक(चरणतीर्थ) दें, चरणतीर्थ पीने के बाद अगर मर भी गए तो स्वर्गधाम निश्चित ही मिलेगा। श्री प्रभु ने कहा-चउदा जी का अभी जाने का समय नहीं आया है। उनको अभी भारतीय संस्कृति के लिए बहुत काम करना है। गीता और गायत्री का कार्य करना है। अब आप लोग जाइए साहब। इस प्रकार जल्दी ही वहाँ चरणामृत लाकर चउदाजी को पिलाया, जिससे बीमार की जान बच गई। श्री किशोरी चरण चउदा आपके चरणतीर्थ से ठीक हो गए और उसके घर वाले आनन्दित हुए। उसने दवाई लेना भी बंद कर दिया था। मात्र चरणतीर्थ से ही वह ठीक हो गया। बीमारी का इलाज पहले डाक्टर, वैद्य से कराना चाहिए, अगर बीमार ठीक न हो तो समझो दैविक बीमारी है। नकली साधु से कोई चमत्कार नहीं होता, इसलिए लोगों को असली नकली साधु को पहचानना चाहिए। सच्चे सन्त के चरणतीर्थ से परम सौभाग्य की प्राप्ति होती है। इसकी महिमा अगाध है। ''चरणतीर्थ गुरूदेव का जंगम तीरथराज''। श्री स्वामीजी महाराज की जय। ''श्री स्वामी कथासागर '' के इस अध्याय का जो

शिवालय अथवा किसी पावन सरिता के तट पर भक्तिपूर्वक पाठ और

शुद्ध और पवित्र स्थान, शिवालय अथवा किसी पावन सरिता के तट पर भक्तिपूर्वक पाठ और श्रवण करता है तथा गुरुबीज से हवन कर आहुतियाँ देता है, उसके भीषणतम रोग भी नष्ट हो जाते हैं। और पूर्ण स्वास्थ्य लाभ करता है।

यह श्री पीताम्बरा जी को अर्पण है।

।।इति चतुर्दश अध्याय समाप्त।।

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

पञ्चदश अध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे राधा माधव ! आर्त और दीन-दुःखियों के आप सहारे हैं। लोकोक्ति भी है- 'अन्न जिस प्रकार प्राणियों का प्राण है, उसी प्रकार धर्मरूप आप ही परलोक में वित्त हैं अर्थात् परलोक का आश्रय, मात्र आप ही हैं। संसार से त्राण पाने के लिए आपकी शरण ही एक मात्र साधन है, क्योंकि सन्त-महात्मा ही संसार की आत्मा कहे गए हैं। सन्त ही देवता हैं, वे ही साधन हैं और वे ही साधक हैं। आपके भय से ही पवन प्रवाहित होता है।, सूर्य भी ताप और प्रकाश आपके भय से ही प्रदान करता है। और अग्नि आपके प्रताप से ही तपती है। आपके अनुशासन से ही मृत्यु सर्वत्र विचरण करती है और सभी भयातुर प्राणियों की रक्षा भी हर प्रकार से आप ही करते हैं। हे स्वामीजी महाराज ! अपने परमात्मा स्वरूप में आप पतितों के तारक और दीनों के हितकारी हैं। वेद यह कह रहे हैं। भक्त जो जो कामना करता है, उन सबकी आप ही पूर्ति करने वाले हैं। सेवक वैद्य रामनारायण जी वृन्दावन से झाँसी लौटते समय धौलपुर में कैलाशधाम पधारे। कैलाशधाम के लक्ष्मीनारायण जी दतिया के सन्त शिरोमणि के बहुत पुराने अनन्य सेवक हैं। मन्दिर की वाटिका में लगे हुए एक पपीते के पेड़ से एक सुन्दर पका हुआ पपीता तोड़कर भगवान् के भोग के लिए रखा हुआ था। उन्होंने वह पपीता वैद्यजी के द्वारा महाराज जी

तोड़कर भगवान् के भोग के लिए रखा हुआ था। उन्होंने वह पपीता वैद्यजी के द्वारा महाराज जी

के लिए दतिया भेजा। जिस समय वैद्यजी उस पपीते को लेकर दीनदयाल श्री महाराज के चरणों में उपस्थित हुए तो श्री प्रभु ने पूछा-क्या तुम यह पपीता कैलाशधाम से लाए हो ? यह सुनकर वैद्य जी अवाक् रह गये और सारी कथा बताई। आपने प्रसन्न मुद्रा में कहा-''यह पपीता तो हमारे पास पहले ही आ चुका है।'' मानवीय प्रयत्न प्रकृति की सीमा तक सफल होते हैं। लेकिन संत या भगवान् की कृपा से अनहोनी भी संभव हो जाती है। वे तो भक्त का भाव देखते हैं कालान्तर में पं.लक्ष्मीनारायण जी जब दतिया आए तो श्री प्रभु ने बिना किसी भूमिका के कहा- ''यदि भोग प्रधान होता है तो भोक्ता उसके पास पहुँच जाता है और यदि भोक्ता बलवान होता है तो भोग उसके पास स्वयं चला आता है।'' साथ में यह भी पूछा कि- तुम समझे या नहीं ? पण्डित लक्ष्मीनारायण जी हतप्रभ होकर बगले झाँकने लगे। श्री प्रभु ने समझाते हुए कहा कि-हमने तुम्हारे पपीते का भोग स्वीकार कर लिया है। सुनते ही बिजली सी कौंध गई और पं. लक्ष्मीनारायण जी कभी अपने को देखते और कभी परमोदार विग्रह, परमयोगीराज के योग ऐश्वर्य को निहारते। कहाँ एक अणु से भी लघु व्यक्ति और कहाँ महान् को भी लजा देने वाला अद्‌भुत, अपूर्व योगैश्वर्य, कहाँ एक निर्धन ब्राह्मण की अंकिचन् विनय याचिका पर पूर्ण कृपा और कहाँ राजाओं एवं सम्राटों के प्रति पूर्ण उदासीनता। अवश्य आप ही वे पूर्ण स्वरूप हैं, जिसमें और कुछ योग करके भी उसकी सीमा को, उसके आकार को बढ़ाया नहीं जा सकता। नहीं नहीं अवश्य आप ही वे मूर्तिमान हैं, जिसमें से पूर्ण घटकर भी पूर्ण ही शेष रहता है। नेति-नेति कहने वाले विवशतापूर्वक मौन होकर, स्तब्ध हो जाते हैं। निश्चय ही हे शिवस्वरूप आदि प्रकाश पुञ्ज ! आप अपने ही विमर्श द्वारा मर्यादित हैं। दतिया से चलते समय पं. लक्ष्मीनारायण जी ने आपको प्रणाम किया और भेंट स्वरूप दो रूपये का नोट अर्पित किया तो भक्तवत्सल स्वामी ने वह नोट उठा लिया और कहा-''क्या तुम

इतने धनवान् हो गए हो। तुम्हें भी अपने भाई की लड़कियों के ब्याह का कर्तव्य पूरा करना है। इस बात का ख्याल रखो कि डोरा यदि ज़्यादा खिंच जाए तो वह टूट जाएगा। तुम्हारी भाव भक्ति से धौलपुर में लगाया पपीते का भोग यहाँ हम ने स्वीकार कर लिया, इसका ख़्याल करो, लो यह नोट हम तुमको वापस देते हैं, इसे सम्हाल कर रखना। इसका व्यय मत करना।'' दीनतापूर्वक भक्त ने कहा-मुझसे भूल हो गयी। आप तो साक्षात् शिव शंकर हैं। आप तो भक्त की भाव भक्ति पर ही खुश रहते हैं। मुझे जो अनमोल रत्न मिला है उसे कभी नहीं खोऊँगा। पं. जी गद्गद् हो उठे। आशीष वचन सुनकर धौलपुर लौट आए और उस नोट का एक तावीज़ बनवाकर गले में धारण कर लिया। तब से कोई आर्थिक संकट उन पर नहीं आया। कुबेर का भण्डार भरने वाले अव्यय पुरूष की जिस पर कृपा हो जाए उसे क्या कभी कमी हो सकती है। आप तो संसार के भूषण नयनोत्सव हैं। सारे संसार में लेन-देन का काम उन्हीं का है। राजा हरिश्चन्द्र जैसी कठोर परीक्षा भी ले सकते हैं। परीक्षा के रहस्य को कोई नहीं जानता। झाँसी के प्रेमकिशोर ने श्वास कष्ट की बीमारी के कारण आत्महत्या करने का विचार किया। बड़े दुःखी होकर यह बात उन्होंने श्री रामकृष्ण वर्मा वकील को बतलाई। वकील साहब ने कहा- आत्महत्या करना चाहो तो कर लेना, लेकिन पहले दतिया में एक सिद्ध महात्मा, सच्चे सन्त रहते हैं, उनके दर्शन कर लो। तो मृत्यु के समय यह शान्ति रहेगी कि सन्त के दर्शन कर पुण्य कार्य हुआ। वकील वर्माजी का प्रत्येक शनिवार को दतिया जाने का नियम था। प्रेम किशोर उनके साथ आए। श्री प्रभु को प्रणाम किया, तो बोले कौन हो ? श्री प्रेम ने उत्तर दिया- प्रेम किशोर। श्री प्रभु बोले -नाम ग़लत हैं प्रेम दास हो तुम। आपने पूछा- क्या बात है ? प्रेमदास ने उत्तर दिया - हे देव धन्वन्तरि ! मुझे श्वास की

बहुत तकलीफ़ है। आप फिर बोले-यह डाक्टर की दुकान नहीं है। प्रेमदास चुपचाप बैठे रहे। एक घण्टे बाद शाम को उठते हुए श्री प्रभु ने उसे आज्ञा दी- तुम सवेरे आना, एक लोटा कुनकुना पानी भर कर साथ लाना। जल्दी तुम्हारी बीमारी ठीक हो जाएगी। किसी से कहना नही, कोई प्रचार नहीं करना। दूसरे दिन सुबह छः बजे एक लोटे में पानी भरकर पहुँचे। मूढ़े पर बैठे स्वामी जी उठे और बोले-बैठो। फिर तकिये के नीचे (नेती क्रिया हेतु)दो मीटर की कपड़े की पट्टी लाकर दी और उसकी क्रिया अपने सामने कराई। इसके बाद फ़रमाया-दवाई भी दूँगा-सोमवार को। तूने देखा नहीं ? सभी मर्ज़ पर चलती है। तेरा काम इसी से हो जाएगा। एक दिन हे राज राजेश्वर ! आपने प्रेमदास से पूछा-कैसे हो ? प्रेमदास ने उत्तर दिया-हे स्वामी, ठीक नहीं हूँ। यह सुनकर आप एकदम एक सैनिक की तरह मूढ़े से उठे, बोले- चलो अन्दर आँगन में। वहाँ स्वामी जी मूढ़े पर विराजमान हो गए और प्रेमदास श्री चरणों के बहुत पास सिर झुकाए बैठ गए। इस प्रयत्न में कि श्री चरणों को दबा सकें। सच्चे संत की चरण सेवा बड़े भाग्य से मिलती है, गुरु की सेवा बड़ी कठिन है। साकार स्वरूप की सेवा करके गुरु तत्त्व को पाया जा सकता है। अपने निजी सेवक को श्री प्रभु ने आज्ञा दी- एक पपीता लाओ। आपने पपीता हाथ में लिया और उसे ख़ूब देखा और कहा-हाँ ठीक है। पपीते का वज़न क़रीब दो किलो था। श्री प्रभु ने फिर कहा-इसे मेरे सामने खाओ, जाते समय एक और ले जाना, इसके बाद एक बार ख़रीद कर खाना और अपने करकमलों द्वारा पपीता काट कर प्रेमदास को खिलाया। श्री प्रेमदास बीस दिन से लगातार बीमार चल रहा था, डाक्टर परेशान था। प्रेमदास को अन्दर ही अन्दर यह आभाष था कि यह परेशानी किसी तांत्रिक, जादू टोने के कारण हुई है। सम्पत्ति को लेकर झगड़ा चल रहा था और विरोधी लोग इन पर अभिचारक प्रयोग करवाया करते थे। फिर सोचते इतने बड़े दरबार की कृपा है, तो किसी का क्या

डर ? पपीता खाने के बाद एकदम ठीक हो गए। एक दिन एक मन्त्र भी श्री प्रभु ने इनको देकर कहा-मुँह में रखना(उच्चारण मन में) कोई भी आक्रमण होगा कट जाएगा। तुमको मैंने ब्लैंक चैक दे दिया है, किसी अभिचार का तुम्हारे ऊपर प्रभाव नहीं होगा। एक दृष्टान्त कहा कि एक बार दुर्वासा ऋषि महाराजा अम्बरीश पर क्रोधित हो गए और उन्होंने एक कृत्या नामक राक्षसी को पैदा किया जो अम्बरीश को खाने के लिए दौड़ी। भक्त की यह दुर्दशा भगवान् से देखी न गई। उन्होंने सुदर्शन चक्र को आज्ञा दी। उसने कृत्या को मारकर दुर्वासा ऋषि का पीछा किया। वे तीनों लोकों में भागते फिरे पर किसी ने उनको आश्रय नहीं दिया। अन्त में महाराज अम्बरीश के चरणों पर ही आ गिरे तब उनकी रक्षा हुई। हे महौषध ! आपने प्रेमदास को ब्लैंक चैक दे दिया। त्रिलोक में कौन है जो उसे कष्ट पहुँचा सके। एक बार दतिया प्रदेश में वर्षा न होने के कारण भयंकर सूखा पड़ा। लोगों ने तरह-तरह के पूजा पाठ और मन्नतें मनाई परन्तु पानी की एक बूंद भी नहीं गिरी। भीषण हाहाकार हो रहा था। दतिया के लोगों ने मिलकर विचार किया कि साक्षात् वरुण से प्रार्थना की जाए। दुष्ट लोगों ने भी सोचा कि चलो-साथ चलते हैं मज़ा रहेगा, उस साधु की हँसी उड़ाने का मौका मिलेगा। सन्त असलीयत जानते हैं, इसलिए वे ही आदमी के विचार परिवर्तन करा सकने में समर्थ होते हैं। सन्त ह्रदय तो अति निर्मल और कोमल होता है। आपने कहा-पानी गिराना परमात्मा का काम है, समाज हित के लिए मैं भगवान् से प्रार्थना करूँगा। जो सच्चे भाव से प्रार्थना और प्रयत्न करते हैं, उनके भगवान् सहायक हो जाते हैं। उसके बाद महाराज जी ने आँख मूँद ली और माता से कहा-हे जगत्जननी ! दतिया जनपद बिना पानी के त्रस्त हो गया है। हे महिषासुर का नाश करने वाली जगदम्बा ! अपने पुत्रों की रक्षा के लिए आप हाथ में तलवार धारण करती

हैं। आपके भक्त पानी बिना बड़े संकट में है और आपसे प्रार्थना करते हैं कि वर्षा का अमृत-पान कराएँ। हे विश्वम्भर ! आपके श्री मुख से ऐसा कहने पर घनघोर वर्षा हुई। दुष्ट लोग जो हँसी उड़ाने के लिए आए थे, चुपचाप वहाँ से खिसक गए। यह आश्चर्य देखकर बहुत से नास्तिक लोगों का हृदय परिवर्तन हो गया। वे समझ गए कि यह कोई ज़रूर सिद्ध योगी है और वे आत्मकल्याण की दिशा में अग्रसर हो गए। इसी प्रकार एक बार और भी बड़ा भारी अकाल वहाँ पड़ा, तब दतिया के एवं आस पास के निवासियों ने आपके प्रिय भक्त मोहनलाल वैद्य चतुर्वेदी को प्रभु के श्री चरणों में इस आपत्ति से बचाने की प्रार्थना करने के लिए भेजा। आपकी लीला अपरम्पार है। हे पुरन्दर ! आपने वैद्यजी से कुछ घी और कुछ शहद भेजने को कहा तथा वैद्यजी से अपने घर जाने के लिए कह दिया। दो घण्टे के भीतर ही पूरे दतिया प्रदेश में भारी बारिश हुई। इस प्रकार आपकी लीलाएं बहुजन हिताय, होती थीं। हे चतुर्वेदज्ञ ! आपने ही वैदिक ऋचाओं में यह कहा है-''आपो मयो जीवः''-यह जीव सृष्टि जल तत्त्व के आधार पर ही क़ायम है और आपकी ही बनायी हुई है। हे प्रभो ! आप शरणागतों पर कृपा कर ब्रह्म ज्ञान देने के लिए ही भूतल पर अवतरित हुए हैं। महादेव के डमरू की ध्वनि के समान आपकी महिमा अनन्त एवं अपार है। इलाहाबाद में पूर्ण कुंभ का मेला लगा हुआ था। हर व्यक्ति कुंभ स्नान के लिए भाग रहा था। श्री प्रभु अपनी बगिया में एकान्त में मूढ़े पर बैठे थे। भक्त सेवक अपने-अपने कार्य में व्यस्त थे। श्री प्रभु का एक अत्यन्त ग़रीब वृद्ध भक्त सेवक भोला से कह रहा था कि वह महाराज जी श्री शिव प्रभु के दर्शन चाहता है, आप उनसे इजाज़त ले लें। इजाज़त मिलने के बाद उसने अन्दर जाकर आपको प्रणाम किया, और चरणों में बैठकर रोने लगा। हे नित्यशुद्ध ! आपने सस्नेह पूछा- तुम क्यों रो रहे हो। अपने मनोभाव प्रकट कर बतलाओ। वृद्ध व्यक्ति ने उत्तर दिया-हे शतानन्द वासुदेव ! मैं वृद्ध होने से लाचार हो गया

हूँ, आज मेरे सब परिवार वाले इलाहाबाद कुंभ स्नान के लिए गए हैं। मैंने अपने पुत्रों से गिड़गिड़ा कर प्रार्थना की- मुझे भी साथ ले चलो। लेकिन मुझ लाचार को अपने साथ नहीं ले गए, उसका मुझे बड़ा दु:ख हो रहा है। वे लोग अपने साथ इसलिए नहीं ले गए क्योंकि उन्होंने सोचा कि यदि भीड़ में बूढ़ा धक्का लगकर मर गया तो सिर आफ़त मोल कौन लेगा ? हमको ही स्नान करने को मिल जाए तो भगवान् की बहुत कृपा समझो। आपके दर्शनों से मन की बात कह देने से मुझे शांति मिलती है इसलिए मैं आपके पास आया हूँ। इतने में बहुत से सेवक और भक्त वहाँ आकर बैठ गएँ उनमें से एक भक्त ने वृद्ध से कहा-क्यों फ़ज़ूल में रोता है। अपने शास्त्रों में लिखा है कि-गुरु साहचर्य ही यथार्थ तीर्थ यात्रा है, गुरु चरणामृत ही यथार्थ तीर्थोदक है। गुरु के भीतर इष्ट दर्शन ही यथार्थ देव दर्शन हैं। गुरु के समीप रहकर सदा गुरु सेवा ही सब तीर्थ सेवा है। गुरु को छोड़कर दूर देश स्नान करने से क्या होगा। अच्छा हुआ तुम्हारे बच्चे तुम्हें न ले गए। आजकल कुंभ में बड़ी दुर्घटना हो जाती है। हे प्रभु सहस्त्रपाद ! आपने भक्त द्वारा दिए गए उपदेश को सुनकर आप बड़े ज़ोर-ज़ोर से हँसने लगे और अन्य भक्तों को आवाज़ देकर बुलाया और कहा- तुम लोगों को मैं एक कथा सुनाता हूँ। कथा सुनोगे क्या ? भक्त लोग बड़े प्रसन्न हुए। सबने एक स्वर में कहा-अवश्य महाराज। हे गुरुवरोत्तम ! आपने विनोद पूर्वक कहा-एक सिद्ध सन्त के बहुत शिष्य थे, एक बार कुम्भ पड़ने पर एक शिष्य को छोड़कर सब शिष्य स्नान को चले गए। गुरु ने सोचा कि-यह एक ही बाक़ी क्यों रह गया। इसलिए उसको बुलाकर कहा- बेटा सब कुम्भ स्नान पर पुण्य कमाने गए हैं, तुम क्यों नहीं गए? तुम भी चले जाते। शिष्य ने कहा-हे महाराज ! यदि आपके सब कूकर चले जाते तो यहाँ पत्तल कौन चाटता। यह कथा सुनकर वहाँ हर्ष का वातावरण छा गया और उस शिष्य की निष्ठा पर तरह-तरह की बातें लोग आपस में करने लगे। उस समय

आप अत्यन्त प्रसन्न थे, जो वृद्ध व्यक्ति कुंभ न जाने की असहायता पर रो रहा था, उसे आपने आज्ञा दी कि-जाओ आश्रम के बाहर जो हरिद्राकुण्ड बना हुआ है, उसमे स्नान करो। तुम्हें कुंभ स्नान का पूर्ण फल प्राप्त होगा। भारतीय संस्कृति में तीर्थो का प्रमुख महत्त्व रहा है। तीर्थ के अर्थ और स्वरूप को भक्तों के कल्याणार्थ हे पूर्ण ब्रह्मज्ञान राशि ! आपने इस प्रकार समझाया- जिसके द्वारा मनुष्य तर जाते हैं उसे तीर्थ कहते हैं। शास्त्र, यज्ञ, पुण्य-क्षेत्र अवतार, ऋषियों से सेवित जल, मंत्री आदि अर्थ तीर्थ शब्द के लिए किए जाते हैं। इन सभी अर्थो में तरना इस सामान्य अर्थ का बोध होता है। अज्ञानरूपी नदी में सारा संसार डूबा हुआ है, इसलिए शास्त्र को तीर्थ कहा गया है श्री प्रभु ने आगे यह कहा कि शास्त्रों में यज्ञ को तीर्थ इसलिए कहा जाता है कि यह भी देव-पूजा, तथा दान के द्वारा मनुष्य को दुःखों से पार करता है। पुण्य क्षेत्र, काशी, प्रयाग आदि भी तीर्थ इसलिए कहे जाते हैं कि उनका भ्रमण करने से सद्भाव उदय होते हैं, जिनसे मनुष्य सांसारिक दुःख से तर जाते हैं। अवतार तीर्थ इसलिए है कि साधू-पुरुषों की रक्षा, दुष्टों का दमन, धर्म की स्थापना अवतार के मुख्य कार्य हैं। इससे जनता का उद्धार होने से अवतार भी तीर्थ कहे जाते हैं। ऋषि सेवित जल गंगा यमुना आदि को भी पाप निवारण का कारण होने से तीर्थ कहा गया है। परन्तु यह विषय सूक्ष्म है। उपाध्याय या गुरु भी तीर्थ कहे जाते हैं। क्योंकि शिष्य को सत् ज्ञान प्रदान करके संसार से तारते हैं। मन्त्री राज्य कार्य सुचारु रूप से चला कर राष्ट्र पर आयी विपत्ति से तारने वाले होने से वे भी तीर्थ हैं। हे महातीत ! इस प्रकार विनोद पूर्ण वातावरण में ही आपने उस वृद्ध के दुःखों का हरण कर लिया और तीर्थ के गहन विषय को साधारण सरल रूप में समझाया। उस वृद्ध ने विनय पूर्वक कहा- प्रभु आप सारे उपनिषदों के सार हैं, सभी वेद आपकी महिमा गा रहे हैं। आप देव देवेश तथा सर्वज्ञ हैं। आपने यह लीला दिखाकर सब संशय दूर कर

दिए। हे गुरुमुखी भक्तों ! परमतीर्थ रूपी सद्गुरु के ऋण से मुक्त होना पड़ता है। इसमें गुरु आदेश मुख्य है। भवसागर पार करना ही प्रथम कर्तव्य है। श्री स्वामीजी के गुरु का नाम स्वामी तारानन्द जी था। जैसा कि भक्तों ने श्री मुख से सुना था। वे पंजाब प्रांत में (सम्प्रति हिमाचल प्रदेश में बैजनाथ धाम) तारापुर नाम के आश्रम में रहते थे। उनका शरीर गुजराती था। वे पढ़े लिखे कम ही थे किन्तु धारा प्रवाह संस्कृत बोलते थे। पूर्ण वैरागी व त्यागी महात्मा थे। सन् १९४५ में उन्होंने शरीर त्याग दिया था। उस स्थान पर तीन तारानन्द हुए। किन्तु श्री प्रभु के गुरु तारानन्द प्रथम ही थे। बाद के नहीं। तारानन्द नाम प्रचलित नाम है। गुरु परम्परा में दिया गया नाम गुप्त रहता है तथा वह प्रचलित नहीं होता। शिष्य परम्परा ही वह गुप्त नाम जानती है। आश्रम से प्रकाशित श्री ताराकर्पूर स्तोत्र का समर्पण श्री प्रभु ने अपने गुरु को ही किया है। प्रमाणार्थ समर्पण के प्रथम श्लोक में ''श्री तारामुनिभिः................बालोपि ग्रासं मुदे'' उद्धृत है।इसके पश्चात् १४ वे श्लोक की टीका करते हुए महाराज जी ने लिखा है कि श्री तारानन्द स्वामी के अनुसार वाममार्ग में पंचमकार अर्थ इस प्रकार है।''मद्यं मीनं च मांसं...............तां परिष्वज्य नित्यम्'' पंचमकवि के पहाड़ पर तारामाई का मन्दिर बनवाने का अर्थ ही श्री प्रभु ने अपने गुरु की प्रसन्नतार्थ ही किया था। गुरु पूर्णिमा पर एक बार एक भक्त हरगोविन्द ने आपसे निवेदन किया कि गुरु पूर्णिमा के पावन अवसर पर हमेशा बारिश होती है। आज भी घनघोर वर्षा हो रही है। आपके भक्तों को बड़ा कष्ट उठाना पड़ता है क्योंकि पूजा के लिए सब लोग खुले चौक में खड़े रहते हैं। हे दीनानाथ ! कई बार अकाल पड़ने पर आपकी ही कृपा से वर्षा हुई है। गुरुपूर्णिमा के दिन वर्षा न हो बाकी दिन चाहे होती रहे। इन्द्र का गर्व हरण करने वाले, हे श्याम मोहन ! आपने

पहले गोवर्धन उठाकर अपने ग्वाल बालों को अभयदान दिया था और इस समय भी उनकी

पहले गोवर्धन उठाकर अपने ग्वाल बालों को अभयदान दिया था और इस समय भी उनकी प्रसन्नता रखने के लिए आपने एक मूसल मँगवाकर उसे हाथ से छूकर सामने तालाब के मैदान में फिंकवा दिया। सब भक्तों ने साश्चर्य देखा कि- उसी समय वर्षा रूक गयी। निःसन्देह बारिश आपके हुक्म से समय पर होती है और समाप्त होती है। इसके देवता राजा इन्द्र के आप ही उपास्य हैं। आप योगेश्वर की लीलाओं को कौन जान सकता है। हे दयानिधान ! आप अपने भक्तों के मार्ग में आने वाली विघ्न-बाधाओं को क्षणमात्र में काट देते हैं। उत्तर प्रदेश के अलीगढ़ स्थान के निवासी श्री यदुवीर सिंह श्री स्वामीजी महाराज के ही भक्त हैं। ये यदुवंशी क्षत्रीय हैं और उत्तर प्रदेश सिंचाई विभाग में उपराजस्व अधिकारी तथा ज्युडीशियल मजिस्ट्रेट हैं। एक बार उनके पास एक आत्मा सूक्ष्म शरीर में आकर उनसे कहने लगी, ''मैं तुमको दिखाई नहीं दे रहा हूँ लेकिन तुम डरना नहीं''। यह सुनकर श्री यदुवीरसिंह चौंके और इधर उधर देखने लगे। उस समय वे कुछ वादों पर अपना फ़ैसला लिखने के लिए अपने सरकारी निवास पर बैठे फाइलें देख रहे थे। रात्रि के लगभग नौ बज रहे थे। उनकी निगाह एक फाइल पर गई तो दर्पण की भाँति उन्हें उसमें एक प्रतिबिम्ब दिखाई दिया। एक मध्यम क़द का साधु जिसके चेहरे पर सफ़ेद दाढ़ी है, गौर वर्ण है और खड़ा हुआ तीक्ष्ण नेत्रों से उनकी ओर देख रहा है। तभी यदुवीरसिंह के मुख से निकला- तुम कौन हो ? उस प्रतिबिम्ब ने उत्तर दिया- यदि तुम कहो तो मैं प्रत्यक्ष होकर सब कुछ बताऊँ। ठाकुर के हाँ कह देने पर वह आत्मा प्रत्यक्ष होकर उनके सामने मेज़ पर बैठ गई और कहने लगी- मैं और तुम पूर्व जन्म में गुरुभाई थे। तुम्हारा जन्म आगरा दिल्ली राष्ट्रीय मार्ग पर स्थित 'रुनकुता' ग्राम में हुआ था और तुम्हारा नाम ठाकुर तुलसीराम था। आज भी सड़क के किनारे ही एक

अच्छा-सा मकान बना हुआ है, उन्हीं के परिवार के तुम थे। तुम बचपन में ही घर छोड़कर साधु हो गए थे और तुम मेरे साथ गुरुदेव के सान्निध्य में जमुना नदी के तट पर रेणुका घाट पर साधना करते थे। अपने प्रारब्ध वश पच्चीस-छब्बीस वर्ष तक साधना करने के पश्चात् शरीर छोड़ दिया और जिला बुलन्दशहर के स्याना नामक स्थान पर ठाकुर परिवार में ही अन्य शरीर ग्रहण कर लिया। उसी शरीर से तुम मेरे पास बैठे हो। उस समय मैं अकेला रह गया। मेरी साधना में कुछ विघ्न आए और मैं अपने पथ से गिर कर इस प्रेत योनि को प्राप्त हो गया। गुरुभाई होने के कारण मुझे तुमसे बहुत प्रेम है। मैं तुम्हारे बहुत काम आ सकता हूँ। मेरे स्वरूप के चिंतन करने से ही मैं उपस्थित हो जाया करूँगा। ऐसा कहकर वह साधु वेष प्रेत चला गया। श्री यदुवीरसिंह एक दिन मथुरा से जीप द्वारा जब आगरा जा रहे थे तो उन्होंने रुनकुता ग्राम में जीप रोक कर प्रेत द्वारा बताए उस पक्के मकान को देखा जो एक रिटायर्ड पुलिस दरोगा का था। उन सेवानिवृत थानेदार तथा अन्य लोगों को प्रेत द्वारा बताए गए स्वर्गीय डा. तुलसीराम जी के विषय में पूछा तो मालूम हुआ कि लगभग ८० वर्ष पूर्व उस खानदान में एक महात्मा हुए हैं जो परशुराम जी के आश्रम और रेणुका जी के मन्दिर में रहते थे। वे दो महात्मा थे और उन थानेदार के परिवार की वंशावली के अनुसार उन महात्मा का गृहस्थ नाम भी तुलसीराम ही था। वापस आकर रात्रिकाल में उन्होंने अपने गुरुभाई का आवाहन किया। वह साधु वेष प्रेत प्रकट हो गया और कहने लगा-तुलसीराम ! अब तो तुम्हें यकीन हो गया कि मैंने जो कुछ तुम्हें बताया वह ठीक है ? यदुवीरसिंह ने कहा-इसी का धन्यवाद देने के लिए मैंने तुम्हें कष्ट दिया, क्षमा करना। प्रेत यह कहते हुए कि नहीं भाई कष्ट किस बात का, चला गया। वे उसको कभी भी बुला लेते और अनेक

प्रकार की बातें पूछा करते। धीरे-धीरे वह प्रेत उनका परिवारी सदस्य बन गया। वह बिना आवाहन के ही चाहे जब यदुवीरसिंह के घर आ जाता था। बड़ी-बड़ी घटनाओं को पूर्व में ही भविष्यवाणी रूप में बतला जाता था और सावधान भी कर देता था। अब उससे किसी को डर नहीं लगता था। यदुवीरसिंह की साधना के समय आकर उनकी जङ्घा पर बैठ जाता। इससे साधना में विघ्न होने लगा। एक दिन उस प्रेत ने कहा - गुरुभाई तुलसीराम ! तुम मुझसे कभी अपने कल्याण का काम क्यों नहीं लेते? वह उनको अपार धन-सम्पत्ति दे सकता है। इस पर यदुवीरसिंह ने उत्तर दिया-धन-सम्पत्ति की ओर प्रवृत्ति करना मेरे गुरुदेव श्री प्रभु स्वामीजी ने निषिद्ध कर दिया है। हाँ ! यदि तुम मेरा कार्य कर सकते हो तो एक कार्य कर दो, तुम मेरी कुण्डलिनी जागृत करा दो। प्रेत बोला-यह कार्य मैं नहीं कर सकता, यह तो गुरुकृपा से ही हो सकता है। वह प्रेत चाहे जिस समय और चाहे जिस स्थान पर उनके पास आ जाता। जब वे अदालत करते उस समय भी वह उनके पास आकर बैठ जाता और बातचीत करता जिसको केवल यदुवीरसिंह ही सुन पाते। वे मुक़दमा सुनते-सुनते उस प्रेत की बातों का उत्तर देने लगते जिसको सुनकर अभियुक्त, गवाह और वकील तथा पेशकार आदि सोचने लगते कि मजिस्ट्रेट साहब को क्या हो गया है ? यह बात ज़्यादा बढ़ने लगी तो लोग यह भी कहने लगे कि वे पागल होने वाले हैं। प्रेत के कारण उनकी ऐसी दशा देखकर उनसे उनके कुछ साथियों और गुरुभाईयों ने कहा-आप इस बात को श्री चरणों में अवश्य निवेदन कर दो। तब एक दिन युदवीरसिंह पूरी घटना श्री स्वामीजी महाराज से निवेदन कर उससे मुक्ति की युक्ति पूछने लगे। श्री प्रभु ने कहा-ये सब साधकों के मार्ग में बाधा स्वरूप है। ऐसे लालचों में नही फँसना चाहिए। यद्यपि उस प्रेत की बताई हुई बातें सब ठीक हैं। उस प्रेत के सान्निध्य से तुम्हारी साधना समाप्त भी हो सकती है। उससे मुक्ति पाने के लिए तुम अपना जप

करने से पहले हाथ में जल लेकर अपने मूल मंत्र से ११ बार अभिमंत्रित करके अपने चारों ओर छिड़क लिया करो। जितनी दूर तक उस जल की छीटें जाएँगी, उस क्षेत्र में वह प्रेत प्रवेश नहीं कर सकेगा। तब युदवीरसिंह ऐसा ही करने लगे। इसके बाद वह प्रेत साधु दो-चार बार उनके पास प्रकट हुआ, परन्तु दूर ही खड़ा रहा और आख़िरी बार उसने कहा कि भाई तुलसीराम ! तुमने तो अब आढ़ लगा दी है, तुम हमसे बात ही नहीं करना चाहते। इसलिए अब मैं तुम्हारे पास नहीं आया करूँगा। इस प्रकार श्री गुरुदेव की कृपा से ही युदवीरसिंह उस प्रेत बाधा से मुक्त हो सके। इस "श्री स्वामी कथासार" का पाठ और श्रवण घोर रूप से आई विपत्ति के समय घी का दीपक जलाकर और सुगन्धित धूप से हवन के साथ करने से सर्व बाधा शान्त होती हैं, विपत्तियाँ टल जाती हैं। इस अध्याय का नित्यपाठ करने वाले पर कभी भी विपत्तियाँ नहीं आ सकती। श्री स्वामीजी महाराज की कृपा प्राप्त होती है।

श्री स्वामीजी महाराज की जय। यह भगवती पीताम्बरा को समर्पित है।

।। इति पंचदश अध्याय समाप्त ।।

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

षोडश अध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे प्रकाशपुञ्ज ! सोमनाथ ! यह चराचर जगत् आपका ही स्वरूप है। हे गिरिजापते! चराचर जगत् में पाप के कारण उत्पन्न भीषण विष को आप ही पीते हैं, इसीलिए तो समुद्र मंथन के समय प्राप्त हलाहल को भी आपने ही धारण किया था। हे मुकुन्द माधव ! आप ही राम हैं आप ही शिव हैं। अपने भक्तों के कष्टों को आप शीघ्र ही दूर करने वाले हैं। हे माया मुक्त श्री वल्लभ ! जो भी आपकी शरण में आया वह अभय हो गया। हे राष्ट्रगुरु! आपने ज्योतिष्मती नाम की औषधि की आड़-ओट में न जाने कितनों को रोग मुक्त कर जीवनदान दिया। विभिन्न प्रकार के रोगों पर एक यही दवाई दी। हे धन्वन्तरी भगवान् ! दवाई के माध्यम से आपका कृपा रूपी प्रसाद ही लोगों को मिलता था। प्रभु की घोषणा है- जो जन पत्नी, गृह, पुत्र, कुटुम्ब, प्राण धन आदि का मोह छोड़कर मेरी शरण में आता है, उसको मैं कैसे छोड़ सकता हूँ। साधु सेवक और भक्त गण मेरे हृदय हैं और मैं उन सबका आश्रय हूँ। वे सब मुझको छोड़कर कुछ नहीं जानते, तो मैं भी उन साधु-भक्तों को छोड़कर कुछ भी नहीं जानता हूँ। गाजीपुर के डॉक्टर शिवमंदिर का छोटा भाई बहुत अस्वस्थ रहने लगा था, उसे अनेक प्रकार की बीमारियाँ हो गयी थी। गाजीपुर, बनारस, दिल्ली के अनेक बड़े-बड़े डॉक्टरों को दिखाया गया परन्तु कोई लाभ नहीं

हुआ। सूर्यदेव शर्मा ने इनको दतिया के सच्चे सन्त शिरोमणि के शरण में जाने की सलाह दी। एक बार ये लोग नवरात्र के अवसर पर दतिया पहुँचे। इन्होंने निवेदन किया- हे भगवन् ! मेरा छोटा भाई बहुत अस्वस्थ है, हम सब जगह से निराश होकर आपकी शरण में आए हैं। दवाओं से फ़ायदा न होने की बात भी बता दी। पूज्यपाद राजराजेश्वर ने कहा-तीन तरह के उपचार होते हैं-एक तो मानवीय, जिसमें खाने-पीने की दवाएँ तथा परहेज आदि हैं। दूसरा राक्षसी, जो चीरफाड़ से सम्बन्धित हैं, तथा तीसरा दैवीय, जो प्रथम दोनों के असफल होने पर भी लागू हो सकता है और अचूक होता है। इस तीसरी पद्धति का सम्बन्ध मंत्र जप आदि से है। भगवन् आपने बीमार को सूर्य का मंत्र दिया एवं सूर्य का व्रत रखने की प्रतिज्ञा कराई। कुछ ही दिनों में बीमार का स्वास्थ्य एकदम सुधर गया। मुरैना के श्री अनिल कुमार सक्सेना को कैंसर रोग हो गया। बड़े-बड़े डॉक्टर वैद्यों का इलाज हुआ, लेकिन रोग बढ़ता गया। लोग कहने लगे कि अब इसका आख़िरी समय आया है, ब्लड कैंसर का कोई इलाज नहीं है। उसके परिवार वाले उसे आपकी शरण में ले आए। जो दुःख ताप का निवारण करता है, वही शिव है। माता की गोद में अबोध शिशु को कोई भय नहीं होता, इसी प्रकार हे सर्वेश्वर ! अनिल कुमार भी आपके दरबार में पहुँचकर भय-रहित हो गया। आपने उसे अपनी कृपा युक्त ज्योतिष्मती के सेवन की आज्ञा दी और इस औषधि के सेवन से चन्द दिनों में ही अनिलकुमार उस असाध्य रोग से मुक्त हो गया। चिकित्सक अनिल कुमार को पूर्णरूप से स्वस्थ देखकर चकित रह गए। हे अमृतेश्वर ! सबने यही कहा है कि यह चमत्कार तो ईश्वर ही कर सकता है। आपकी आज्ञा से जिसको भी ज्योतिष्मती दवाई दी गई, उसे बीड़ी, सिगरेट और सभी मादक द्रव्य आदि को जीवन पर्यन्त त्यागने को कहा गया। हे उमापति! न त्यागने की दशा में रोग पुनः होने की संभावना रहती है। दतिया के उमाशंकर शर्मा

भी ब्लड कैंसर से ग्रसित हो गए। इन्हें भी डॉक्टरों ने मृतप्राय घोषित कर दिया था। इनके पिता इन्हें आपकी शरण में लाए। हे परमानन्दनाथ ! अनिलकुमार की भाँति इन्हें भी आपने ज्योतिष्मती के सेवन की आज्ञा प्रदान की। कुछ समय में ये भी स्वस्थ हो गए। श्री राजेश कुमार पाठक पर जब वे मात्र छः माह के शिशु थे पोलियो का भयंकर आक्रमण हुआ, इस आक्रमण से शिशु राजेश के हाथ पैर पतले पड़ गए और वह चलने फिरने योग्य नहीं रहा। १०-१२ वर्ष तक उसकी विभिन्न स्थानों पर चिकित्सा होती रही परन्तु कोई लाभ नहीं हुआ। अन्त में उनके पिता ने राजेश को आपके चरणों में लाकर पटक दिया और बड़े करुण स्वर में पुकार की - हे सन्ताप हरण ! इस बालक की चिकित्सा बड़े-बड़े डॉक्टरों से कराई है। धन पानी की तरह बहाया है, जिससे आर्थिक संकट भी हो गया है। सब जगह से हताश होकर आपकी शरण में आए हैं। आपकी कृपा होने पर कोई कार्य असंभव नहीं होता। आपने कहा-प्रारब्ध तो भोगना ही पड़ता है और करुणा कर उसको भी ज्योतिष्मती देकर स्वस्थ कर दिया। अगले दिन प्रातःकाल जिस समय प्रभु भक्तों को दर्शन देने हेतु चौक में विराजमान थे और भक्तगणों से तरह-तरह की बातें करते हुए उपदेश दे रहे थे एक दुबले पतले बीमार से आदमी ने प्रणाम किया-श्री प्रभु ने ममता-भरी वाणी से पूछा-रतनसिंह तुम इतने दिनों से कहाँ थे, वह बोला-महाराज मैं दमा से ग्रसित हूँ। भक्त भोला अपने गुरु भाई की दशा देखकर बोले-महाराज ये कितने दुबले भी हो गए हैं। रतनसिंह हाथ जोड़कर बोले डॉक्टरों ने जवाब दे दिया है और मेरा जीवन आपके हाथों में हैं। रतनसिंह की गंभीर और शोचनीय स्थिति देखकर हे अश्वनी कुमार! आपका ममतामय हृदय द्रवित हो उठा और भोला से कहा इन्हें अभी ज्योतिष्मती लाकर दो। हे अमृतसागर ! कुछ ही दिनों में रतनसिंह स्वस्थ हो गए। स्थान के प्रबंधक बसंत पंचमी के उत्सव की तैयारी में लगे हुए थे, कई प्रकार के कार्यक्रम पूजन अर्चन

अभिषेक और इसके पश्चात् सांस्कृतिक गोष्ठी और रात्रि को गायन का कार्यक्रम निश्चित कर सूर्यदेव बगीचे में अपने प्रभु श्री स्वामीजी के पास आज्ञा लेने गए। श्री स्वामीजी ने कहा-गायन के लिए श्री आदिल ख़ाँ को बुलाओ। सूर्यदेव ने सूचित किया-महाराज ! आदिल ख़ाँ अपनी मधुर-सुरीली आवाज़ खो चुके हैं। तब प्रभु ने कृपा कर आदिल ख़ाँ को ही बुलाया और ज्योतिष्मती देने की आज्ञा दी। एक माह के अन्दर ही उस्ताद ख़ाँ साहब को अपनी खोई हुई आवाज़ वापस मिल गई। हे करुणा के सागर ! आपकी अहैतुकी कृपा का शेष भगवान् भी अपने हज़ारों मुख से वर्णन करने में असमर्थ है। अपने भक्त श्री रतनसिंह को एक दिन श्री महाराज ने कहा-तुमको हम एक मंत्र बताना चाहते हैं उसका उपयोग धन कमाने में नहीं करोगे। रतनसिंह ने कहा-हे महाराज ! आप जो भी आज्ञा देंगे वह मेरे लिए कल्याणकारी होगी। मैं तो मर गया होता यदि आपकी कृपा न होती। मेरे जीवन-दाता प्रभो ! आप ही हैं। तब रतनसिंह को एक मंत्र तिल्ली झाड़ने का प्रदान कर दिया। इस मंत्र का ऐसा प्रभाव होता है कि अनेक व्यक्ति जो तिल्ली के मरीज़ थे, जिन्हें कई चिकित्सकों ने असाध्य कहकर लौटाया था, वे सभी इस मंत्र के द्वारा उस बीमारी से छुटकारा पा गए हैं। हे पुराण पुरुष ! यह आपकी कृपा का ही फल है। प्रोफेसर ए.पी त्रिपाठी, भोपाल से दतिया आए और श्री प्रभु से प्रार्थना की कि भगवान् हैड इन्जूरी(सर के चोट) के सर्वोत्तम इलाज के बाद भी मेरी स्मरण शक्ति में सुधार नहीं हो रहा है। मैं आपकी शरण में आया हूँ। मुझे प्रसाद के रूप में दवा दें। श्री महाराज ने कहा-दवा तो दे सकते हैं, लेकिन यह प्रसाद नहीं, वरन् दवा है और ज्योतिष्मयी दवा दे दी। सन्त की आज्ञा से जो कुछ वस्तु दी जाय अथवा कहा जाय वह प्रसाद ही होता है और निश्यच कल्याणकारी ही होता है। सांयकाल श्री करूणानिधि अन्दर बगीचे में चाय का आस्वादन करते हुए पास में बैठे डाक्टर मिश्र से कृपापूर्वक कह रहे थे आज भोला ने चाय

अच्छी बनाई है। हे सत्य सागर ! आपकी पावन दृष्टि में कोई वस्तु बिना स्वाद या ख़राब नहीं थी। इतने में एक सेवक विनय ने प्रणाम कर निवेदन किया-महाराज ! वकील रामकृष्ण तथा उसके भाई सत्यदेव वर्मा आए हैं। श्री महाराज ने कहा-हाँ ! आज शनिवार का दिन है वकील वर्मा वर्षो से नियमित समय पर आते हैं और उन्हें अन्दर आने की आज्ञा दी। वकील वर्मा और उनके भाई ने चरणारविन्दों में प्रणाम किया तो श्री महाराज उनको देखते किंचित् मुस्कराते हुए बोले- कहिए साहब सत्यदेव जी ! कैसे दुबले-दुबले नज़र आ रहे हो ? क्या कुछ बीमार हो गये थे ? सत्यदेव ने विनम्र होकर अर्ज़ किया कि में जीवन-मरण में डोल रहा था, तो आल इंडिया मेडिकल इन्स्टीट्यूट में उपचार हेतु गया। मेरे ख़ून और मूत्र के परीक्षण को देखकर हताश होकर डाक्टर बोले- ''तुम्हारी हालत बहुत दयनीय है, आप एक दिन बाद आएँ तब पुनः परीक्षण होगा।''घर आकर हे जीवनधन ! आपको याद करता करता सो गया और स्वप्न में देखा कि दतिया के शिव मन्दिर के पास खड़ा हूँ। हे देवाधिदेव ! करूणा के सागर ! आप सामने से आ रहे हैं, आपने दूर से ही जिस प्रकार आज पूछा है, इसी तरह कहा- क्या कुछ तबियत खराब हो गई है ? मैंने अपनी निराशा जनक हालत आपकी सेवा में निवेदन की तो हे प्रभो ! आपने अपना बायाँ हाथ बाएँ से दाहिनी ओर चलाया और आशीर्वचन बोले- जाओ कुछ नहीं है जी, सब ठीक है। आँखें खुली तो शरीर हल्का लगा और दूसरे दिन डाक्टरों ने परीक्षण किया तो उन्हें विश्वास ही नहीं हुआ, क्योंकि रिपोर्ट नार्मल आयी। डाक्टर ने अपने अविश्वास पर ही विश्वास करके कहा- यदि तुम अमृत भी दवा रूप में खाते तो भी ठीक नहीं हो सकते थे। तुम सच बताओ, तुमने क्या लिया है। मैं तो यह सुनकर अवाक् रहा गया और आपको स्मरण करता हुआ सीधा दादा के साथ चरणों में प्रणाम करने को हाज़िर हुआ हूँ, आपने संकेतमात्र से ही मुझे नवजीवन प्रदान किया है। मैं आपका गुलाम

हूँ, आप मेरे सरताज हैं। प्रभु मुस्कराए और कहने लगे-हाँ साहब ! यह तो आप जो पीताम्बरा का जप करते हैं, उसका फल है। मैं तो कुछ भी नहीं जानता। इस प्रकार लीलाएँ तो अनन्त हैं। हे सागर के महासागर ! आपने अपनी कृपा के वशीभूत होकर बीमारों को स्वास्थ्य प्रदान किया, मरने वालों को पुनःजीवन; भयभीत हुओं को अभयदान, निराश्रयों को आश्रय दिए।आपने नास्तिकों के मृत प्राय हृदयों में कृपा कर आस्था उत्पन्न की। श्री मदन मोहन शर्मा जिन्हें आप गौड़ जी कहकर पुकारते थे, उ.प्र. के जनपद आगरा के अन्तर्गत आगरा के निकट बिचपुरी ग्राम के रहने वाले थे और अब वे मथुरा में रहने लगे। गौड़ जी झाँसी में राजकीय सेवा में राजपत्रित पद पर थे। वहाँ नियुक्ति के समय उनको ग़बन के आरोप में निलम्बित कर दिया गया। वे बहुत परेशान थे। झाँसी में उनकी भेंट दाँतों के डाक्टर और स्वामीजी के भक्त लालगोपाल से हुई। गौड़ जी को दुःखी देखकर लालगोपाल सारस्वत ने उन्हें कष्ट निवारण के लिए श्री प्रभु की शरण में आने को कहा। गौड़ जी लालगोपाल का परामर्श मानकर श्री चरणों के दर्शन कर निवेदन करने आए। श्री प्रभु ने उनसे पूछा- आप कौन है? गौड़ जी ने उत्तर में कहा- ब्राह्मण, श्री महाराज ! फिर प्रश्न हुआ-क्यों आए हो? उत्तर देने से पूर्व गौड़ जी ने सोचा- सन्त से सच और दाई से पेट नहीं छिपाया जाता और सच बोलने से ही कल्याण होता है। इसलिए बताया- मुझ से त्रुटि हो गई और ग़बन के आरोप में मुझे नौकरी से निलम्बित कर मेरे ख़िलाफ़ जाँच चल रही है। श्री प्रभु ने आगे पूछा-क्या चाहते हो ? गौड़ ने उत्तर में कहा-नौकरी वापस चाहता हूँ, मेरे ख़िलाफ़ चल रही है जाँच में मैं निर्दोष होकर बरी हो जाऊं। मैं आपकी शरण आया हूँ। तब गौड़ जी को पाठ करने को एक स्तोत्र देकर कहा कि मन्दिर में बैठी माई से प्रार्थना करो। इतने में ही उरई निवासी मानिक शर्मा ने आकर श्री सद्गुरु के चरणों में साष्टाङ्ग प्रणाम किया। श्री प्रभु ने मानिक शर्मा को फटकारते हुए

कहा-तुमने मेरी बात नहीं मानी ? अब किसलिए आए हो ? शर्मा रोने लगे और बोले- हे क्षमा सागर ! महान् भूल हो गई। कार्य की व्यस्तता में आपके द्वारा दी गई चेतावनी मेरी स्मृति से निकल गई। मैं अपराधी हूँ। मेरे कारण मेरे प्रभु को कष्ट उठाना पड़ा। मैं नदी में गिर गया था तो मेरी रक्षा हेतु श्री चरणों को जाना पड़ा। गहरी नदी में पीतवर्ण का अचला धारण कर आप आ गए और रस्सी फैंक कर डूबते हुए इस अपराधी दास के प्राणों की रक्षा की। मेरा तो जीवन दो बार आप ही का दिया हुआ है। मैं पश्चात्ताप की भीषण आग में जल रहा हूँ। हे अग्निमुख! आपने ही मेरे पिताजी, श्री चतुर्भुज शर्मा, को भी सद्गति प्रदान की और अन्त समय में आप ही उनके निकट रहे। मेरी ज़िन्दगी प्रत्यक्ष दो बार आपकी दी हुई है, रोम-रोम आप श्रीमान का कृतज्ञ है। मेरे शरीर के चमड़े की जूती बने और आप पहनें तो भी कम है। यह सुनकर महाराज ने समझाया-''मैं कौन तुमको बचाने वाला हूँ। बचाने वाली तो वह माई बैठी है। मनुष्य द्वारा किए जाने वाले पुण्य कर्मों के फल स्वरूप ही ऐसा मरण टलता है। रोने से कोई लाभ नहीं। आगे से सावधानी रखनी चाहिए। सन्तों की सेवा करते रहना चाहिए। यह बहुत बड़ा पुण्य कर्म है।'' शास्त्र ठीक ही कहते हैं। कि श्री गुरुदेव की डाँट तो प्रसाद होता है। उनकी डाँट से तो पाप क्षय होते हैं। श्री मानिक शर्मा के स्वर्गीय पिता श्री चतुर्भुज शर्मा, अनेक वर्षों तक उत्तर प्रदेश शासन में मन्त्री पद पर रहे। जीवन के अन्तिम समय में लखनऊ के बलरामपुर अस्पताल में उनका ऑपरेशन हुआ था। वे श्री स्वामीजी के अनन्य भक्त थे। ऑपरेशन के समय प्रभु ने उरई के ही पं. गोपालदास (दद्दा) और दुर्गादास को दतिया से लखनऊ भेजते हुए कहा कि कल प्रातः ठीक दस बजे चतुर्भुज शर्मा से ॐ शब्द का उच्चारण ज़ोर ज़ोर से कराना। श्री प्रभु के आदेशानुसार शर्मा जी ने ठीक दस बजे ॐ ॐ ॐ तीन बार कहते हुए शरीर त्याग दिया था। फिर श्री स्वामीजी महाराज

ने कोने में खड़े श्री मदन मोहन गौड़ की ओर अत्यन्त पैनी और तेज़ दृष्टि से देखा। जैसे ही परमपूज्य गुरुदेव की दृष्टि मदन मोहन शर्मा गौड़ जी की दृष्टि से मिली वह तेज़ को आत्मसात् नहीं कर सका। उसका अपवित्र हृदय उस पैनी दृष्टि से काँप गया और शरीर में बिजली के करन्ट से लगने वाले झटके की भाँति बड़ा शक्तिशाली झटका लगा जिससे वह मूर्च्छित-सा होकर कोने में ही गिर पड़ा। कुछ क्षण पश्चात् ही वह होश में आया और सम्भल कर वहीं बैठा रहा। प्रभु श्री स्वामीजी ने दृष्टिपात कर मदनमोहन के हृदय में बैठे पाप पुरूष को भस्म कर दिया। इस लीला के पश्चात् श्री स्वामी महाराज गौड़ जी से बोले, ''अब तुम जाओ और तुम्हें बताया गया पाठ बाहर बैठ कर करो। दिन में कम से कम १०१ पाठ रोज़ करना। इस स्त्रोत के पाठ साक्षी के रूप में एक दीपक की स्थापना करके रात्रि में करने चाहिए। रात्रि में किए गए पाठ अत्यन्त प्रभावकारी होते हैं। अब तुम सब लोग जाओ, मेरे भजन का समय हो गया। मुझे भी अपना काम करने दो। यह कहकर महाराज जी अन्दर चले गए। थोड़ी देर बाद सूर्यदेव जी के दामाद डा. शिव मन्दिर प्रधान आए। एक बार उनके पिताजी भी दतिया पहुँचे थे और शिव भक्त होने के कारण श्रावण माह में शिव पूजन करने के लिए गाँव वापस जाने की आपसे आज्ञा माँगी। हे नारायण ! आपने उन्हें शिवमन्त्र दिया और कहा-तुम्हारे रुके हुए सब काम पूर्ण होंगे। अगली गुरुपूर्णिमा पर वे आए और कहा-हे नाथ ! मन्त्र जप करने से सब संकट समाप्त हो गए हैं और खेती की फसल भी तिगुनी हो गयी। श्री प्रभो ! आपने कहा- लाभ न हो तो मन्त्र कौन जपे ? इसी प्रकार आपने बादामसिंह को भी मन्त्र दिया था, जिससे उसकी खेती की फसल तिगुनी बढ़ गयी थी। श्री महाराज जी ने शिव मन्दिर के तीन साल के पुत्र से नाम पूछा- वह चुप रहा। इस पर महाराज जी ने विनोदपूर्वक

कहा- यह बुद्धिमान् है। अपना, अपनी पत्नी, अपने गुरु, अपने पुत्र एवं कन्जूस का नाम नहीं लेना चाहिए। यह बच्चा अपना नाम इसीलिए नहीं ले रहा है। कुछ दिन बाद में मथुरा वाले गौड़ जी आए। इनकी नौकरी लग गई थी। महाराज जी ने उसके अधिकारी को अंतः प्रेरणा दी थी। इन्होंने बहुत सारे रूपये महाराज जी को भेंट में चढ़ा दिए। श्री भगवान् ने यह देखकर वहाँ बहुत आदमियों को सम्बोधित करके कहा कि यहाँ लोग आते हैं और रूपये पैसे चढ़ाते हैं मैं तो सन्यासी हूँ। अरे प्रपंच करने वालों को इन चीज़ों की ज़रूरत रहती है। मुझे तो सर्वप्रिय वे व्यक्ति हैं जो मेरे आदेशानुसार भगवान् का भजन करते हैं। ऐसे व्यक्तियों को मैं प्रथम श्रेणी देता हूँ। दूसरा स्थान उन व्यक्तियों के लिए है जो आश्रम पर शारीरिक श्रम करते हैं धन से सेवा करने वाले तृतीय श्रेणी के सेवक हैं। जैसे साँप अपने बिल में सीधा जाता है। गुरु स्थान पर सबको उसी प्रकार जाना चाहिए। क्या परमात्मा लोगों के दिल की बात नहीं जानता ? फिर उन्होने सुरती बनाई और शिव मंदिर को भी खाने के लिए दी। शिव मंदिर के इंकार करने पर उन्होने बनारस में बोली जाने वाली भोजपुरी भाषा में कहा - "जै सुरती न खाई ऊ पंडित कस कहाई"। हे सर्व शक्तिमान! परमसन्त ! आपकी प्रत्येक कृति के पीछे कोई न कोई राज़ होता है, जिसे अपने अन्तरमन में वही समझ सकता है जिसे आप समझाना चाहते हैं। घमण्डी लोगों से तो आप बहुत दूर रहते हैं। एक रोज़ आपका एक परम भक्त, भगवान् स्वरूप सक्सेना जिसका लड़का भयंकर रूप से बीमार हो गया था। उसे आपने ही जीवनदान दिया था। वह दतिया से लखनऊ जाने के लिए आज्ञा लेने पहुँचा। हे सर्व सुलभ ! परम पवित्र ! आपने रहस्यपूर्ण ढंग से कहा-लखनऊ में हनुमान सेतु के किनारे बना हुआ हनुमान जी का मंदिर सिद्ध स्थान है। उन भक्त सक्सेना को इस संकेत का कोई मतलब समझ में नहीं आया। अगले दिन जब सक्सेना लखनऊ पहुँचे तो इसी पुल पर उनको चार

बदमाशों ने घेर लिया। एक के हाथ में रिवाल्वर था। अब ख़ैरियत नहीं है। निर्जन स्थान समझ में आ गया। संसार के दोस्त, रिश्तेदार इस समय काम नहीं आ सकते। हर हाल में काम आने वाले अपने मालिक महाराज जी को याद करने लगे। प्रभो ! जैसे ही आपका ध्यान लगाया, अन्तः प्रेरणा जागी कि रिवाल्वर छीन लो। आप तो साक्षात् चिन्तामणि हैं। रिवाल्वर तो हाथ नहीं लगी लेकिन आपकी कृपा से इनको ध्यान आया कि हाथ में ब्रीफकेस भी है और उसे घुमाना शुरू कर दिया। बहुत समय तक ऐसा चला। अन्त में बदमाश भाग गए। तभी एक व्यक्ति धुँधलके में घूमते हुए निकला और पूछने लगा क्या बात थी ? सक्सेना ने जवाब दिया-बदमाश थे। उसने साधारण भाव से कहा-"अच्छा" और उधर ही चला गया, जिधर बदमाश गए थे। हे महाकाय ! मुझे आपकी सारी लीला समझ में आ गयी, क्योंकि उसका अच्छा कहने का ढंग बिल्कुल आपकी तरह ही निर्विकार भाव का था। हे प्रभो ! आपके स्मरण मात्र से केवल ही नहीं होती अपितु दुष्ट लोग स्वयं आपकी शरणागत प्राप्त व्यक्तियों की सहायता करने लगते हैं। जैसा कि बाबूलाल गुप्त के साथ घटित हुआ। बाबूलाल गुप्त के हाथ में एक अटैची थी वे ग्वालियर स्टेशन जाना चाहते थे। अटैची में कुछ रक़म ज़्यादा थी, सिन्दे की छावनी लश्कर में पहुँच कर जब आटोरिक्शा से स्टेशन जाना चाहते थे तो उन्होने देखा कि - एक बदमाश व्यक्ति एक खुला बड़ा चाकू हाथ में लेकर एक-दूसरे आटोरिक्शा वाले से कह रहा था कि मैं तुझे अभी ख़त्म करता हूँ सारा रुपया निकाल दें। एक और आटोरिक्शा वाला पास में ही खड़ा था उसे भी चाकू दिखाकर कहा-ज़रा भी यहाँ से हिले तो तुझे भी ख़त्म कर दिया जाएगा। बाबूलाल गुप्त ने मन ही मन सोचा कि रक़म तो दूसरे की अमानत है वह तो जाएगी ही साथ में अब जान भी जाएगी। उन्होने मन ही मन पूज्यपाद श्री स्वामीजी का स्मरण किया कि प्रभो ! अब द्रौपदी की भाँति आप ही मेरी रक्षा कर सकते है और मेरा यहां कोई

नहीं है। इसके कुछ ही क्षणों बाद वह चाकू वाला बदमाश बाबूलाल गुप्त से बोला सेठ जी इस रिक्शा में बैठो मैं तुम्हें स्टेशन पहुँचा देता हूँ। बाद में इन लोगों को देख लूँगा। बाबूलाल चुपचाप स्टेशन के लिए बैठ गए। इस प्रकार आपकी कृपा से बाबूलाल ही नहीं बचे बल्कि दूसरे आटोरिक्शा वाले की गुप्ता जी के माध्यम से प्राणरक्षा हुई। हम लोग बहुत घमण्डी और मूर्ख हैं। सन्तों की महिमा पर विश्वास नहीं करते। क्या संसार में ऐसा कोई मनुष्य हो सकता है जो भलाई करने के बदले में धन या कोई वस्तु न चाहे और ऊपर से अपना नाम भी न चाहे। ऐसा व्यक्ति जो बदले में कुछ न चाहे वह विश्वरूप सन्त ही हो सकता है। अनादिकाल से आप पतितों का उद्धार करते आ रहे हैं हर घटना एक सितारा बन जाती है। प्रेमनारायण त्रिवेदी (जिलाधीश जबलपुर) की एक बार अपने बड़े अफ़सर से शत्रुता हो गई। इन्होने उच्चाटन का प्रयोग कर दिया जिससे शत्रु अर्ध पागल हो गया और एक महीने में पदावनत भी हो गया। आचरणहीन कार्य करने पर भी त्रिवेदी की तक़दीर बड़ी अच्छी थी, क्योंकि ये सन्तों को मानने वाले थे। गुरु से भी झूठ नहीं बोलना चाहिए। दतिया आने पर महाराज जी को अपना अपराध सच-सच बता दिया। महाराज जी ने कहा-अरे तुम सच-सच बोलकर बच गए, समझदार हो। विवेक से काम लेना चाहिए, बदले की भावना नहीं रखनी चाहिए। तुमने सब सच बोला, इसलिए भगवान् चन्द्रशेखर तुमको माफ़ भी कर देंगे। ये गन्दे तांत्रिक काम नहीं करना, ऐसे पशुवत् आचरण नहीं करने चाहिए। शुद्ध ढंग से तांत्रिक काम करने से तो भगवान् भी मिल जाते हैं। यह विद्या परमात्मा को प्राप्त करने के लिए है। कलियुग में वैदिक कर्मकाण्ड एवं योग साधना बड़ी कठिन है। तंत्र विद्या का सहारा प्रभु प्राप्ति के लिए सुगम हैं। हे सहस्र चक्षो ! आप अपने भक्तों के घर बार की भी परवाह और ख़बर रखते हैं। उनके घरेलू झंझटों को भी उसी तरह निपटाते हैं जैसे पारमार्थिक कर्मों के मार्ग में आई

बाधाओं को। नागपुर की रेणु शर्मा की बैंक लॉकर की चाबी खो गई विभिन्न स्थानों पर खोज होती रही, लेकिन चाबी का पता न लग सका। अतः बैंक के अधिकारियों से बातचीत और लिखा पढ़ी कर लॉकर को तोड़ने के लिए दिन निश्चित कर लिया गया। उसी रात रेणु देवी को विचार आया कि मैं इतना पूजा-पाठ करती हूँ, तथा मुझ पर आपकी असीम कृपा है, फिर मेरी खोयी हुई चाबी क्यों नहीं मिल रही है। मन में यह विचार आने लगा कि पूजा-पाठ से कोई लाभ नहीं है। यदि लॉकर का ताला तोड़ने से पहले चाबी नहीं मिलती तो श्री महाराज पर से विश्वास उठ जाएगा। उसी रात को ऐसा लगा जैसे कोई कह रहा हो-ईश्वर की उपासना के त्याग का विचार करना भी पाप है। तुम्हारे लॉकर की चाबी डायरी के अन्दर घर के बर्तन रखे जाने वाली अलमारी में बाहर रखी है। यह बात थोड़े-थोड़े अवकाश से कई बार सुनायी देती रही। हे ज्ञान सुधावर्षकप्रभो ! चाबी तो वहीं मिल गयी लेकिन उसे बड़ी वेदना हुई कि मेरी मूर्खता के कारण मेरे ईश्वर को इतना कष्ट उठाना पड़ा। भक्तों को धैर्य नहीं खोना चाहिए। यह तो बहुत साधारण परीक्षा थी। श्री हरिश्चन्द्र को जो परीक्षा देनी पड़ी थी सब जानते ही हैं। श्री प्रभु तो अपने सेवकों के सुमेरु पहाड़ के समान अपराधों को भुलाकर उनके रजकण के समान गुणों को अपने हृदय में रख लेते हैं। श्री रामरतन निगोती बहुत पहले ही आप प्रभु की शरण में आ गऐ थे। इनको मंत्र मिला, उसका जप करने वालों को जैसा कल्याणकारी और अभ्युदयकारी प्रभाव होता है सो उन पर भी हुआ। आढ़त का काम तो बढ़ा मगर साथ में आध्यात्मिक उन्नति भी हुई। एक दिन भयानक वर्षा हो रही थी, ब्रह्ममुहूर्त के अंधेरे में ही आश्रम आकर चोपड़े पर स्नान के लिए गए। स्नान के बाद एकदम घबराए हुए वे श्री प्रभु के पास आए तो आपने पूछा-क्या बात है ? निगोती जी ने उत्तर दिया-कीड़े (साँप) ने काट लिया है। हे व्याधिनाशक ! आपने सेवक भोला को बुलाया और कहा-इसको

नीलकण्ठ स्तोत्र दे दो, वह बैठकर उसका सात बार पाठ कर लें। यहाँ महादेव का स्थान है, सर्प तो रहते ही हैं, मगर जगदम्बा की अमृतमयी कृपा से कल्याण और जीवन-दान भी मिलता है। नीलकण्ठ स्तोत्र के पाठ से निगोती को आराम मिल गया और साँप का विष समाप्त कर नीलकण्ठ ने अपने गले में रख लिया। झाँसी से शिवनाथ नाम का एक भक्त ख़ूब शराब पीकर एक दिन रात्रि में दतिया आश्रम में माता के दर्शनों के लिए आया तो वहाँ फ़र्श पर गिर पड़ा, जिससे उसकी टाँग टूट गयी। कुछ दिन बाद वह आपके पावन दर्शनों के लिए आश्रम आया तो आपने उससे पूछा-तुम्हारे पाँव में सूजन क्यों हैं ? उसने कहा-शराब पीकर गिर पड़ा था। प्रभो ! आपने फिर पूछा-कहाँ गिरे थे ? उसने सच-सच बताया-कि महाराज मैं यहीं मंदिर में शराब पीकर गिर पड़ा था। श्री प्रभु ने एक सेवक को आज्ञा दी इसे एक बताशे में ज्योतिष्मती दवाई दो। संध्या तक उसके पाँव की सूजन उतर गयी और एक्स-रे से मालूम हुआ कि हड्डी पुनः अपने आप जुड़ गई है। सच बोलने वाला आपको अति प्रिय है। सच की महिमा का ज्ञान संत कृपा से ही संभव होता है। सिंधिया राज घराने के सरदार श्री आंग्रे की पत्नी का शिवपुरी में देहान्त हो गया था। शीघ्र ही वह उसे कार से गोदी में उठाए आश्रम ले आए और महाराज जी के चरणों में उसे लिटा दिया। महाराज जी बाहर विराजे थे। श्री प्रभु ने कुछ क्रुद्ध होकर कहा-क्यों ढोंग करके तमाशा दिखाती है। यह आश्रम है जहाँ लोग साधना करने आते हैं। उठो और अपने घर जाओ, नाटक मत करो और आगे से यहाँ नहीं आना। उपस्थित सभी लोगों ने देखा कि वह स्त्री शीघ्र ही उठकर बैठ गई। श्री प्रकाश मोहन जुत्सी नामक आपके भक्त, जिनकी बड़ी लड़की की शादी दिल्ली में तय हो गई थी। वे आपके दर्शनार्थ दतिया आए और आपसे प्रार्थना की कि लड़की का विवाह निर्विघ्न और शान-शौक़त से हो। मैं ग़रीब हूँ और मैंने कभी चोरी अथवा रिश्वत नहीं ली है, इसलिए बहुत

आर्थिक संकट में हूँ। किन्तु यदि हे कुबेर का भण्डार भरने-वाले परमात्मन् ! आपका आशीर्वाद मिल जाए तो विवाह अपने आप ही धूमधाम से होगा। उस समय श्री चरणों में बहुत से भक्त बैठे हुए थे। हे महामृत्युञ्जय ! आपने एक भक्त से कहा-प्रकाश जी चाहते हैं कि इनकी पुत्री का विवाह बड़ी धूमधाम से हो, तुम्हारा क्या विचार है ? उस भक्त ने उत्तर दिया-हाँ हाँ महाराज ज़रूर धूमधाम और निर्विघ्न होना चाहिए। यही बात अपने कई भक्तों से पूछी और सब लोगों ने यही जवाब दिया। हे चन्द्रशेखर ! आपने भक्त से कहा-प्रकाश जी ! जब इतने लोग चाहते हैं कि विवाह ठीक प्रकार से हो तो ठीक प्रकार से ही होगा। हुआ भी ऐसा ही। बड़ी धूमधाम जैसा कि धन कुबेरों के यहाँ होता हैं, वैसा ही हुआ। पाँच सितारा होटल में सब कार्यक्रम हुआ। ग़रीब भक्त प्रकाश भौंचक्के होकर सोचते ही रह गए कि यह सब कैसे हो गया ? प्रकाश तो क्या पुरातन काल से ही लोग सोचते चले आ रहे हैं और इसमें रहस्य की बात यह है कि जब तक कार्य चलता है, सारे सोच-विचार बन्द रहते है। कार्य समाप्त होने के बाद ही समझ में आता हैं कि क्या हो गया और कैसे हो गया ? हे प्रभो आप ही अन्नपूर्णा है, अन्नपूर्णा को किसी से कुछ माँगने की क्या आवश्यकता ? उसका काम तो कल्याणकारी वस्तुओं को बाँटना ही है। एक बार जब आप वृन्दावन अपने स्वधाम रामनारायण वैद्य, बाबू गुप्त, सूर्यदेव आदि भक्तों के साथ पधारे थे। उस समय वैद्यजी ने बिडला मंदिर के प्रबंधक पं.मदनमोहन शर्मा को भोजन व्यवस्था के लिए कहा था। किन्तु आपके पधारने से भक्तों की संख्या बहुत बढ़ गई थी और बने हुए भोजन की मात्रा अति अल्प पड़ गई। हे घट-घट की जानने वाले अन्तर्यामी ! हे अन्नपूर्णा स्वरूप ! आपने वैद्य जी को बुलाकर कहा, वैद्य जी आप चिन्तित जान पड़ते है क्या बात् है ? वैद्य जी ने उत्तर दिया-हे प्रभो-भोजन सामग्री कम पड़ गई है। मेरी लाज बचाए। मैं आपकी शरण में हूँ। महाराज जी ने सोचा जो मेरी

शरण में आ गया उसकी तो रक्षा होनी चाहिए। अतः आपने आज्ञा दी "भोजन सामग्री पर कपड़ा ढँक दीजिए और भोजन करा दीजिये"। मात्र आठ दस व्यक्तियों के लिए बने भोजन ने सत्तर अस्सी व्यक्तियों को तृप्त किया। महाराज जी ने पूछा-क्या सब लोग भोजन कर चूके ? वैद्य जी ने रोते हुए अवरुद्ध गले से कहा-"प्रभो आपकी कृपा से सबने भोजन कर लिया है। तब महाराज जी ने कहा-अब कपड़ा हटा दीजिए। कपड़ा हटाकर देखा गया तो वैद्य जी और मदनमोहन जी आश्चर्यचकित रह गए। पात्रों में खीर, पूड़ी आदि प्रचूर मात्रा में बच गई थी। इस प्रकार आपने स्वयं अन्नपूर्णा स्वरूप होकर भोजन का संकट दूर कर दिया। श्री स्वामीजी महाराज इस प्रकार सन्यास धर्म का आचरण करते और लोक कल्याण करते हुए अपना कार्य करते। आध्यात्मिक मार्ग में श्री सद्‌गुरु समर्थ के रहस्यमय क्रियाकलापों को कोई नहीं जान सकता। लेकिन हर शिष्य, हर भक्त जो भी श्री समर्थ की शरण में गया, वह स्वयं के जीवन को देखे तो निश्चय ही महसूस करेगा कि उसके समान समर्थ गुरु का अनुग्रह प्राप्त करने वाला धनभागी अन्य कोई नहीं है। हे करुणानिधि! विश्व की कोई भी शक्ति, स्वयं स्वयम्भू परमात्मा भी सन्त कृपा रूपी कथाओं के अध्याय को समाप्त नहीं कर सकता। हम सब प्रार्थना करते हैं कि हे समस्त संसार को उत्पन्न करने वाले ! सृष्टि-पालन-संहार करने वाले ! विश्व में सर्वाधिक दैदीप्यमान ! विश्व को ज्ञान स्वरूप प्रकाश देने वाले ! जगत् को सब कर्मों में प्रवृत्त करने वाले ! हे सद्‌गुरु स्वामी ! आप ही परब्रह्म हैं, आप ही सविता हैं। हे स्वामी जी महाराज! आप सम्पूर्ण दैहिक, दैविक, भौतिक, और आत्मिक क्लेशों जो हमारे द्वारा किए गए पापों से उत्पन्न हुए हैं, उनका नाश करें। आप सुबुद्धि देने वाले हैं, सम्पूर्ण विश्व आप में ही समाहित है। आप शिव हैं। आप ज्योतिस्वरूप हैं-परमज्योति

हैं। हम सब याचक आपके द्वार पर पड़े हैं। श्री स्वामी जी महाराज की जय। इस षोड्श अध्याय का जो व्यक्ति किसी शुद्ध-पवित्र स्थान में बैठकर श्रद्धापूर्वक और श्री स्वामीजी महाराज में दृढ़ भक्ति भावनाओं से युक्त होकर नित्य पाठ करता है या श्रवण करता है, वह सांसारिक आनन्दपूर्ण भोगों को प्राप्त करता हुआ सरलतापूर्वक अध्यात्म मार्ग में प्रवृत्त होता है।

श्री पीताम्बरा अर्पणम् अस्तु। वे सबका कल्याण करने वाली हैं।

।। इति षोड्श अध्याय समाप्त।।

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

सप्तदश अध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे विघ्नविनाशक उमापते ! सर्वदेवमय ! जो एक बार भी आपकी शरण में आ जाता है, और मैं तुम्हारा हूँ इस प्रकार की प्रार्थना करता है, उसको आप अभय दान दे देते हैं। विभीषण, भक्त प्रह्लाद की कथाएँ आपका यशोगान कर रही हैं। आप दयालु हैं और मैं दीन हूँ। आप दानी हैं मैं भिखारी हूँ। सन्त महात्माओं के अवतार तो जनकल्याण के लिए ही होते हैं। वह अपना सर्वस्व अपने भक्तों को ही दान कर देते हैं। जहाँ खांड(शक्कर)होती है। वहीं मक्खियाँ आ जाती हैं। हम अभागे मनुष्य! संसार में नरक रूप होकर जी रहे हैं। जो जन्म मरण रूप भव का भन्जन करने वाले श्री भगवान् के चरणों से विमुख हैं, वे परायी सम्पत्ति देखकर सदा जलते रहते हैं। वे जहाँ कहीं दूसरे की निंदा सुन लेते हैं वहाँ ऐसे हर्षित होते हैं, मानो उन्हें रास्ते में पड़ा ख़ज़ाना मिल गया हो। जो उनके साथ भलाई करता है, उसका भी अपकार करते हैं और परायी स्त्री, पराये धन में आसक्त रहते हैं। आजकल बहुत से दम्भी लोग अनन्य भक्त, साधु, ज्ञानी, योगी और महात्मा होने का ढोंग कर अपने नाम का जय और अपने स्वरूप का ध्यान करवाते हैं, तथा अपने पैरों का जल और अपनी जूठन पिला खिलाकर लोगों का धर्म भ्रष्ट करते हैं। श्री प्रभु के दतिया पधारने के प्रारम्भ काल में श्री शिवचरण दीक्षित और श्री हितकिशोर पस्तोर

महाराज जी की सेवा और माता की सेवा तथा आरती में भाग लेने लगे। ये प्रायः दतिया के राजा की सेवा में भी जाते थे। धीरे-धीरे इन कपटी लोगों ने अपना षड्यन्त्र फैलाना शुरू किया। किसी प्रकार यहाँ के और बाहर से आने वाले भक्तों का धन हरण करने लगे तथा लोगों को ज्ञान का उपदेश देने लगे। महाराज जी को उनसे क्या लेना देना। श्री प्रभु उनसे कुछ नहीं बोलते इससे उनका घमण्ड और कपट बढ़ता गया। एक दिन शिव चरण दीक्षित ने वहाँ के राजा के पास जाकर झूठ बोला कि-महाराज जी को एक गाय चाहिए और एक बहुत अच्छी गाय स्वामी जी के नाम पर ले आया और अपने घर ले गया। श्री प्रभु को यह मालूम पड़ा तो उनको बहुत डाँटा और स्थान से भगा दिया। इसके बाद से वे महाराज जी की बहुत निन्दा करने लगे और अनेक प्रकार के षड्यन्त्र रचने लगे। तत्पश्चात् महाराज के पास एक और बाबूलाल दुबे नाम का व्यक्ति अपनी स्वार्थ सिद्धि के लिए आने लगा। वह धीरे-धीरे मन्दिर की सफ़ाई व पूजा भी करने लगा। उसके मन में भक्ति भाव नहीं था लेकिन आपको उससे क्या लेना देना था। महाराज जी उससे कुछ नहीं बोलते थे। उसने एक अन्य व्यक्ति प्रयागदास को जो पहले से ही मन्दिर में रहता था उसे अपने साथ मिलाकर कई प्रकार के षड्यन्त्र रचे। लेकिन महाराज के भक्तों ने उनके षड्यन्त्र को समझ लिया और उन अनावश्यक व्यक्तियों को आश्रम से बाहर जाना पड़ा। जैसे धरती और आकाश नहीं मिल सकते, ऐसे ही सन्त और दुष्ट स्वभाव एक कैसे हो सकते हैं ? सच्चे सन्त को अपने ठगे जाने का तो बुरा ही नहीं लगता, परन्तु भगवान् की आड़ में ठगी करना तो महापातक है। एक बार महाराज जी आबू पर्वत गए। राजमाता विजिया राजे सिंधिया को मानो मन की मुराद मिल गयी हो। चातक को जैसे स्वाती बूंद मिल जाय उसी तरह राजमाता सिंधिया प्रसन्न हुई।

उन्होंने महाराज के श्री चरणों में प्रणाम कर कहा- हे शाहों के शाह। मेरी एक विनती सुनें। आबू पर्वत से लौटते हुए रास्ते में ग्वालियर शहर पड़ता है, मेरी इच्छा है कि आपकी चरण-रज मेरे घर में पड़ जाय तो मैं और मेरा सारा खानदान पवित्र हो जाए। सच्चे हृदय से की गयी प्रार्थना सन्त ज़रूर स्वीकार कर लेते हैं, महाराज जी ने हाँ कह दी। इस समाचार से कि आबू से लौटते समय श्री स्वामीजी महाराज राजमाता ग्वालियर के यहाँ भी पधारेंगे। सारे शहर में हर्ष छा गया। महारानी का ही भाग्य धन्य नहीं होगा, सारे नगरवासी धन्य होंगे। वे देवाधिदेव स्वयं शिवशंकर शम्भु इस नगर में आएँगे तो कोई भी दुष्ट से दुष्ट प्राणी भी ऐसा नहीं बचेगा जिस पर पवित्रता का प्रकाश न पड़े ? महलों की सफ़ाई की जाने लगी। भण्डारे होने लगे, भाँति-भाँति के पकवान और व्यंजन बनने लगे। राजाओं को क्या कमी, फिर आज तो स्वयं भूतभावन श्यामसुन्दर पधार रहे हैं। रानी ने भगवान् के चरणों में अपनी आत्मा सहित सारी सम्पत्ति अर्पित कर दी। हल्दी कुंकुम से पूजा की, भाँति-भाँति के पकवान सोने के थालों में सामने रख दिए, लेकिन श्री प्रभु ने थोड़ा-सा सादा भोजन कमण्डलु में एक साथ मिलाकर ग्रहण किया और वहाँ से श्री महाराज दतिया वापस पधार गए। जय जय जय आनन्दकन्द रघुवीर समर्थ ! हे पतित पावन ! आपने राक्षस रावण को मारने में देर नहीं की। हे श्यामसुन्दर कृष्ण ! आपने कंस को मारने में देर नहीं की तो फिर हम सब लोगों के अज्ञान को मारने में देर क्यों कर रहे हैं ? हे विराट पुरूष ! हे अनन्त ! हे कर्णधार ! आपने समय-समय पर इस धरातल पर प्रगट होकर अपने भक्तों का कल्याण किया है। सारा विश्व आपका श्वास-निःश्वास है और आप ही विश्वमय हैं। भारत की पुनीत धरा पर आप स्वामी के रूप में अवतरित होकर, जगत् का आध्यात्मिक उद्धार भी करने वाले हैं। आपके भक्त डॉ. मिश्रा और सरदार रछपालसिंह ने एक दिन तय किया दतिया चला जाए, सन्त शिरोमणि की पूजा-अर्चना

और मंगल आरती की जाए। सरदार रछपालसिंह जिसको हे प्रभो ! आप स्नेहवश जज साहब कहते थे, यह प्रोग्राम बनाकर बड़े हर्षित हुए और उन्होंने डॉ. मिश्रा से कहा-बड़ी अच्छी बात है, आज शुभ दिन आया है। मैं घर से अच्छी-अच्छी नमकीन बनवाकर ले चलूँगा, क्योंकि महाराज को मीठा खाने के लिए डॉक्टर लागों ने मना किया है। सन्त त्रिकालज्ञ होते हैं, बैठे-बैठे ही सारी बातें जान लेते हैं और फिर जगत् पिता गुरुदेव के तो असंख्य कान, नाक, मुख हाथ इत्यादि हैं। इधर महाराज जी ने भी सोचा- भक्तों की परीक्षा ली जाए। उधर दोनों भक्त जयपुर से कार द्वारा दतिया के लिए रवाना हो गए। रास्ते में उनकी कार की एक दूसरी कार से मामूली टक्कर हो गयी। दूसरी गाड़ी वाले को कुछ रूपया पैसा देकर शांत किया, फिर आगे बढ़ने के बाद उनकी गाड़ी के इंजन में बहुत तेज़ आवाज़ आने लगी। दोनों भक्तों ने आपस में सलाह की कि- हम लोगों को पैदल ही क्यों न दतिया जाना पड़े दर्शन करने के लिए निकले हैं तो बिना दर्शन किए हम लोग अन्न पानी नहीं लेंगे। हम लोगों ने सुना है कि जो सन्त के दर्शन करने घर से निकल पड़ता है। तो जब तक वह घर वापस नहीं आ जाता, उसकी और उसके घर की सारी ज़िम्मेदारी सन्त की होती है। हे सन्त शिरोमणि दतिया के महाराज ! हमारी इस प्रतीति को आप सफल करें, ऐसी प्रार्थना की और किसी तरह मोटर कार से धीरे-धीरे दतिया शाम को आश्रम पर पहुँच गए। दर्शन करने की आतुरता थी, इसलिए झटपट सामान रखकर अन्दर की तरफ़ गए। आज एक अजीब बात यह थी कि वहाँ एक रहस्यमय सन्नाटा छाया हुआ था। दोनों भक्तों ने देखा सामने आसन पर विश्वपुरुष समाधिस्थ हैं। इन्होंने दूर से ही प्रणाम करके जब सिर उठाया तो देखा-महारूप ! आपके शरीर का आकार बहुत बढ़ गया है, और धीरे-धीरे बढ़ता जा रहा है। एक क्षीण धुआँ युक्त

गेरुए रंग का प्रकाश शरीर में से निकल रहा है और सारा शरीर पारदर्शी है। दोनों ने एक दूसरे की तरफ देखा और अपनी आँखों पर विश्वास न करते हुए बिना आहट किए चले आए। सामान के पास पहुँचकर गूँगे की तरह झाँकते रहे। थोड़ी देर में होश आने पर एक दूसरे से पूछने लगे-क्या तुमने देखा ? यह बात ही कर रहे थे कि हे प्रभो ! आप उसी क्षण वहाँ पधारे और कहा-डाक्टर ! क्या बातें कर रहे हो ? आगे कहा-जो इन बाहर की आँखों से दिखता है, वह तो झूठ है, भ्रम है किन्तु जिसे गुरु कृपा से भीतरी आँखें प्राप्त हो गई, वही सच देखता है। डा. योगेश ने रछपालसिंह से कहा-यदि रास्ते में कठिनाईयों को देखकर रुक जाते तो परीक्षा में फेल हो जाते और इस प्रकार का भव्य दर्शन नहीं हो पाता। श्री सद्गुरु कठिन परीक्षा लेते हैं। और स्वयं ही सहारा देकर श्रद्धावान् शिष्य को पास कर देते हैं। अन्यथा ऐसा कोई समर्थ नहीं है, जो परमात्मा को परीक्षा दे सके। आखिर आप हैं क्या ? कुछ भी तो नहीं ? फिर ? हे पार्वतीपति ! सबको अपने प्रियतम की कथा प्रिय लगती है। हे प्रभो ! आप तो अपने एक दन्त रूप से सबको ज्ञान और बुद्धि प्रदान कर सबका कल्याण करते हैं। हे श्रोताओं ! आप देवाधिदेव श्री महाराज जी की महिमा का वर्णन सावधान चित्त से श्रवण करें। हे शम्भो प्रभात बेला में एकदिन आप बगिया में विराजे हैं। सभी भक्तगण भी श्रद्धापूर्वक आपके मुखारविन्द से प्रवाहित होनेवाली वाक् सुरसरि में गोता लगा रहे हैं। ऐसे सत्संग से आपके भक्तों के पापरूपी मल क्षीण हो रहे हैं। दर्शनार्थी भी दर्शन करने के पश्चात् उस आनन्द सागर में डूबने के लिए वहीं बैठ जाते है किसी का मन वहाँ से उठने का नहीं कर रहा है। सभी लोग अपने संसार को भूल कर प्रभु के परमधाम का सुख अनुभव कर रहे हैं। तभी पेड़ के ऊपर एक कौवा आकर बोलने लगा और आप रसाचार्य प्रभु का वाणी प्रवाह क्षण मात्र को रूककर कौवे के विषय को बखानने लगा। कौवे की वाणी सुनकर हे कोविद ! आपने कहा-आज

कौवा कुछ अशुभ समाचार दे रहा है। यह कहकर आपने पुनः ईश्वर चर्चा प्रारम्भ कर दी। सब लोगों की उस अशुभ समाचार के विषय में कुछ जानने की जिज्ञासा होते हुए भी आनन्द समुद्र में डूबकर सब कुछ भूल गए। कुछ देर पश्चात् ही एक दर्शनार्थी आया जिसके हाथ में एक ट्रांजिस्टर (रेडियो) था। उसने उस छोटे रेडियो को ज़मीन पर रखकर प्रभु को नमन किया और वहीं बैठ गया। अब काफ़ी भीड़ हो चुकी थी। घट-घट की जानने वाले श्री स्वामीजी ने उस दर्शनार्थी से कहा-यह तुम क्या लटकाए हो। उसका उत्तर था- छोटा रेडियो महाराज ! प्रभु ने तब आगे कहा-इसको खोलो-चलाओ देखे क्या यह भी वही कह रहा है जो कौवे ने कहा है। रेडियो को खोलते ही आवाज़ आयी - अब समाचार सुने। सबसे पहले समाचार यही था कि भारत के राष्ट्रपति श्री फ़खरूद्दीन अली अहमद अब नहीं रहे। यह सुनकर सब लोगों ने सोचा कि साक्षात् कागभुशुण्डी जी ही वह अशुभ समाचार सुनाने और श्री शिवजी के दर्शन करने कौवे के रूप में आए थे। एक बार विन्ध्य प्रदेश के तत्कालीन मुख्यमंत्री शम्भुनाथ शुक्ल श्री स्वामीजी के दर्शनों के लिए आए। वे प्रणाम करने के पश्चात् श्री स्वामी जी से निवेदन करने लगे- हे प्रभो! मेरे योग्य कोई सेवा बताईये। पूज्य स्वामी जी ने हँसकर कहा- मेरी आड़ में इस आश्रम के नाम पर कोई सरकार से अनुदान ले रहा है, उसे बन्द कर दीजिए। मुख्यमंत्री श्री शुक्ल अत्यन्त चकित हुए, पूज्य स्वामीजी ने फिर कहा कि उसकी जीविका नहीं मार रहा हूँ परन्तु यह वनखण्डी आश्रम सरकार के ऊपर आश्रित क्यों हो,यह तो स्वयं आश्रय है।आश्रम और श्री महाराज के नाम पर सरकार से अनुदान लेने वाला व्यक्ति वही शिवचरण दीक्षित था जो एक बार दतिया के राजा से भी महाराज जी के नाम पर एक दूध देने वाली गाय ले आया था। श्री स्वामीजी ने आगे कहा- यह साधना का स्थान

है, धन सम्बधित बातें कर लोग इस स्थान को दूषित करने की कोशिश करते हैं। यहाँ तो साधना की इच्छा से माता का दूध पीने के लिए व्याकुल बछड़े की भाँति बनकर आना चाहिए। यहाँ से तो दूसरों को आश्रय मिलता है। कुछ देर बाद मुख्यमंत्री प्रभु को प्रणाम कर चले गए। उसी दिन मध्यान्ह में भिक्षा के समय जब कुछ शिष्य भी वहाँ उपस्थित थे श्री महाराज ने एक रहस्य को खोलत हुए कहा- रात्रि के समय हम टहलते-टहलते यज्ञ स्थल की ओर गए तो श्री परशुराम जी से भेंट हो गई। उन्हें देखकर हम भी रूक गये तो वे कहने लगे-इस आश्रम में हम भी रहना चाहते हैं। यहाँ शाक्तमत के उपासक साधना करते हैं, यह बहुत अच्छा काम हुआ है। हमारे रहने के लिए भी प्रबन्ध होना चाहिए। इस बात को सुनकर उपस्थित भक्तों ने इस घटना का अर्थ जानना चाहा। तब प्रभु ने आगे कहा-श्री परशुरामजी शाक्त मार्ग के आचार्य हैं।''परशुराम कल्पसूत्र'' शाक्त धर्म का अत्यन्त प्रामाणिक ग्रन्थ है और उन्हीं द्वारा रचित है। श्री परशुराम जी ब्रह्मास्त्र विद्या श्री पीताम्बरा जी के पूर्ण ज्ञाता और प्रजातन्त्र के सबसे पहले संस्थापक आचार्य हैं। इसलिए इस स्थान पर श्री परशुराम जी की भी स्थापना होनी चाहिए। कुछ ही दिनों में प्रभु इच्छा से वहाँ श्री परशुराम जी की स्थापना हो गई। हे ज्ञानसिन्धो ! आप किस प्रकार लीला कर अपने भक्तों को देश की संस्कृति, धर्म और सभ्यता का पाठ पढ़ाते हैं, कोई जान ही नहीं सकता। आपका प्रत्येक आदेश, शब्द और निर्देश गूढ़ार्थ और दूरदर्शिता पूर्ण होता है अपनी कृपा जन साधारण को मुक्त हाथों से बाँटी है जिसको प्राप्त कर असंख्य लोग कृतार्थ हो रहे हैं। एक व्यक्ति ने श्री प्रभु से पूछा आबू पर्वत को साधना करने वाले तपस्या के लिए विशेष स्थान क्यों मानते हैं ? प्रभु ने आबू पर्वत के विषय में बताया आबू शब्द अर्बुद शब्द का अपभ्रंश है जिसका अर्थ है शिखर। इसे कई लोग पृथ्वी के उद्धार के समय सबसे पहले प्रकट होने के कारण पृथ्वी का शिखर मानते हैं। तो कई लोग तीन

नदियाँ तीनों तरफ़ निकलने के कारण अमर कंटक को प्रथम स्थान मानते हैं। गुरु दत्तात्रेय का एवं भैरव का भी आदि स्थान है। आबू अग्निवंशी क्षत्रियों का उत्पत्ति स्थान भी है। चौहान, परमार, सोलंकी और परिहार ये चार क्षत्रीय अग्निवंश के अन्तर्गत आते हैं। इन क्षत्रियों को वत्स, वशिष्ठ, कौशल और कश्यप इन चार ऋषियों ने आबू शिखर पर यज्ञ द्वारा प्रकट किया था। इन्हीं ऋषियों के नाम पर इन क्षत्रियों के गोत्र भी हैं। समय के प्रभाव से सूर्य, चन्द्र और अग्निवंशी क्षत्रियों में मिलावट हो गई है, परन्तु अग्निवंश के परमार क्षत्रिय आज भी मिलावट रहित शुद्ध रूप में है जिसके लिए वशिष्ठ ऋषि का उन्हें वरदान है और इसीलिए मुनिवर ने इनको परमार्य नाम दिया था, परमार तो अपभ्रंश होकर बोला जाने लगा है। इस प्रकरण को सुनने के पश्चात् भक्तों ने उस विलक्षण स्थान को देखने की जिज्ञासा व्यक्त की। श्री प्रभु आप तो कल्पवृक्ष के समान भक्तों की कामनाओं को पूर्ण करने वाले हैं। आबू की यात्रा का कार्यक्रम बन गया और श्री सद्गुरु सहित सभी भक्तमण्डली आबू शिखर पर पहुँच गई। शिखर पर रात्रि विश्राम हुआ। प्रातःकाल भक्तों ने जिन्होंने कोई स्वप्न आदि देखे श्री महाराज को सुनाए। एक तरूण ब्राह्मण विष्णुकान्त ने श्री चरणों में निवेदन किया-श्री महाराज ! यह स्थान तो अत्यन्त विचित्र है। गत रात्रि को स्वप्न के समय मैंने देखा कि मैं एक गुफा के द्वार पर खड़ा हूँ और जब उसमें घुसने का प्रत्यन करता हूँ तो मुझे एक व्यक्ति अन्दर जाने से रोकता है। उस महोदय से मैंने निवेदन किया कि मैं इसमें घुसना चाहता हूँ तो उसने मुझसे कहा कि मैं तुमको जानता हूँ और यह भी जानता हूँ कि तुम दतिया के स्वामी जी के साथ आए हो। मैं स्वामीजी को भी जानता हूँ। तब उस अजनबी विभूति ने गुफा की ओर इंगित कर मुझ से कहा-देखो। जब मैंने उस कन्दरा की ओर देखा तो उसमें मुझे बहुत

से साधु-महात्मा बैठे दिखाई दिए। मैंने उन्हें आपके विषय में चर्चा करते सुना। तत्पश्चात् उस विभूति ने हाथ को पुनः हिलाया। तब उस गुफा के अंदर बड़ा रौद्र दृश्य उपस्थित हो गया हज़ारों लाशें कटी-कटी अंग-भंग पड़ी हैं। उनमें रूधिर बह रहा है, बड़ा भयानक एवं विभत्स दृश्य हो रहा है। उस महात्मा ने कहा '' हिम्मत है इसे पार करने की ?'' उसी समय मुझे आप का विचार आया और मैंने दृढ़ता पूर्वक उत्तर दिया ''हाँ हिम्मत है''। उसका स्वप्न सुनकर श्री स्वामीजी ने कहा-तुमने सत्य कहा है वह अवश्य ही कोई महान् आत्मा रही होगी। आगे प्रभु ने बताया यह स्थान कोई सामान्य घूमने का स्थान नहीं है। यहाँ बहुत से महात्मा रहते हैं। यह तपस्या का स्थान है जहाँ सिद्ध आत्माएँ भी सूक्ष्म रूप में रहती हैं। दतिया में जो चार ऋषि मैंने बताए थे उनके इस पर्वत पर स्थान हैं। भगवान दत्तात्रेय का भी यहाँ स्थान है। इसी पर जैन धर्म का तीर्थ स्थान है। डाक्टर योगेश मिश्र के एक साथी डा. सुभाष शर्मा जो सवाई मानसिंह सिविल अस्पताल, जयपुर में आँखों के चिकित्सक हैं, परमपूज्य सद्गुरु देव के दर्शनों को पधारे। श्री चरणों में प्रणाम कर वे एक ओर बैठ गए। डा. सुभाष प्रभु के भव्य स्वरूप को देखकर अत्यन्त शान्ति का अनुभव करने लगा। वह एकटक प्रभु की ओर निहारता रहा। अचानक उसको ऐसा लगा कि श्री स्वामीजी का पूरा शरीर स्वर्णिम प्रकाश से व्याप्त है। उस प्रकाश में से एक तीक्ष्ण किरण निकलकर सम्पूर्ण भक्तों को घेरकर फैल गई है। वह डाक्टर भी उसी की परिधि में आ गया है। उसी समय डा. योगेश ने देखा कि श्री प्रभु के वक्ष स्थल से दो हल्के पीले रंग के बादल के टुकड़े प्रवाहित होते हुए निकले और एक डा. सुभाष के और दूसरा स्वयं डा. योगेश के हृदय पर छाती में समा गए। उसी क्षण डा. सुभाष ने रोना प्रारंभ कर दिया जो अनवरत तीन दिन तक चला। उठते-बैठते चलते खाते पीते

सिर्फ रोना ही रोना हो गया। यह तथ्य श्री स्वामीजी महाराज तक पहुँचाया गया तो श्री प्रभु ने डा. सुभाष को अपने पास बुलाकर सरस्वती मन्त्र का उपदेश किया और आबू पर्वत शिखर पर ही सरस्वती स्तोत्र नित्य पाठ करने के लिए कहा। यह प्राप्त कर डा. सुभाष सामान्य होकर उनका हृदय आनन्द से भर गया। "ऐ बुतो शाबास क्या कहना तरक्की इसको कहते हैं, जब तक तरासे न थे तब तलक थे पत्थर, जब तरासे गए खुदा बन गए।।" आपके भक्त आपको बार बार प्रणाम करते हुए थकते नहीं। परब्रह्म परमेश्वर जो अलख निरन्जन है, वही साकार सद्गुरु है वही सन्त है। जिसने हृदय से सद्गुरु को आत्म समर्पण कर दिया, जिसका अपना स्वयं का अपनापन नहीं रहा। ऐसा शिष्य धन्य है। उरई के एक वकील ने अपने गुरु का विश्वास नहीं किया तो उनका नाश हो गया। चीरहरण के समय द्रौपदी ने एक हाथ से पल्ला पकड़ रखा था और दूसरा हाथ उठाकर कृष्ण को पुकार रही थी तो कृष्ण जैसी स्थिति में थे, वैसे ही दौड़ पड़े। श्री सद्गुरु समर्थ के परमभक्त श्री बाबूलाल गुप्त का एक मात्र पुत्र ग्वालियर अस्पताल में गम्भीर रूप से बीमार हो गया। डाक्टरों ने बताया कि बुख़ार दिमाग़ में चला गया है और बचने की बहुत कम आशा है। बाबूलाल गुप्त की सारी सम्पत्ति बच्चे के इलाज में समाप्त हो गई। जैसे महावीर रामचन्द्र के अनन्य भक्त हैं। वैसे ही बाबूलाल गुप्त श्री प्रभु के ऐकान्तिक अनुरक्त भक्त हैं। भक्त का कभी नाश नहीं होता। नौकरी के समय को छोड़ कर गुरु सेवा और गुरु को सन्तुष्ट करना ही उनकी एकमात्र साधना थी। वे ग्वालियर से सीधे दतिया श्री महाराज के शरण में आए और बोले-हे स्वर्णवर्ण ! यह दीन-हीन अधम आपका दास कुछ याचना करना चाहता है। आपकी आज्ञा हो तो कहूँ। अन्तर्यामी श्री भगवान् ने कहा- तुम जो कहना चाहते हो वह मुझे मालूम है, तुम्हारा पुत्र बीमार

है, तुम अभी शीघ्र भगवती श्री पीताम्बरा से प्रार्थना करो और किसी पण्डित से दुर्गा सप्तशती का पाठ कराओ। प्रबन्ध कर उसने निवेदन किया- हे प्राणेश्वर ! आपने जैसी आज्ञा दी उसका प्रबन्ध हो गया है। बीमार की हालत बहुत नाज़ुक है, इसलिए मुझे बीमार के पास जाने की आज्ञा दीजिए। एक दो दिन बाद अस्पताल में बाबूलाल गुप्त ने अर्ध निद्रा में देखा कि एक पीले वस्त्र पहने सुन्दर और गौरवर्ण महिला बीमार पुत्र दुर्गाप्रसाद के सिर पर हाथ फेर रही है। तथा कह रही है कि- मैं दतिया से आई हूँ, तुम्हारी माँ हूँ, तुम जल्दी ठीक हो जाओगे। बीमार के पूरे शरीर पर पैर के अँगूठे से लेकर सिर तक दो तीन बार हाथ फेरा और अदृश्य हो गई। उसी दिन से उस लड़के की बीमारी तेज़ी से ठीक होने लगी। अस्पताल से छुट्टी पाकर बाबूलाल गुप्त अश्रुपूर्ण नेत्रों से अपने पुत्र को साथ लिए दतिया श्री प्रभु के चरणों में प्रणाम करने पहुँचे। क्या कहें, वाणी अवरुद्ध है। आपने ही दिया था, आपने ही रक्षा की। माता अपना मंदिर छोड़कर ग्वालियर के अस्पताल के कमरे में आकर बीमार बच्चे को पुचकार रही है, गला अवरुद्ध है कहना चाहते हैं, कह नहीं पा रहे और फूट-फूट कर श्री प्रभु के चरण पकड़ कर रो रहे हैं। हे दाता भगवान् ! हे दया सागर ! अपने भक्तों पर कृपा करने आशुतोष भगवान् दतिया में अवतरित हुए हैं। अपने सेवकों के कष्टों को सहन नहीं कर पाते हैं। कृपा सिन्धु महेश्वर अपनी कृपा की बात सुनकर माता के मंदिर की तरफ़ इशारा करके, श्री प्रभु कहते हैं - "वह करुणामयी है।" परन्तु अब स्पष्ट हो चुका है कि आप में और मंदिर की मूर्ति में कोई भेद नहीं है। जो मूर्ति में है, वही शरीर धारण कर जीवन की हर प्रकार रक्षा कर रहा है। आप लोगों को मालूम ही है कि श्री प्रभु पर एक कृत्या का प्रयोग किया गया था तो माता स्वयं मंदिर के बाहर प्रगट हो गई। इसी तरह आज बाबूलाल गुप्त के बच्चे के लिए भी माता को मंदिर से बाहर आना पड़ा। दतिया आश्रम पर हज़ारों दीन

दुःखी आर्त लोग श्री प्रभु की शरण में आने लगे। धीरे-धीरे उनकी ख्याति से द्वेष करने वाले लोगों की संख्या बढ़ती चली गई। आख़िर साधु के पास में ऐसी क्या वस्तु है। लोगों को बेवकूफ़ बनाने की ऐसी कौन-सी कला है, जो लोग इनका इतना सम्मान करते हैं। और हम लोग बड़े-बड़े महन्त जिनके दास दासियाँ पाँव दबा रहे हैं, गाँजे के दम लगाए आराम और शान शौक़त का जीवन बिता रहे हैं, फिर भी उस श्मशान में रहने वाला जो सिर्फ़ लँगोटी पहने रहता है, न वह किसी स्त्री को पाँव छूने देता है, न वहाँ चिलम गाँजा जैसी मस्त चीज़ों का धुआँ उड़ता है। फिर क्या बात है कि हम बड़े-बड़े सिद्ध और महंतों के पास लोग कम आने लगे। अब फिर उस श्मशान वासी को जादू टोना करके मारा जाय अथवा अपने चोर, डाकू व असाधुओं को वहाँ भेजकर लड़ाई कराई जाए तो शांति मिलेगी। एक बार एक नाटेक़द का कृष्ण वर्ण वाला एक व्यक्ति जो साधु वेष में था, आश्रम में आया। वह श्री स्वामीजी से कहने लगा कि ये तान पूरा किसका है, प्रभु ने कहा नारायण का। फिर उसने कहा यह तख़्त किसका है, स्वामी जी ने कहा नारायण का। इसी प्रकार से उस साधु ने वहाँ रखी अनेक वस्तुओं के विषय में पूछा और सबका उत्तर प्रभु ने नारायण का कहकर ही दिया। तत्पश्चात् उस काले साधु वेषधारी व्यक्ति ने कहा- चलो ऊपर छत पर चलें, तब श्री स्वामीजी उसके साथ ऊपर चले गए। उस समय श्री महाराज जी के पास प्रकाश मोहन जुत्सी भी थे। उनकी आयु मात्र दस-ग्यारह वर्ष थी। वे भी श्री महाराज के साथ ऊपर छत पर चढ़ गए। श्री स्वामीजी उनको अत्यन्त प्यार करते थे। ऊपर छत पर उस कृष्णमय साधु ने पूज्य चरणों से कहा-तू मुझ से कुछ पूछ-प्रभु ने उत्तर दिया हमारे पास पूछने को कुछ नहीं है। तब फिर वह कुछ पूछने के लिए ज़ोर देने लगा। श्री स्वामीजी बोले-यह बालक जो पूछे, वह इसको बता दो। प्रकाश

मोहन ने न जाने क्या-क्या प्रश्न किए और वह साधु उल्टा सीधा बोलता रहा। अन्त में पुनः गुरुदेव

कहा-तू मुझ से कुछ पूछ-प्रभु ने उत्तर दिया हमारे पास पूछने को कुछ
पूछने के लिए ज़ोर देने लगा। श्री स्वामीजी बोले-यह बालक जो पूछे, वह इसको बता दो। प्रकाश

मोहन ने न जाने क्या-क्या प्रश्न किए और वह साधु उल्टा सीधा बोलता रहा। अन्त में पुनः गुरुदेव से कहा-तू पूछ, तू क्यों नहीं पूछता? तू अवश्य पूछ। जब वह साधु आग्रह करने लगा तो प्रभु बोले-जो बताना चाहते हो अपने आप ही बता दीजिए। उस साधु वेषधारी ने पुनः-पुनः श्री स्वामीजी से कुछ पूछने के लिए हठ किया, परन्तु वे प्रत्येक बार यही उत्तर देते रहे कि जो बताना चाहे आप स्वयं ही बता दीजिए। अन्ततोगत्वा उस साधु की वाणी बन्द हो गई और वह कुछ नहीं बता सका तथा वह यह कहकर कि अच्छा तो अब मैं चलता हूँ, चला गया। तब प्रभु बहुत हँसे और प्रकाश मोहन से कहा-जब कोई आदमी जिद करे कि हम उससे कुछ पूछें तो उससे यही कहना चाहिए कि आप अपनी ओर से ही बता दीजिए। हे मंगलमय परमात्मा ! हे दीनबन्धु दीनानाथ ! आपकी शरण में विभिन्न मतिवाले, विभिन्न आवश्यकता वाले विद्वान और अनपढ़, ग़रीब, धनी और मुमुक्षु व्यक्ति आते ही रहते थे। हे करुणाकर अन्तर्यामी ! किसको किस प्रकार से भगवद् मार्ग में लाना है, उसको वैसा ही उपदेश और सीख दान में मिली। जिसने पूर्ण समर्पण कर दिया उसकी लाज आपकी हो गयी। जो विश्वास और श्रद्धा की कठिन परीक्षा में उत्तीर्ण हो गया फलस्वरूप आप स्वयं ही उसे मिल गए। ऐसी अनेक बातें रहस्यमय हैं। क्यों और कैसे, ऐसे और जैसे आदि तर्क कुतर्कों और अनुमानों को छोड़ें तथा अपने आत्म कल्याण के लिए अमृत रूपी कथा का श्रवण करें। हे वन्दनीय ! आपने कभी भेद नहीं किया, आपके सामने पढ़े लिखें, अनपढ़ सब समान थे। विद्याराम धौलपुर अस्पताल का एक चतुर्थ श्रेणी का कर्मचारी कभी-कभी दतिया दर्शन करने आया करता था। झाडू लगाता, कुएँ से पानी खींचकर वाटिका के पेड़ों तथा फूलों को सींचा करता था और भक्तिभाव से आपके दर्शन करता था। एक दिन विद्याराम के भाग्य ने भी करवट ली। हे

कृपासिन्धु ! आप कमण्डलु लिए जंगल जा रहे थे, रास्ते में विद्याराम को माला फेरते देखा। उस पर कृपा करने के लिए आपने कड़ककर पूछा-तुम कौन-सा मंत्र जपते हो? जैसे सिंह को देखकर बन्दर की हालत हो जाती है, ऐसी ही हालत उस ग़रीब और भोले विद्याराम की हो गई। उसने सोचा कि कुछ ग़लती तो नहीं हो गई कहीं झाडू लगाने व पानी भरने का काम भी हाथ से न जाता रहे। लगता है किसी ने उसकी कोई झूठी शिकायत कर दी। वह बेचारा चरणों में गिरकर अति दीनता से डरते हुए कहने लगा-स्वामी-स्वामी-स्वामी ! यह सुनकर अन्तर्यामी उसके भोलेपन पर अति आनन्दित हुए। सन्त बिना परदे के सच बोलने वालों को अपना प्राण ही समझता है। बाद में स्वयं अपने हाथों से लिखकर श्री महाराज ने उसे मंत्र दिया। उनकी कृपा ने एक कम पढ़े गड़रिया जाति के व्यक्ति को एक अच्छे साधक में परवर्तित कर दिया। भाई विद्याराम ! जो खुशियों के आँसू तू बहा रहा है, वह सर्वोपरि हैं, लेकिन जिस ममतामयी माँ ने तुमको अपनी गोद में बैठाकर आँचल से ढक लिया है, उसकी खुशी को क्या कहा जाय। इसी प्रकार हे मूर्तिमान धर्म विग्रह! एक ईसाई नर्स अत्यन्त दुःखी हालत में आपका यशोगान सुनकर आश्रम में आयी। जिस प्रकार मरुस्थल में एक लम्बी यात्रा के कष्टों से दुःखी व्यक्ति को, हरा भरा दृश्य देखने से जो प्रसन्नता होती है, ऐसा ही इस स्त्री को भी अनुभव हुआ। आपकी करुणामयी दृष्टि से कुछ छुपा नहीं रह सका। सन्त का जीवन ही जगत् के कल्याण के लिए होता हैं। उसका जगत् पर जितना उपकार है उतना और किसी पर भी नहीं है। उस नर्स के माता व पिता दोनों का स्वर्गवास हो गया था और उसका विवाह नहीं हुआ था। इस प्रकार संसार में उस बेचारी का कोई नहीं था। हे जगत् के आश्रयदाता ! आपने उसको अभयदान दिया और मंत्र देकर साधना में प्रवृत्त कराया तो उसके हर्ष की सीमा न रही। हे महिमामय ! आपने उसे महिमावती नाम देकर अपने भक्तों

गया था और उसका विवाह नहीं हुआ था। इस प्रकार संसार में उस बेचारी का कोई नहीं था। हे जगत् के आश्रयदाता ! आपने उसको अभयदान दिया और मंत्र देकर साधना में प्रवृत्त कराया

तो उसके हर्ष की सीमा न रही। हे महिमामय ! आपने उसे महिमावती नाम देकर अपने भक्तों में उसको जगह दे दी। सन्त हमें हाथ पकड़कर वैकुण्ठ धाम में पहुँचा देते हैं, यही तो इनकी सबसे बड़ी कीर्ति है। किसी भी धर्म का अनुयायी हो उसके अवगुणों पर दृष्टि न डालकर आप उसे सत्य पथ बताकर सद्‌गुणों से विभूषित कर देते हैं। झाँसी के मुन्ने ख़ाँ बार्बर की अभिलाषा को पूर्ण कर उसे भी कृतार्थ किया। आपके श्री चरण-कमलों की मालिश करने की इच्छा लेकर वह बगिया के बाहर बहुत से भक्तों के बीच खड़ा हुआ सोच रहा था कि मैं ग़रीब किससे कहूँ, जो मेरी तमन्ना आप तक पहुँचा दे। इतने में ही एक बन्दे ने आकर उससे कहा तुम्हें श्री प्रभु अन्दर बुलाते हैं। अन्दर पहुँचते ही श्री महाराज ने सवाल किया-तुम मेरे पैर दबाओगे। बिजली की मशीन से सेंक करोगे। क्या तुम डॉक्टर हो जो मुझे अच्छा करोगे। मुन्ने खाँ के आश्चर्य की सीमा नहीं रही कि वे दिल की बात कैसे जान गए। उसने घबराकर जवाब दिया सरकार! न तो मैं डॉक्टर हूँ और ना ही मैं अच्छा कर सकता हूँ, लेकिन हे परवरदिगार ! आपके पाँवों की मालिश करने से मेरी क़िस्मत को बड़ा नाज़ होगा। इस उत्तर से श्री प्रभु बड़े प्रसन्न हुए और उसे पाँव पर मालिश करने की इजाज़त दे दी। जब वह मालिश कर चुका तो, हे प्रभो ! आप अत्यन्त प्रसन्न हो गए। आपने कहा-तुम्हें भी हमने अपने सेवकों में ले लिया है। तुम्हारे लिए यहाँ के दरवाज़े हमेशा खुले रहेंगे। मुन्ने ख़ाँ नियमित रूप से एक माह सोलह दिन तक महाराज जी के श्री चरणों की मालिश करता रहा। इनको भी श्री प्रभु का कृपा प्रसाद मिला, इसका छोटा पुत्र जो डायबिटीज की बीमारी से गंभीर अवस्था में था स्वस्थ हो गया और कई वर्षों तक जीवित रहा। भक्त तो आपको याद करते हैं, परन्तु आप अपने भक्तों को किस प्रकार याद करते हैं और अनुग्रह करते हैं। हे भूतभावन

महाभैरव श्री महाराज, अपने भक्तगणों की समस्त व्याधियों को समेटकर अपनी ही कुछ लीलाएँ दिखाने के लिए आप अस्वस्थता का आवरण ओढ़कर बीमारी का बहाना लिए हुए अखिल भारतीय आयुर्वेदिक संस्थान दिल्ली में विराजे हुए थे। डॉक्टर और नर्सें आपके उपचार हेतु का बहाना कर दर्शन के लिए बार-बार आते। संत सम्राट का दर्शन हुआ है जन्म-जन्म के मैल-पाप धुलेंगे। जन्म-जन्म की अर्जित पाप रूपी रात कटेगी। एक नया पवित्र सबेरा होगा और हम सब लोग इस प्रकाश को आपकी कृपा से प्राप्त कर अज्ञान रूपी अंधकार से मुक्त होंगे। "दीवानगी ये इश्क़ बड़ी चीज़ है सीमांव, ये उसका करम है जिसे दीवाना बना दे।" इस "श्री स्वामी कथासार" को श्रद्धापूर्वक पढ़ना और सुनना चाहिए। इससे मनुष्य कोविद बनकर समाज में यश अर्जन करता हुआ अपार सम्पत्ति का स्वामी बनता है। इस अध्याय के पाठ और श्रवण मात्र से तीर्थराज पर स्नान का पुण्यफल प्राप्त होता है। श्री स्वामीजी महाराज की जय।

यह पाठ भगवती पीताम्बरा जी को समर्पित है।

।। इति सप्तदश अध्याय समाप्त।।

।। श्री गणेशाय नमः।।

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

अष्टदश अध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे गौ-द्विज हितकारी श्री स्वामी जी ! आप ही महेश्वर हैं और आप ही मायापति श्री विष्णु हैं तो आप ही प्रजापति श्री ब्रह्मा हैं। माया के नष्ट हुए बिना आपका ज्ञान प्राप्त होता ही नहीं और उस माया को नष्ट करने में केवल आपका कृपाकटाक्ष ही समर्थ है। माया अत्यन्त बलवान हैं, इसके चक्कर में पड़कर मोक्ष के प्रयास में रत, अनेक भाग्यवान् जीव आपके दरवाजे पर दस्तक देकर ही लौट आते हैं। अभागों को तो दरवाज़े का ही पता नहीं होता, दस्तक कहाँ से देंगें ? पुनः माया-मोह-ममतारूपी अन्धकार में डूब जाते हैं। हे कुञ्जबिहारी ! इसमें हमारी साधारण बुद्धि काम नहीं करती। जिस प्रकार काँटा चुभ जाने पर हम बलात् स्वयं के मन को बार-बार यह समझाएँ कि काँटा नहीं है, काँटा नहीं है तो भी जैसे ही काँटे को हाथ लग जाता है तो काँटा चुभ ही जाता है-ठीक उसी प्रकार मात्र मन ही माया के पर्दे को हटाने के लिए पर्याप्त नहीं हैं। इसमें सबसे प्रथम और आवश्यक अवयव आपका अनुग्रह ही है। आपकी कृपा हुए बिना कोई बात समझ में नहीं आ सकती। आप ही अपने भक्त की रक्षा करते हैं, उसको हर प्रकार का मार्गदर्शन प्रदान करते हैं। आपकी कृपा के बिना वह जीवन में एक क़दम भी आगे नहीं बढ़ा सकता। जीव को किसी साधन मार्ग पर लगाना भी आपके ही हाथ में है। हे प्रभो ! श्रद्धा और भक्ति

भी जीवमात्र में आपकी कृपा से ही उत्पन्न होती है। प्रेम-भक्ति के द्वारा कर्म सहज हो जाता है। यह प्रेम-भक्ति भी आपकी कृपा से ही प्राप्त होती है। ऐसा अति भाग्यवान् भक्त प्रतिक्षण आनन्द के प्रेम सागर में ही तैरता रहता है। धौलपुर रियासत में राजा के वित्तसचिव, पण्डित कलाधर तिवारी वाराणसी (बनारस) के रहने वाले थे। वे प्रकाण्ड विद्वान और भगवान् वटुक भैरव के उपासक थे। उनके विद्वतापूर्ण लेख गीताप्रेस, गोरखपुर से प्रकाशित होने वाली धार्मिक पत्रिका, "कल्याण" में भी प्रकाशित होते रहते थे। जब श्री स्वामीजी महाराज का धौलपुर में शुभागमन हुआ तो पं.कलाधर तिवारी की अनायास ही भेंट आप से हो गई। जब किसी के पुण्य उदय होते हैं तो सद्‌गुरु उसका कल्याण करने के लिए स्वयं ही दौड़कर उसके पास आ जाते हैं। पण्डित जी विद्वान भी थे, देवता के उपासक भी थे परन्तु उनके पास शंका समाधान करने वाला कोई न था। अपने भेंट समय से ही वे श्री प्रभु से इतने प्रभावित हुए कि श्री चरणों में उन्हें अपना ज्ञान अज्ञान दिखाई देने लगा, अपना पाण्डित्य उन्हें पाण्डित्य की अपार निधि को प्राप्त कर एक बूंद के समान लगने लगा। आपने उनके अन्तर्मन में उनके इष्ट के प्रति प्रेम और भक्ति की ज्योति जगा दी। उन्होने श्री प्रभु को अपना पूज्य स्वीकार कर लिया। अब क्या था, वे अवकाश पाकर जेलर नारायण सिंह के यहाँ प्रभु दर्शनों को पहुँचने लगे। उनके अन्दर इष्ट के प्रति अत्यन्त छटपटाहट उत्पन्न हो गई। पंडित जी दिन भर अपना राज्य का कार्य करते परन्तु ध्यान उनका इष्ट चरणों में ही लगा रहता और कभी-कभी तो छटपटाहट इतनी बढ़ जाती कि वे अपना कार्य करते-करते प्रेम विह्वल होकर घंटों रोते रहते। अवसर मिलते ही वे आप के पास पहुँचते और घंटों तक बैठे-बैठे श्री मुखारविन्द से ज्ञान चर्चा सुनते रहते तथा वार्तालाप किया करते। उनकी कर्तव्य निष्ठा ही उन्हें वहाँ से उठने को विवश कर देती। साक्षीगण कहते हैं कि उनका वार्तालाप शुद्ध बनारस

बैठे-बैठे श्री मुखारविन्द से ज्ञान चर्चा सुनते रहते तथा वार्तालाप किया करते। उनकी कर्तव्य निष्ठा

ही उन्हें वहाँ से उठने को विवश कर देती। साक्षीगण कहते हैं कि उनका वार्तालाप शुद्ध बनारस क्षेत्र में बोली जाने वाली मधुर पुरविया भाषा में हुआ करता था। दोनों ही शुद्ध बनारस की क्षेत्रीय भाषा का प्रयोग करते थे। श्री महाराज वकील साहब को 'उकील साहब', बूढ़े को 'बुढ़हा' और 'जौन सुरतिया न खाई, ऊ पंडित कस कहाई' इत्यादि प्रकार के शब्दों का प्रयोग कर बनारस की क्षेत्रीय भाषा ही बोलते थे। इनसे संकेत मिल सकता है कि कदाचित् काशी विश्वनाथ स्वयं काशी जी के निकटस्थ क्षेत्र में ही किसी धन्यभाग्य माँ की कोख से अवतरित हुए थे ? वस्तुतः देश में बोली जाने वाली समस्त क्षेत्रीय भाषाओं का ज्ञान आप को था किन्तु पुरविया भाषा कुछ ज़्यादा स्पष्ट बोलते थे। पंडित जी के हृदय में प्रेम-भक्ति का ऐसा बिगुल बजाया कि वे प्रेमरस में ऐसे डूबे कि इस लोक से जाने के पश्चात् उन्होने पुनः जगत् में आने का नाम ही नहीं लिया और वे अपने तात्विक स्वरूप को प्राप्त हो गए। एक समय में सुरेशधर ग्वालियर में उप पुलिस कप्तान (डी.सी.ओ.पी.अथवा डी.एस.पी.) के पद पर पदस्थापित था। धर की धर्मपत्नी श्रीमती विजयलक्ष्मीधर भी श्री प्रभु की भक्त थी। वे प्रभु दर्शनों के लिए आते रहते थे। वह ग्वालियर में भयंकर रूप से बीमार हो गया। चिकित्सकों के परामर्श पर उसके मस्तिष्क का एक्स-रे कराने पर ज्ञात हुआ कि उसके मस्तिष्क में गाँठ (ब्रेन ट्यूमर) है और उसकी चीड़-फाड़ (ऑपरेशन) आवश्यक है। उसकी इस दशा में जीवन की कोई आशा नहीं थी। धर की धर्मपत्नी बहुत चिंतित हुई और सोचते-सोचते उसको नींद आ गई, तो उसके स्वप्न में स्वयं आप प्रकट हुए। आपके दोनों हाथों में दो सेव के फल थे। उस रात्रि स्वप्न में श्री स्वामीजी महाराज ने वे दोनों सेव विजयलक्ष्मीधर को देकर कहा कि वह उनको खा ले। श्रीमती धर ने खाने में कुछ झिझक ज़ाहिर की तो प्रभु ने उससे खाने के लिए हठ किया, तब उनमें से एक फल तो विजयलक्ष्मी ने खा लिया।

परन्तु दूसरे फल को खाने के लिए अनिच्छा करने लगी। श्री महाराज ने पुनः उसको फटकारा और दूसरे फल को भी उससे ग्रहण करवा दिया। अगले प्रातः सुरेशधर को ऑपरेशन के लिए अस्पताल लाया गया। मस्तिष्क के विशेष चिकित्सक ने चीड़-फाड़ प्रारंभ करने से पूर्व धर के मस्तिष्क का एक नवीन एक्स-रे और कराया। नवीन एक्स-रे में उस गाँठ का कोई चिन्ह नहीं आया, वह पूर्णतः गायब थी। ट्यूमर न मिलने के कारण सुरेशधर को अस्पताल से छुट्टी दे दी गई। घर पर आने पर सुरेशधर की पत्नी ने सोचा कि श्री महाराज जी को धन्यवाद देने के लिए दतिया जाना चाहिए। वह बस द्वारा ग्वालियर से दतिया आने के लिए चल पड़ी। बस अड्डे पर आकर उसने श्री स्वामी जी के प्रसाद के लिए सेव (फल) ही ख़रीदे क्योंकि वहाँ और कोई अन्य फल नहीं थे। दतिया पहुँच कर उसने श्री प्रभु को प्रणाम किया और वे सेव के फल उन्हें अर्पण किए। जैसे ही श्री स्वाजीजी ने उन फलों को देखा तो चौंकते हुए कहा-अरे ! तू तो सेव ही ले आई। विजयलक्ष्मी प्रभु की बात को समझ गई और अश्रुपूरित नयनों से कृतज्ञता प्रकट करने लगी। उनकी कृपा कब और कैसे होती है, कौन जान सकता है। धौलपुर के प्रभारी चिकित्साधिकारी, प्रकाश मोहन भटनागर अचानक हृदय रोग से पीड़ित हो गए। श्री महाराज जी के एक भक्त विद्याराम इसी अस्पताल में कर्मचारी है, जो अपने साँवरिया श्री महाराज जी के दर्शन कर दतिया से लौटा था। उसने अपने अधिकारी को गंभीर रूप से बीमार पाकर अपने पूजा के झोले से अपने श्याम-सुन्दर श्री महाराज का एक चित्र निकाल कर डॉक्टर की आँखों के सामने दीवार पर टाँग दिया और श्री चरणों के चढ़े हुए फूल उनके सिराहने रख दिए और कहा-आप निरन्तर मेरे मालिक श्री महाराज के दर्शन करते रहिए। मैं वादा करता हूँ, आप जल्द स्वस्थ हो जाएँगे। डॉक्टर साहब

दिया और श्री चरणों के चढ़े हुए ...
श्री महाराज के दर्शन करते रहिए। मैं वादा करता हूँ, आप जल्द स्वस्थ हो जाएँगे। डॉक्टर साहब ने वैसा ही किया और उसी क्षण से स्वस्थ होने लगे और पूर्ण स्वस्थ हो गए। उन्होने दतिया आकर श्री महाराज को प्रणाम किया। बाद में एक दिन आपने विद्याराम से कहा कि - ईश्वर भक्त को बहुत विचारपूर्वक वचन बोलने चाहिए। हे स्वामी ! हे अन्नदाता ! जिस प्रकार आपने त्रिपुरारी रूप में प्रकट होकर मार्कण्डेय की रक्षा की थी उसी प्रकार चतुरबाहु आपने डॉक्टर की रक्षा की। वह डॉक्टर न तो आपका भक्त था न उसने कभी आपके दर्शन किए थे। हे सर्व सुन्दर ! आपके भक्त विद्याराम ने अपने दृढ़ विश्वास पर विश्वास करके उस चिकित्सक को यह विश्वास दिलाया कि ऐसा करने से वह स्वस्थ हो जाएगा। इसीलिए आपने अपने भक्त के वचन को सत्य किया। हम सब सन्त शिरोमणि और भक्त की जय जयकार करें। इस कलयुग में मनुष्य मन्द भाग्य, मन्द-मति एवं उपद्रवपूर्ण होते हैं। सिद्धि की कामना और अर्थोपार्जन के लिए भगवान् की आड़ लेते हैं, हे स्वामी ! जो व्यक्ति अपना अहंकार और सांसारिक आसक्ति छोड़कर निष्कपट भाव से आपकी शरण में आता है, उसे अवश्य ही आप कुशल क्षेम देते हैं। हे लीलामय प्रभु ! अहंकारी और भ्रमित व्यक्तियों को आप ही सत्पथ पर लाकर वास्तविकता का ज्ञान कराते हैं, सर्वात्मा श्री महाराज जी ने एक बार कहा-तुम सब चित्त से कपट को हटा कर अपने जीवन के लिए कर्म को ग्रहण करो एवं ध्यान, स्तुति, सेवा आदि से परमेश्वर को भजो। ऐसा करने पर तुम्हारी कामनाएँ पूर्ण होगी। इन बातों को समझो। ये बातें हँसने की नहीं है। तुम लोग अपने समय को व्यर्थ में व्यय न कर साधना में लगाओ। परमार्थ का मार्ग ही सर्वश्रेष्ठ है। अच्छा ललिताप्रसाद शास्त्री, यदि तुम्हें राह चलते पड़ा हुआ बहुत-सा स्वर्ण मिल जाय तो तुम क्या करोगे ? ललिता जी ने उत्तर दिया-महाराज, घर उठाकर ले जाएँगे। श्री प्रभु ने आगे कहा-ठीक है, लेकिन कितना ? श्री शास्त्री

जी ने उत्तर दिया-जितना अधिक से अधिक उठाकर ला सकेंगे। यह सुनकर श्री प्रभु ने कहा-बुद्धिमानी करोगे। किन्तु इसी प्रकार इस आश्रम में भी जो अपार स्वर्ण पड़ा हुआ है उसमें से तुमने कितना समेट लिया है ? शास्त्री जी इस बात का कुछ भी उत्तर न दे सके। एक दिन कुछ सन्त आश्रम पर आकर कहने लगे-हे स्वामी जी महाराज ! आप ज्ञान का भण्डार होते हुए माला इत्यादि क्यों जपते हैं ? आपको तो निजानन्द में 'शिवोऽहम्' भाव रखना चाहिए। यह बात सुनकर आप मुस्कराकर बोले-हमारा ज्ञान परिपक्व नहीं है, तब महात्मा लोग शिवोऽहम्, शिवोऽहम्। अहम् ब्रह्मास्मि, अहं ब्रह्मास्मि।। कहते हुए अपने ठहरने के कमरे में चले गए। आरती के समय उन महात्माओं में एक का पैर पत्थर से टकरा गया और अँगूठे में चोट लग गई। वे महात्मा जिनको चोट लगी, दर्द के मारे चिल्लाने लगे, फिर प्रभु ने तुरन्त पूछा-महात्मा जी क्या बात है? महात्मा जी ने उत्तर दिया-हे स्वामी जी महाराज ! मेरे पैर के अँगूठे में बड़ी वेदना हो रही है। किसी को भेज कर डॉक्टर बुलाएँ तथा तुरन्त उपचार कराएँ ऐसी वेदना सहन शक्ति के बाहर है। श्री प्रभु ने कहा-महात्मा जी आप तो ब्रह्मास्मि में रहने वाले 'शिवोऽहम् अवस्था को प्राप्त महापुरुष हैं, फिर आपको वेदना कैसी ? ब्रह्म को तो कोई दर्द नहीं होता। महात्मा दर्द से तड़तपा हुआ बोला-प्रभु मेरा इलाज कराओ। मैं मरा जा रहा हूँ। बिना अनुभव किए हमने यह स्वांग रच रखा है। उसके लिए आप हमें क्षमा करें। श्री प्रभु ने कहा-डॉक्टर आ जाएगा, तुम्हारा इलाज भी हो जाएगा। लेकिन तुम विचार करो, बिना अनुभूति हुए निरर्थक बात नहीं करोगे। तुम लोग ब्रह्मास्मि में नहीं अपितु भ्रमास्मि में पड़े हुए हो। इससे कुछ हाथ नहीं आएगा। इस प्रकार ढोंग करने से खुद का जीवन भी बर्बाद होता है और दूसरों को ग़लत शिक्षा मिलती है। उस साधु ने

कहा-आज हम सन्त शिरोमणि के पास आए हैं और हमें शिक्षा मिली है। इसलिए हे प्रभो ! आगे से सच्ची साधना करने का प्रयत्न करेंगे। हमें उपदेश करें। हे स्थितप्रज्ञ अन्तर्यामी ! आपकी दानशीलता, आपकी करुणा, आपकी दया का क्या वर्णन किया जाय। आपके भक्तों की व्यथा आपसे छुपी नहीं रहती। माँगने के पहले ही आप झोली भर देते हैं। उनके बताए अनुसार आपके भक्त झाँसी के रामकृष्ण वर्मा की पुत्रवधु दो पुत्रियों को जन्म दे चुकी थी। घर में उस सहित सभी को पुत्र की चाहत थी। सभी लोग मन ही मन प्रभु से पुत्र प्राप्ति की कामना किया करते थे। एक दिन रामकृष्ण ने तन्द्रावस्था में अनुभव किया कि पीले वस्त्र पहने एक स्त्री ने उनके पास आकर अपनी गोद में से वर्मा की गोद में एक नवजात शिशु को डाल दिया है और उसने कहा यह अलुप्त है। तत्पश्चात् रामकृष्ण ने अपनी धर्मपत्नी से कहा-"अब तुम्हारे यहाँ पोता आने वाला है।" इस पर धर्मपत्नी ने उत्तर दिया-"आप क्या कह रहे हैं, अभी ऐसी कोई बात नहीं है।" इन बातों से लगभग नौ माह पश्चात् ही वर्मा के यहाँ पोते का जन्म हुआ और स्वप्न में ही दिए गए नाम के अनुसार उस शिशु का नाम 'अलुप्त' रखा। हे देवाधिदेव ! भक्तों को लौकिक कामनाएँ नहीं करनी चाहिए, परन्तु भक्तों का स्वभाव अज्ञानी होता है, उनकी डोर तो अपने प्रभु के हाथ में होती है। इसलिए गर्दन हिलाने पर कभी-कभी वह डोर भी हिल जाती है और प्रभु उनके दुःख दर्द को शीघ्र सुन लेते हैं अन्यथा पंक्ति में तो नम्बर आने पर ही सुनवाई होती है। हे प्रभो ! आप ही जानते हैं-किसको किस प्रकार सही राह में लाना है। भूतभावन जगदीश्वर की लीला देखिए। एक दिन दोपहर को कुछ भक्तों को जो जयपुर से आए हुए थे, आदेश दिया कि-जाओ, शिव मंदिर में जाकर बैठो। प्रभु की आज्ञा का पालन करते हुए वे सब भक्त शिव मंदिर में जाकर चुपचाप बैठ गए। उनको समझ में नहीं आया कि प्राणपति श्री प्रभु ने हम लोगों को यहाँ चुपचाप बैठने के लिए क्यों

कहा है। उनमें नेत्र विज्ञान के कुछ अत्यन्त योग्य विशेषज्ञ चिकित्सक भी थे। कुछ ही क्षणों में सभी जयपुर क़ाफ़िले में सम्मिलित भक्तगण यह अनुभव करने लगे कि सम्पूर्ण प्राङ्गण में केशरिया रंग का प्रकाश छा रहा है, धीरे-धीरे वह गहरा रंग पकड़ता जा रहा है और अन्ततोगत्वा वे सभी उसमें डूब गए हैं। उस प्रकाश में उन्हें इतना आनंद मिला कि वे सब अपना आपा भूल गए। कुछ क्षणों पश्चात् ही वह प्रकाश धीरे-धीरे स्वतः ही विलीन हो गया। तभी एक सेवक ने उन भक्तों को प्रभु द्वारा बुलाए जाने की सूचना दी। सभी भक्त उठकर प्रभु के पास पहुँचे। उस समय प्रभु के कमनीय नयनों में से करुणा और दया की किरणें फूटी पड़ रही थी। सभी भक्तों ने प्रभु की भिक्षा के साथ ही प्रसाद स्वरूप भोजन प्राप्त किया और फिर वे प्रभु से आज्ञा प्राप्त कर जयपुर के लिए प्रस्थान कर गए। वैद्य भगतराम भी धौलपुर के ही निवासी हैं और बाल्यकाल से ही श्री स्वामीजी की शरण में हैं जैसा कि पूर्व के अध्यायों में वर्णन है। विनोदवश आप भगतराम से कहते-"भगत जगत् को ठगत" यह सुनकर वह स्वयं और अन्य भक्तगण भी अत्यन्त आनन्दित होते। कुछ ही समय पश्चात् नवरात्र में जयपुर का क़ाफ़िला पुनः दतिया आया। तथा आपकी आज्ञा से डॉक्टर मिश्र, रछपालसिंह, मुरैना से बाबूलाल गुप्त आदि भक्तों के साथ शिव मंदिर में पूजा करने लगे। अर्धरात्रि को जब घना अंधकार था और सन्नाटा छाया हुआ था, इन लोगों ने एक भयंकर सर्प को अपनी तरफ़ आते देखा। भय के कारण डॉ.योगेश और भगतराम मंत्र भूलकर केवल माला को जल्दी-जल्दी खटखटाने लगे ताकि सर्प भाग जाय। भक्तों पर संकट के समय केवल भगवान् ही भागदौड़ करते हैं, इनके मुँह से निकला-हे महाराज ! हे प्रभो ! बचाओ। ऐसा लग रहा है कि साक्षात् काल ही ग्रसने के लिए आ रहा है। हे भव भय भन्जन रक्षा करो-रक्षा करो। अपना मंत्र भूलकर

रक्षा करो-रक्षा करो का मंत्र जपने लगे। उसी क्षण हे मधुसूदन! कालिया मर्दन! कंस निकन्दन! आप वहाँ जाने कहाँ से प्रकट हो गए और सहज ही पूछा कि क्या है ? भगतराम बोले-हे प्रभो ! बड़ा भारी साँप है। हे नटवर ! आपने कहा-हमें तो यहाँ ३५ वर्ष हो गए हैं, कभी कोई साँप नहीं देखा बताओ साँप कहाँ है ? देखने पर न जाने साँप कहाँ गायब हो गया था। फिर कुछ देर वहीं बैठकर आश्वस्त होकर बगिया में चले गए। सभी शास्त्र पुकार-पुकार कर कहते हैं कि आप अपने भक्तों को कभी असहाय नहीं होने देते। हे विश्वकारणरूप प्रभु ! मेरे स्वामी ! सदा सदा ही अनुग्रह बनाए रखना। सच्चे दिल से पुकारो, सत्य ही सन्त है और सन्त ही सत्य है। हे जगत् कल्याण कौतुकी ! आपके भक्त महेश तिवारी की पत्नी ने ऑपरेशन के बाद एक लड़की को जन्म दिया, उसी दिन उसके पेट में पीड़ा हुई तो नर्स ने एक सुई लगा दी। सुई लगाते ही तिवारी की पत्नी मूर्च्छित हो गयी। उसकी नाड़ी की गति अवरूद्ध हो गयी और हृदय की गति भी झटके लेने लगी और स्थिति बड़ी नाजुक हो गयी। परिवारवालों ने रोना-पीटना शुरू कर दिया। तिवारी वहीं बैठकर करूण स्वर में आपको सहायता के लिए पुकारने लगा। अचानक उसको लगा कि कोई कह रहा है, चिन्ता मत करो, रक्षा हो रही है, सब ठीक हो जाएगा और महेश तिवारी का ध्यान टूट गया। तब तक डाक्टर ने मामले पर नियन्त्रण कर लिया था और श्रीमती तिवारी पूर्ण स्वस्थ्य होकर घर आ गई। सच्चे हृदय से की गई पुकार में सम्पूर्ण बल समाहित रहता है। यह संसार एक बड़ा भारी युद्ध क्षेत्र है, इसमें सदा से ही सत् असत् प्रवृत्ति वालों का युद्ध छिड़ा हुआ है। दैवी आसुरी संपदा वाले देव असुर के नाम से लड़ते आ रहे हैं। यह युद्ध आध्यात्मिक एवं भौतिक दोनों प्रकार का होता है। जिनमें श्रद्धा विश्वास नहीं है, उनका चित्त सदैव घूमता रहता है। आज किसी के पास तो कल उसी के विपरीत करने लगे। किसी भी विद्वान सन्त की परीक्षा करना कि इस

बात को जानते हैं या नहीं। आज किसी की पूजा तो कल कुछ दूसरा ही आचरण इत्यादि बातें ही जिसका स्वभाव है वे वास्तविक शान्ति कभी नहीं प्राप्त कर सकते। गीता में ऐसे मनुष्यों के लिए कहा गया है-जो अज्ञ, श्रद्धा रहित, संशय चित्त वाले हैं उनका विनाश होता है। किसी को समर्थ सदगुरू की कृपा प्राप्त हो जाए तो उसके उद्धार में कोई संशय नहीं होता। श्री महाराज जी का एक भक्त झाँसी निवासी सत्यदेव वर्मा, एक दिन दतिया आया और उसने श्री महाराज जी से प्रार्थना की, हे वनमाली ! आपकी प्रेरणा से हमने बद्रीनाथ, केदारनाथ, गंगोत्री, जमनोत्री के दर्शन की बात घर में तय की है आज्ञा लेने आया हूँ, श्री महाराज जी हँसकर बोले अवश्य जाओ घूम आओ। आज्ञा शिरोधार्य कर वर्मा यात्रा को चल दिया। कालान्तर में जब वर्मा लौटकर आया तो वह प्रणाम करने दतिया गया। श्री महाराज भक्तगणों से घिरे बैठे थे वर्मा ने प्रणाम किया, श्री महाराज के पूछने पर यात्रा कैसी रही, सत्यदेव फूट-फूट कर रोने लगा हे ज्ञानदाता परमहंस ! तीर्थयात्रा से मुझे बड़ा लाभ हुआ मुझे मालूम हो गया कि मैं मणि तो दतिया छोड़ आया हूँ और काँच की गोली ढूँढने निकला था। अब मेरे भ्रम का नाश हो गया है। मैं समझ गया हूँ आप ही अविनाशी परिपूर्ण श्री सद्गुरूनाथ हैं। श्री महाराज के चरणसेवा में रत भोलानाथ ने वर्मा से विनम्रतापूर्वक कहा- आप अपनी यात्रा के अनुभव विस्तार पूर्वक बताएँ, श्री महाराज की आज्ञा लेकर वर्मा बोले कि इस यात्रा में किसी सन्त के दर्शन हो जाए ऐसी साध मन में थी। गंगोत्री पहुँचकर उसके आन्तरिक प्रांगण में किसी योगी की तलाश में भटक रहा था। वहाँ पर दो साधुओं से भेंट हुई उनके पूछने पर मैंने निवेदन किया कि मैं झाँसी से आया हूँ और किसी योगी सन्त के दर्शन करना चाहता हूँ। साधुओं ने कहा-यहाँ भटकने से कोई लाभ नहीं यहाँ पर तो व्यवसायी

लोग हैं, और साधु हँसकर बोले- आपने दतिया का नाम सुना है वहाँ शिव अवतार परमयोगीमहाराज विराजते हैं, उनके दर्शन कीजिए, हम लोगों ने उनकी चरणरज प्राप्त की थी जो कुछ उन्होंने बताया है, उसी का अभ्यास करने के लिए यहाँ रहते हैं। कहते-कहते वर्मा के नेत्र पुनःअश्रुमण्डित हो गए, यह देखकर महाराज श्री उनको ढाढ़स देते हुए बोले तीर्थयात्रा कभी खाली नहीं जाती। यह लीला तो पुरूषोत्तम की माया है। अच्छा हुआ तुम तीर्थो में अपने भ्रम को छोड़ आए। भ्रम तो महाभारत युद्ध में साक्षात् कृष्ण के होने के बावज़ूद अर्जुन को भी हो गया था। इस पर एक सेवक ने कहा कि महाराज जी हम समझे नहीं, अर्जुन ने तो युद्ध किया था उसको भ्रम कैसे हुआ, महाराज जी ने विनोदपूर्वक कहा-गीतोपदेश सुनकर भी अर्जुन वहीं खड़ा रहा तो कृष्ण ने अर्जुन से कहा तुमने विराट दर्शन कर लिए हैं, सारथी के रूप मैं स्वयं बैठा हूँ फिर रथ हाँकने के लिए क्यों नहीं कहते? अर्जुन बोले शकुनों की बाट जोह रहा हूँ। जब भरे हुए घड़े लिये स्त्रियाँ निकल आएँ, हिरन छोड़ दिए जाएँ तो रथ को आगे बढ़ाना। रथ पर स्वयं भगवान् के बैठे रहने पर और उन्हीं के द्वारा रथ चलाने को कहने पर भी अर्जुन अच्छे शकुन का इन्तिज़ार करने लगा। यह भ्रम नहीं तो और क्या ? वर्मा को यह सब सुनकर बड़ी शान्ति मिली। जो हेय विषयों को परमार्थ समझता है वह अत्यन्त मूर्ख है। कृपण होने के कारण वह अपने कल्याण को समझ ही नहीं पाता। ऐसे व्यक्ति को जो सही मार्ग बताता है वह भी मूढ़ है। उत्तम चिकित्सक कभी माँगने पर भी रोगी को कुपथ्य नहीं देता है। अन्धा व्यक्ति जब कुमार्ग पर चलने लगता है तो दयालु सज्जन उसे सत् पथ पर ले आते हैं। परमार्थ मार्ग में ज्ञानी सन्त,महात्मा, सच्चे साधक को सही पथ का मार्गदर्शन करते हैं। जिससे साधक का मानवीय जीवन धन्य हो जाता है। दतिया नगर का यह सौभाग्य है कि स्वयं सोमनाथ यहाँ विराज रहे हैं। हे अज्ञान अन्धकार विनाशक ज्ञान राशि महाराज ! कितने

ही नास्तिकों को अपनी ईश्वरीय शक्ति से आस्तिक बनाया और ईश्वर की राह पर चलाया। प्रो. मदनगोपाल नागपुर कॉलेज में दर्शन शास्त्र के प्रोफेसर थे। उनको सच्चे गुरु की तलाश थी। जैसे भक्त कबीर, भक्त तुलसीदास, गुरु की तलाश में भटकते रहे, जैसे चातक स्वाती की बूँद के लिए तड़पता है, ऐसी हालत प्रो. मदनगोपाल की हो गई। उन्होंने भारत के समस्त सन्तों को देखा लेकिन कहीं पर भी शांति नहीं मिली। अन्त में वे रमण महर्षि के सम्पर्क में आए। एक बार जब वे इंगलैण्ड गए तभी पीछे से महर्षि रमण ने महा समाधि ले ली। हे अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड नायक ! हे लीलाधारी ! आपकी लीला कुछ ऐसी हुई- प्रो.मदनगोपाल भारत आकर महर्षि की समाधि पर रोने लगे, पूछने लगे-अब हमारा क्या होगा। इससे तो पहले ही अच्छे थे, अब तो तुम्हारे विरह में और भी ज़्यादा तकलीफ़ हो गयी है। ज़िन्दगी खोखली हो गयी है। अब क्या होगा? उसी रात्रि में स्वप्न में महर्षि प्रकट हुए और कहा-दतिया जाओ। वहाँ सर्मथ सद्‌गुरु रहते हैं, उन्होंने लोक कल्याण के लिए अवतार धारण किया है, वहाँ तुम्हारा कल्याण होगा। गुरु आज्ञा जानकर पूछताछ करके दतिया आपकी शरण में आए। अब श्री महाराज जी ने एक लीला की- दूसरे दिन जब मदनगोपाल महाराज जी के दर्शनों को आश्रम आए तो दूर से ही प्रभु ने कहा-आइए, रमण महर्षि ! वे प्रणाम करके बैठ गए। उनको विश्वास हो गया कि सच्चे सन्त के दरबार में वे पहुँच गए हैं। वे तार्किक थे। आपको कुछ शास्त्र का ज्ञान भी है या नहीं यह सोचकर उन्होंने पूछा-हे महान सन्त स्वामी ! मन्त्र क्या होता है। क्या इसमें भी शक्ति होती है ? श्री भगवान् ने उत्तर दिया कि-तुमको सच्चे गुरु ने यहाँ भेजा है, इसलिए मैं दोनों ही जवाब तुम्हें बता रहा हूँ, ध्यान से सुनो ! आपने बड़े तार्किक ढंग से समझाया -स्थूल से सूक्ष्म अधिक शक्ति सम्पन्न होता है। अणु,

परमाणु में सूक्ष्मता के कारण अकूत शक्ति है। इससे भी सूक्ष्म शब्द है जिसका अस्तित्व है किन्तु यह दृष्टि की पकड़ से बाहर है। शब्द शक्ति परमाणु शक्ति से बहुत आगे है। इसे तो अनुभव करना चाहिए। आपने इस प्रकार समझाकर उन्हें पहले विष्णु का मन्त्र दिया। उसके जप से चमत्कार दिखाई पड़ा। आपके चरणकमलों में ही रहकर उन्होंने सौंदर्य लहरी, ललिता सहस्त्रनाम पढ़ा और षोड़शी का जप किया। हे श्री सद्गुरु समर्थ ! आपने उसको अपनी अलौकिक लीला भी दिखाई। आपके भगवत् स्वरूप को देखकर तो वे अनन्य भक्त हो गए और अन्ततोगत्वा सिद्ध होकर चले गये। श्री विष्णु के स्मरण मात्र से सब पापों से मानव मुक्त हो जाता है। तपोदान, जप आदि के द्वारा पाप विनष्ट होता है, किन्तु हृदय शुद्ध नहीं होता है। सूक्ष्मरूप में पाप संस्कार रह जाता है। वासनाक्षय से हृदय की शुद्धि होती है और वासना-क्षय महापुरुष के दर्शन से होता है। हे माधव हरि ! प्रो. मदनगोपाल आपकी शरण में आकर, तीनों चीज़ें प्राप्त कर धन्य हो गए। सन्त की महिमा अपार और अनन्त है। "बनाते है वह ज़ब अपना गिरफ़्तार किसी को, कर देते हैं, भागने की हर राहें मुफ़िर बन्द।।" इस अध्याय के पाठ करने और श्रद्धापूर्वक श्रवण करने से अनन्त सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। ''श्री स्वामी कथासार'' का यह अध्याय गीता के अठारहवें अध्याय की भाँति ही फल देने वाला है। श्री स्वामीजी महाराज की जय।

यह अध्याय श्री पीताम्बरा जी को अर्पण है।

।। इति अष्टादश अध्याय समाप्त ।।

।।श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथा सार

एकोनविंश अध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे स्वामी जी महाराज ! आप ही केशव हैं, आप ही गणपति हैं, और आप ही इस सृष्टि के आधार हैं। किसी कार्य को प्रारम्भ करने से पहले आपका ही स्मरण किया जाता है। आप ही की कृपा से जीवन सफल बनता है और मार्ग में आने वाली सम्पूर्ण विपत्तियाँ और कठिनाइयाँ दूर होकर मार्ग सुगम बन जाता है। हे स्वामी ! हम तो तेरे कपूत हैं परन्तु तू हमारा सदैव क्षमा करने वाला पिता भी है और देखभाल तथा सम्भाल करने वाली माँ भी है। हे तपोनिधि तुम्हारी ही दया से बहरा सुनने, मूक बोलने, अन्धा देखने और लँगड़ा दौड़ने लगता है। तू ही ममता और तू ही ज्ञान की साक्षात् मूर्ति है। जिन परिस्थितियों में अपने भी पराये हो जाते हैं, मित्र कतराने लगते हैं, कहीं से भी सहायता की आशा नहीं रहती। विश्व विमोहन श्री प्रभु ! आपके समान कोई दूसरा शरणागतों को पालने वाला स्वामी नहीं है। हे पूर्ण निष्काम ! श्री पूर्ण प्रतापजी के ऐसे कौन से पुण्य उदय हुए होंगे कि आपने धौलपुर में उनके छोटे से मकान के सामने के चौक की एक झोपड़ी में आनन्दपूर्वक कई वर्ष निवास किया। दतिया पधारने पर भी आपकी करूणामयी निगाहें, अविरल प्रेम, पूर्ण प्रताप जी के परिवार पर वैसा ही रहा। प्रतापजी के पुत्र''लालजी'' गुर्दे के रोग से पीड़ित हो गए और आगरा जाकर डाक्टरों से उपचार कराया। दैव की गति को कौन जान सकता है। सब इलाज व्यर्थ हो गए। डाक्टरों ने परामर्श दिया कि अखिल भारतीय आयुर्वेद संस्थान, दिल्ली जाकर शल्य चिकित्सा (आपरेशन) कराकर देखो। एक प्रतिशत

पुत्र ''लालजी'' गुर्दे के रोग से पीड़ित हो गए और आगरा जाकर डाक्टरों से ...

की गति को कौन जान सकता है। सब इलाज व्यर्थ हो गए। डाक्टरों ने परामर्श दिया कि अखिल भारतीय आयुर्वेद संस्थान, दिल्ली जाकर शल्य चिकित्सा (आपरेशन) कराकर देखो। एक प्रतिशत लाभ की आशा है और जान का ख़तरा है। यह सुनकर सारा परिवार अत्यन्त दुःखी हो गया और निराश होकर लालजी को धौलपुर वापस लाया गया। हे गर्वहरण ! गुरुपूर्णिमा के पावन पर्व पर जब कुछ लोग धौलपुर से आपके दर्शनों के लिए आए तो आपने स्वयं ही लालजी के विषय में पूछा- लोगों ने सब हाल-चाल बतलाया।आपकी आज्ञा हुई उसे यहाँ ले आओ और अपने पास बुलाने के लिए दो व्यक्ति भेजे। आज पतितपावन को भागीरथी अवतरण करना था। हे महात्मारूप ! यह तो आपकी ही महिमा है।लालजी भक्त को लाया गया। श्री प्रभु ! आपने पूछा- कब से बीमार हो। लालजी ने उत्तर दिया-गुरुपूर्णिमा से। आपने कहा- मुझसे हर प्रकार की बातें बताते हैं और लाभ उठाते हैं। क्या तुम अपनी इतनी सख़्त बीमारी भी नहीं बता सकते थे ? श्री लालजी ने विनम्र शब्दों में सिर झुकाकर उत्तर दिया-हे अव्यय ! यह शरीर आपकी चरण-धूल में ही गिर पड़ कर बड़ा हुआ है और हर साँस आपकी कृपा से आती जाती है। इसलिए हे प्रभो ! यह बात आपसे कहने का साहस नहीं हुआ। मैंने सोचा कि मेरे अपने पापों के फलस्वरूप यह प्रारब्ध मुझे मिला है। इसलिए इसे भोगना चाहिए। इस पर श्री प्रभु कुछ नाराज़ होकर बोले- तू जानता है कि प्रारब्ध कितने प्रकार का होता है ? लालजी ने कहा-नहीं महाराज ! हे प्रभो ! तब आपने बताया-आठ प्रकार का होता है। पाँच प्रकार का मिटाया जा सकता है। तीन प्रकार का अवश्य भोगना पड़ता है। श्री ओमनारायण शास्त्री को दुर्गापाठ का आदेश हुआ। जिस दिन से पाठ शुरू हुआ लालजी स्वस्थ होने लगे और पाठ पूरा होते-होते पूर्ण स्वस्थ हो गए। ठीक ही कहा है-''बाल न बाँका हो सके जो जग बैरी होय''। हे आजानुबाहु ! हे कैलाशाधिपति ! आपकी

जय-जयकार है। आपकी दया रूपी समुद्र की लहरों की गणना कौन कर सकता है। हे पूर्ण चन्द्र ! आपने कहा-स्त्री जननी है। इसे सदैव मातृरूप में देखा करो। वह धर्म का पालन करती है। इन्हीं के कारण हिन्दू धर्म ज़िन्दा है। अस्तु, स्त्रियों पर विशेषकर कन्याओं पर आपकी कृपा बरसती ही रहती है। रस्तोगी परिवार की लक्ष्मीबाई को अपनी बेटी की शादी की चिंता रहने लगी। एक जगह सम्बन्ध तय हुआ, परन्तु वर पक्ष ने दहेज़ में बहुत पैसा माँगा, जो इनकी आर्थिक दशा के बाहर था। वे पति-पत्नि, पावन पुनीत चरणों में दतिया आ गए। टीका होने के एक माह पूर्व ही स्वयं हे भूतभावन साक्षात् शिव, आपने वह टीका मंजूर कर, पति-पत्नि को तसल्ली दी। हे प्रभो ! आपके नाम के प्रभाव से बन्दरों की सेना पत्थरों का पुल बनाकर समुद्र पार कर गई थी। जहाँ जिसका प्रेम और विश्वास है वहीं उसका नाम पूरा हुआ है। वर पक्ष ने अपनी माँग वापस ले ली। धूम-धाम से विवाह हुआ। उसके पश्चात् दम्पति ने बड़े दीन वचनों में नतमस्तक होकर आभार प्रकट किया। हे दीनबन्धु ! आपने मेरी गृहस्थी की लाज रख ली। हे देवाधिदेव ! आपने मुस्कराते हुए कहा-तुम अपनी छोटी-सी गृहस्थी के लिए इतने परेशान रहते हो हमारी गृहस्थी तो देखो कितनी बड़ी है। हे स्वामी ! आपको किस नाम से सम्बोधित करें, आपके तो अनन्त नाम हैं, मनकामेश्वर भी आप ही हैं। श्रुतियाँ जिस ब्रह्म की कामना करने का वर्णन करती हैं, वह आप ही कामेश्वर हैं। हे सच्चे सन्त, अपने भक्तों की सभी कामनाएँ पूरी करते हैं। इन्हीं रस्तोगी का छोटा पुत्र गठिया रोग का शिकार बन गया, सो प्रभु ने किस प्रकार रक्षा की, छोटा बेटा प्रकाशमोहन चलने-फिरने में भी असमर्थ हो गया। डाक्टरों का इलाज चला तो हालत और अधिक बिगड़ गई। इसलिए उसे दिल्ली ले जाया गया। रस्तोगी ने पुत्र की गम्भीर स्थिति देखकर दिल्ली में ही आपसे

रक्षा की पुकार की। धर्म, ईश्वर तथा महात्मा लोग पकड़ना जानते हैं, छोड़ना नहीं। हम ही उन्हें

चलने-फिरने में भी असमर्थ हो गया। डॉक्टरों की इलाज ...
इसलिए उसे दिल्ली ले जाया गया। रस्तोगी ने पुत्र की गम्भीर स्थिति देखकर दिल्ली में ही आपसे

रक्षा की पुकार की। धर्म, ईश्वर तथा महात्मा लोग पकड़ना जानते हैं, छोड़ना नहीं। हम ही उन्हें छोड़ दें तो बात दूसरी है। हे ग़रीब नवाज़ ! आपने वहाँ से उनकी पुकार सुन ली। प्रकाशमोहन को बड़े-बड़े डाक्टरों ने देखकर केवल इन्जेक्शन बता दिया, वह भी तीन हफ़्ते में सिर्फ़ एकबार, बच्चा स्वस्थ हो गया। हे त्र्यम्बकेश्वर। मृतकों को जीवन-दान, बीमारों को स्वास्थ्य दान और ग़रीबों को धन आप ही देते हैं। हे जगन्नाथ। आपकी कृपा से एक अनुष्ठान में धर्म भीरू लक्ष्मी को भगवान् भैरव ने बटुक रूप में दर्शन दिए। यह आपको निवेदन किया गया। आपके निर्देशानुसार उसी दिन भैरव भगवान् को भोग लगाया गया। अनुष्ठान पूर्ण होते-होते लक्ष्मी देवी को साक्षात् भूतभावन शंकर एवं गिरिजा के स्वरूपं में आपके दर्शन भी आपकी कृपा से हुए। उनका धर्म के मार्ग पर चलने का विश्वास दृढ़ हो गया और आपने इस बहाने कल्याण का पथ दर्शाया। अनुष्ठान द्वारा पूर्वजों की परम्पराओं को क़ायम रखना, ब्राह्मण एवं शास्त्र का पुनः स्थापन कर उनको गौरव दिलाना और हे निरंजन ! इस आड़ में अपनी शक्ति द्वारा भक्त की रक्षा करना आपको ही शोभा देता है। हे त्रिपुरारी ! आप ही तो वह एक मात्र तत्त्व हैं जो वेदों के नेति-नेति पुकारने पर भी भक्तों की पुकार सुनने को अवतरित हुए हैं। धौलपुर आवास काल में ठाकुर नारायणसिंह द्वारा बनवाई कुटिया में आप राज राजेश्वर ! युवावस्था में ही वृद्ध शिष्यों से घिरे हुए शास्त्र वचनों का उपदेश देकर, उन्हें कृतार्थ करते हुए साक्षात् दक्षिणामूर्ति दिखाई पड़ते थे। एक वृद्ध वैद्य जी जो सिर पर पगड़ी बाँधते थे, वे भी प्रतिदिन आपके चन्द्रमुखारविन्द से बरतसी हुई अमृत धारा के पान का आनन्द लाभ करते थे। हे वामदेव ! आपकी उन पर महती कृपा हुई। फलस्वरूप उनका पौत्र श्री भगतराम आपकी कृपा का पात्र बना। जो आपके मुखारविन्द से "भगत

जगत को ठगत" सुनकर बहुत आनन्दित होता। भगत जी के पिता ख़ूनी बवासीर से पीड़ित थे। डॉक्टरों के ऑपरेशन के बाद भी ठीक नहीं हुए और आख़री साँस चलने लगी। सब तरफ़ से हताश एवं निराश भगतराम ने हे गजेन्द्र रक्षक ! आपको स्मरण किया, उसकी करुण पुकार पर आपकी आज्ञा से उनके पिता को दतिया लाया गया। हे प्रभु गोविन्द! आपने तो इस बार यही कहा-डॉक्टरों को दिखाओ और अपने हाथ से प्रसाद दिया। उसी क्षण से वैद्य स्वास्थ्य लाभ करने लगे। दर्द ख़ून आना बन्द हो गया, भूख लगी और नींद भी ख़ूब आयी। भगतराम जो श्री प्रभु की सेवा में थे, देखा कि महाराज के वस्त्रों पर ख़ून के धब्बे हैं। वह बहुत परेशान हुआ और महाराज जी से बोला-हे प्रभो ! आज आपके वस्त्रों पर रक्तवर्ण के निशान दिखाई दे रहे थे। आप आज्ञा दें तो औषधि ले आऊँ। श्री प्रभु ने कहा-नहीं, जाओ अपना काम करो। फिर बोले-"अर्द्ध रोग हरे निद्रा, पूर्ण रोग हरे क्षुधा"। भगतराम के पिताश्री ने प्रभु के नज़दीक फलों का प्रसाद रखकर हाथ जोड़कर कहा-हे महाप्राण ! आपने प्राण बचा दिए, मैं कई दिनों से बड़े कष्ट में था। आपने स्वयं उसकी बीमारी अपने शरीर पर ले ली और कभी इस बात को ज़ाहिर भी नहीं होने दिया। इस प्रकार आपके पास धौलपुर में जो बूढ़ा वैद्य उपदेश श्रवण करने आता था, जो पगड़ी बाँधता था, आपने उस पर ही नहीं उसके पुत्र, पौत्र एवं प्रपौत्रों पर भी पूरी कृपा की है। वैद्य भगतराम कृतार्थ होकर आनन्द से दिन काटने लगा। उसके लड़कियाँ तो थी परन्तु कोई पुत्र नहीं था। चींटी के मन की भी जाननहार भगवन् आप से उसकी यह व्यथा छुपी न थी, लेकिन आपने कभी इसको ज़ाहिर नहीं किया और उसे भजन करने का आदेश देकर कृपा करते रहे। समयानुसार प्रार्थना सुनी गई और पुत्र प्रदान किया। भक्त के चित्त को दृढ़ करने के लिए हे स्वामी ! आप शाक्तों को शक्ति, शैवों को शिव,

किया। भक्त के चित्त को दृढ़ करने के लिए हे स्वामी ! आप शाक्तों को शक्ति, शैवों को शिव,

गाणपत्यों को गणपति, बनकर दर्शन देते हैं। ये सब आपके ही स्वरूप हैं। जिस समय सरस्वती अनुष्ठान चल रहा था तब लक्ष्मीदेवी ने स्वप्न में देखा-आप अपने दिव्यदेह में मूढ़े पर आसीन हैं, आपके चारों तरफ़ नवदुर्गा सजी-धजी खड़ी हैं और आप शाक्त दर्शन का उपदेश कर रहे हैं। लक्ष्मी देवी वहाँ पहुँच गई और दर्शन कर प्रणाम किया तो आपने कहा-तू यहाँ भी आ गई। लक्ष्मीदेवी बोली-महाराज ! आपकी कृपा है। श्री प्रभु ने मुस्कराते हुए कहा-"तू चतुरा है"। सुनते ही उसकी आँखें खुल गई। जब वह प्रातःकाल आपको प्रणाम करने हेतु पहुँची उस समय बहुत से लोग वहाँ बैठे थे। आपने सबके सामने कहा-"यह चतुरा है।" हे प्रभो ! आपकी महान कृपा ने लक्ष्मीदेवी को स्वप्न में ही एकावन शक्तिपीठों के दर्शन कराए। सच्चे सन्त की कृपा से घर बैठे ही अपने अन्तर में ही सभी देवी देवताओं का दर्शन और आत्मदर्शन हो जाता है। दतिया के अनमोल रतन की जिस पर कृपा हो गयी उसी ने आत्म रत्न पाया। एक दिन शनिवार की रात्रि साधकावास के जिस कमरे में रामकृष्ण वर्मा सोते थे, मध्य रात्रि में जप करते समय भयानक आकृति वाली दो स्त्रियाँ उनके सामने आकर खड़ी हो गई एक स्त्री छोटे क़द की थी। दूसरी, ऊँची जिसका सर छत से टकरा रहा था। बड़ी-छोटी अपनी-अपनी जीभों को लम्बाई में बाहर निकालकर वर्मा जी के नाभी के नीचे से लेकर गले तक पेट पर फिराने लगी। साधक वर्मा जी को थोड़ा सा भय लगने लगा, उन्होने शीघ्र ही हे ध्यानगम्य ! आपका स्मरण, ध्यान किया तो वे गायब हो गयी। तदुपरान्त उन्होने अपना जप शुरू कर दिया। दो चार मिनट बाद फिर वह स्त्रियाँ उनके सामने आ गई और अपनी जीभ जिनकी लम्बाई दो-दो फुट की थी, वर्मा जी की ओर बढ़ाने लगी। अब वर्मा जी अधिक भयभीत हो गए, उठे और उठकर निवृत्त हुए, शौच भी काफी मात्रा में हुआ, निवृत्त होकर फिर भजन में बैठ गए। १५-२० मिनट के बाद वही स्त्रियाँ उनके सामने फिर खड़ी हो गयी

और बड़ा भयानक रूप धारण कर लिया। चार पाँच मिनट साहस रहा। बाद में फिर माला छोड़नी पड़ी फिर उन्होने स्त्रियों से पूछा कि तुम मेरे पेट पर जीभ बार-बार फिराती हों, देखें तो तुम लोगों की जीभ कितनी लम्बी है। यह सुनकर उन दोनों स्त्रियों ने राजगढ़ की ओर मुँह करके जीभ बढ़ानी शुरू की तो जीभ बढ़ती ही चली गई। यह देखकर श्री वर्मा जी बहुत ही भयभीत हो गए और फिर पुनः शौच गए, इस बार शौच की मात्रा पहले की अपेक्षा दुगुनी थी। निवृत्त होकर उन्होने फिर माला उठाई और उनकी हिम्मत अब पस्त हो चुकी थी। अतः राज राजेश्वर श्री महाराज के चरणों में बैठना उचित समझ कर मंदिर में पहुँचे और अपने आसन पर बैठ गए। तभी श्री प्रभु ने कहा-क्यों क्या बात है ? महोदय ! ऐसा लगता है काफ़ी डर गए हो अब यही बैठकर भजन करो, यहाँ डरने की कोई बात नहीं है। इस घटना के विषय में न तो श्री स्वामीजी ने आगे कुछ पूछा ही और न वकील वर्मा ही उस समय कुछ समझ सके। इस घटना द्वारा कुण्डलिनी जागरण में नाड़ी शोधन की आवश्यकता बताई गई है। बाद में यह स्पष्ट हुआ कि आप की महान् कृपा के तहत योगिनियों द्वारा नाड़ी शोधन किया गया था। नाड़ी शोधन क्रिया कई प्रकार से हो सकती हैं। किन्तु यह आपकी कृपा का अति उत्तम फल है। इसमें शिष्य को स्वयं कोई क्रिया नहीं करनी पड़ी। एक बार अपने स्वप्न में आपके शिष्य डॉ.योगेश मिश्रा ने देखा कि हे अकालपुरुष ! करुणानिधान ! आप बगीचे में अपने छत्र के नीचे मूढ़े पर विराजमान हैं। प्रातःकाल की बेला है, डॉक्टर दर्शन करने की लालसा लेकर आए हैं। दरवाज़े के सामने खडे हैं और अवाक् होकर देख रहे हैं। हज़ारों हज़ार छोटी-छोटी चिड़ियाँ चुग्गा चुग रही हैं, चहचहा रही हैं। हे केशव ! आप उन्हें गौर से देख रहे हैं और चुग्गा चुगा रहे है जैसे मुर्गी पालन केन्द्र पर छोटे-छोटे बच्चे चुगते रहते

गौर से देख रहे हैं और धुनी धुनी ...

हैं। उस समय का यह मनोहारी दृश्य कभी भूलने में नहीं आता। हे प्रभो ! आप ही इस संसार में अनन्त प्राणियों के पालनहार हैं, हे कलियुग उद्धारक ! आप अपने भक्त की ज़रा सी तक़लीफ़ भी बरदाश्त नहीं कर सकते। ज़रा याद किया नहीं कि वहीं आकर तत्काल उसका कष्ट दूर कर दिया। श्री हीरालाल कार्यवश अजमेर गए थे, भारी वर्षा और ख़्वाजा साहब के मेले के कारण बसें बन्द और रेल गाड़ी भी नहीं चल रही थी। कई दिन बाद रेल चलने को हुई। बीस हज़ार से अधिक यात्रियों को देखकर आशा ही नहीं थी कि पैर रख सकेंगे। गाड़ी आती देखकर और भी चिन्ता होने लगी। सहसा हे पूज्यश्री ! आपका स्मरण आया और रास्ते में कठिनाई न हो इसके लिए वह मंत्र जो आपने दिया था उसकी याद आयी और उसी स्थिति में मंत्र जप करने लगे। देखिए आपकी लीला-गाड़ी आकर खड़ी हुई कि सामने की खिड़की खुली और एक आदमी झटपट उतर गया और प्रेरणा पाकर उसी खिड़की में से वैद्य जी अन्दर चले गए, उसकी सीट पर ही बैठ गए। अपार जन समूह के मध्य जहाँ खड़े होने की जगह मिलना मुश्किल थी आराम से बैठकर यात्रा की। रस्तोगी के शतचंडी अनुष्ठान के समय हे अलख निरंजन ! श्याम सुन्दर, आपने लक्ष्मीनारायण बुधौलिया जी को माता के मंदिर में प्रवेश करने की आज्ञा दे दी। धौलपुर के श्री दयालु जी ने अनुष्ठान कर रहे श्री पण्डा जी को भाँग का सेवन कराया। जिससे रात्रि में वे उन्मत्त हो गए। इससे आश्रम की शांति भंग हो गई। प्रातः महाराज जी को प्रणाम करने गए, आपने समझाया-अनुष्ठानी ब्राह्मणों को मादक द्रव्य सेवन नहीं करना चाहिए। क्योंकि इसके सेवन से अनुष्ठान बिगड़ जाता है। अपने देश की महान सांस्कृतिक परम्पराओं का इसीलिए क्षय हुआ है। आचरण दूषित होने से देश तथा समाज की अवनति होती है। नादिया के नित्यानंद दस्यु जगाई-मधाई को हरिनाम देने के लिये गए, परन्तु उन दस्युओं ने नित्यानंद के सिर पर शराब का घड़ा

फोड़ दिया, उससे ख़ून में लथपथ होने पर भी नित्यानंद ने उन्हें प्रेमालिंगन देकर उनका उद्धार किया। हे जगत्गुरु ! आपके अज्ञानी भक्तों ने कई बार आपकी परीक्षा भी ली और आपने उनके प्रेम के वशीभूत होकर परीक्षा दी। उन अज्ञानियों का यह महान् अपराधिक कृत्य था, परन्तु हे प्रभो ! आप सबको क्षमा करते रहे और परीक्षा देकर उनके हृदय में जगन्माता के प्रति श्रद्धा और विश्वास दृढ़ करते रहे। एक दिन मथुरा के श्यामसुन्दर गोस्वामी (पाराशर जी) और राजवीर सिंह राठौर आपके शिष्य, प्रभु दर्शन के लिए छटपटा रहे थे। राजकीय सेवा से अवकाश मिलते ही वे दतिया के लिए 'जयन्ती जनता एक्सप्रेस' रेलगाड़ी में बैठकर चल दिए। उन्होने किसी से यह नहीं पूछा कि अमुक गाड़ी कौन-सी है और उसका रुकना दतिया स्टेशन पर है अथवा नहीं। जयंती जनता द्रुतगामी गाड़ी जब डबरा स्टेशन के पश्चात् सिन्ध नदी के पुल पर से गुज़र रही थी तभी एक यात्री ने कहा कि दतिया आने वाला है। यह सुनकर राजवीरसिंह ने उस यात्री से पूछा कि यह गाड़ी कितने देर रुकती है ? उस बोगी में बैठे कई यात्री कहने लगे कि यह गाड़ी जयंती जनता है जो दतिया में तो रुकती ही नहीं। यह सुनकर राजवीरसिंह और पाराशर सन्न रह गए। आपस में बातचीत करते हुए कहने लगे-यदि यह गाड़ी दतिया स्टेशन पर रुक जाए तो हम समझेंगे कि श्री स्वामीजी महाराज सच्चे हैं। उन्होने अपने स्वामीजी की परीक्षा लेने का विचार किया क्योंकि वे भक्त होते हुए भी आपत्ति काल समझकर श्री गुरुदेव की परीक्षा लेने लग गए। परन्तु हे भक्तवत्सल ! आप तो परीक्षा देने के लिए भी तत्पर रहते हैं। दतिया नगर निकट आ गया। पाराशर ने खिड़की से बाहर लौह पट्टिका (सिगनल) को देखा। यह गमनागमन सूचक पट्टिका दर्शा रही थी कि रेलगाड़ी को स्टेशन पर नहीं रुकना है। अब तो उनकी धड़कनें बढ़ने लगीं क्योंकि उनके पास टिकट केवल दतिया तक का ही था। गाड़ी सीधी झाँसी स्टेशन पर रुकती

पाट्टिका दर्शा रही थी कि रेलगाड़ी को स्टेशन पर नहीं रुकना है। अब तो उनकी धड़कनें बढ़ने लगीं क्योंकि उनके पास टिकट केवल दतिया तक का ही था। गाड़ी सीधी झाँसी स्टेशन पर रुकती

जहाँ पर उन्हें जुर्माना सहित किराया देना पड़ता और झाँसी से बस द्वारा दतिया भी वापस आना पड़ता। दतिया स्टेशन भी आ गया और प्लेटफार्म निकलने ही वाला था कि अचानक गाड़ी ही रुक गई। तुरन्त बिना विलम्ब किए राजवीरसिंह और पाराशर गाड़ी से नीचे उतर पड़े। उनके उतरते ही गाड़ी पुनः चलने लगी और तुरन्त गति पकड़ गई। गाड़ी अकारण ही रुकी थी, स्टेशन अधिकारी भी चकित थे और गाड़ी के यकायक रुकने से गाड़ी पटरी से भी उतर सकती थी, ऐसा कह रहे थे। गाड़ी के चालक ने भी इस घटना पर कुछ नहीं कहा, मानो कि वह सो गया था और गाड़ी के रुकने और क्षणभर बाद ही पुनः चल पड़ने का उसे भान ही नहीं हुआ। गाड़ी बीच की लाईन पर चल रही थी और उसी पर रुकी थी। प्रभु की लीला को कौन समझ सकता है ? दोनों भक्त गाड़ी से उतरकर आश्रम पहुँचे और पवित्र होकर श्री सद्गुरुदेव को प्रणाम करने पहुँचे। श्री स्वामिपाद् भगवान् ने उनसे कहा, "ले ली आपने स्वामी की परीक्षा ?" यह सुनकर दोनों शिष्य फूट-फूट कर रोने लगे और अपने अपराध का भान कर प्रायश्चित्त रूप बोले-हे क्षमासिन्धु ! हम लोग अधम हैं जो अपने प्रभु में अविश्वास कर उनकी परीक्षा लेने बैठ गए। इस अपराध के लिए क्षमाप्रार्थी हैं। दीनबन्धु कहने लगे, "कोई बात नहीं है परन्तु तुम्हारा स्वामी तो परीक्षा के लिए भी हर क्षण तत्पर रहता है।" इस "श्री स्वामी कथासार" का श्रद्धापूर्वक श्रवण और पठन करने वाले भक्त को ब्रह्मरूप सद्गुरुदेव का रक्षण और सानिध्य प्राप्त होता है।

इसको श्री पीताम्बराजी को समर्पित करते हुए। श्री स्वामीजी महाराज की जय।

।। इति एकोनविंश अध्याय समाप्त।।

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

विंशोऽध्याय

श्री गणेशाय नमः। कबहुंक अंब, अवसर पाइ। मेंरिऔ सुधि द्याइबी, कछु करुन–कथा चलाइ। **हे माता कभी अवसर हो तो कुछ करुणा की बात छेड़कर श्रीरामचन्द्रजी को मेरी भी याद दिला देना, इसी से मेरा काम बन जाएगा। हे मन ! दीनों के बन्धु, सूर्य के समान तेजस्वी, दानव और दैत्यों के वंश का समूल नाश करने वाले आनन्दकन्द श्रीराम का भजन कर वे राक्षस रूपी बहुत से मतवाले हाथियों को मारने के लिए सिंह हैं। भक्तों के मन रूपी पवित्र वन में निवास करने वाले हैं। हे परम करुणा के धाम ! आप ही सबको बुद्धि देने वाले हैं, इसलिए हम सबको ऐसी बुद्धि दें कि निरन्तर हम आपको ही भजते रहें। संवत् २०१० विक्रमी, कुछ भक्तों के लिए विशेष रूप से सौभाग्य का वर्ष हुआ। उस वर्ष आपने कामकला विलास, वरिवस्या रहस्य, ललिता सहस्रनाम एवं परशुराम कल्पसूत्र आदि श्री विद्या के कुछ ग्रंथ अपने कुछ सेवकों को पढ़ाए और श्री यंत्र की स्थापना करने का संकेत प्रकट किया। श्री सन्त शिरोमणि ने कृपा करने के लिए पहले स्वयं के करकमलों से श्री महात्रिपुर सुन्दरी पूजा पद्धति तैयार की और उन शिष्यों में से एक शिष्य बाबूलाल गुप्त को बुलाकर कहा कि श्री यंत्र बनवाना है उस यंत्र का चित्र बनाकर लाओ। चतुर शिष्य ने संकेत समझकर कादि विद्या के अनुसार श्री यंत्र काग़ज़ पर बनवाकर आपके सामने**

शिष्य ने संकेत समझकर कादि विद्या के अनुसार श्री यंत्र काग़ज़ पर बनवाकर आपके सामने

प्रस्तुत किया। काग़ज़ पर बना वह श्री यंत्र देखकर महाराज अत्यन्त हर्षित हुए और उस शिष्य को बोले कि ऐसा ही श्री यंत्र बनवाना चाहिए। उस शिष्य ने कहा जो आज्ञा। श्री महाराज ने कहा इस श्री यंत्र का पुण्य तुम अकेले ही लूटना चाहते हो, ऐसा नहीं और लोगों को भी इसमें शामिल करो। तद्नुसार उस सेवक ने पं.श्री सूर्यदेव शर्मा, बाबूलाल दुबे एवं सेठ श्री गुलाबचन्द अग्रवाल को इस चाँदी के यंत्र बनवाने के व्यय में शामिल किया। शुभ मुहूर्त में आपके करकमलों द्वारा विधिवत् संस्कार कराके श्री यंत्र की स्थापना की गई। आपके आदेशानुसार दोनों अष्टमी, पूर्णमासी, अमावस्या एवं संक्रान्त के दिन इस प्रकार प्रतिमाह रात्रि में पाँच बार पूजा कराई जाने लगी। कुछ समय बाद पूजन के समय कुछ लोग राजनीति की चर्चा करने लगे तब श्री प्रभु ने कई बार समझाया कि तुम लोग यहाँ भजन पूजन करने आते हो तो राजनीति की चर्चा नहीं करनी चाहिए लौकिक कार्यों का अलौकिकता से संबंध जोड़ने का प्रयत्न नहीं करना चाहिए। किन्तु बार-बार समझाने पर भी वे लोग नहीं माने तो उन्हें पूजा से वंचित होना पड़ा। श्री प्रभु ने अपने भक्त एवं सेवक श्री चन्द्रप्रकाश अंगल को जिनका सम्पूर्ण परिवार आपके श्री चरणों में आश्रित था, कहा "तुम अब यहाँ पूजा किया करो यह हमारी निजी पूजा है तुम इसके योग्य हो।" एक बार राजमाता सिंधिया ने श्री प्रभु से निवेदन किया-हे अथर्वशीर्षस्थ ! आप सुबह एक कप चाय पीते हैं उसके लिए दूध दतिया में अच्छा नहीं मिलता, अतः आश्रम में एक गाय रख लें जिसकी देखभाल की ज़िम्मेदारी मेरी रहेगी। श्री प्रभु ने कहा-गौ के शरीर में सभी देवताओं का वास है, इसलिए गौ की पूजा से भी देवता पूजित हो जाते हैं। जैसे माता अपनी संतान का सर्वथा हित करती है, ऐसे ही गौ भी जगत् के हित के लिए प्रकट हुई है। जिस देश में गौ की सेवा होती है, वहाँ सभी प्रकार की सम्पन्नता रहती है। जहाँ इसका अपमान होता है वहाँ दरिद्रता, क्लेश, रोग, भय आदि रहते

हैं। गौ का वध एक बहुत ही निकृष्ट कर्म है, जिससे लोक परलोक दोनों ही नष्ट होते हैं। यह कहकर आपने राजमाता को गौ रखने की आज्ञा दे दी। गाय आ गई और उसकी सेवा के लिए ग्वालियर से एक सेवक भी आ गया। कुछ दिनों तक सेवक ने सेवा की तथा आश्रम में ताक-झाँक करता रहा। एक दिन उसे मौक़ा मिला तो आश्रम के बहुत सारे सामान की चोरी की, गाय के बर्तन इत्यादि लेकर स्टेशन पहुँचा। वहाँ पर ग़श्त करने वाले पुलिस वालों ने पूछा, तो उसने कहा-हम आश्रम में गाय की सेवा करते हैं, दूसरा सेवादार आ गया हैं, इसलिए अपना सामान लेकर ग्वालियर जा रहे हैं। दूसरे दिन सुबह आश्रम में हल्ला हो गया, सेवकों ने श्री प्रभु, से पुलिस में रिपोर्ट करने की आज्ञा माँगी। हे प्रभो ! आपने कहा-माई ने उसे दिया है, तुम लोग क्यों परेशान होते हो, जो मेघ पानी का दान करता है, सारे प्राणियों की रक्षा करता है उसे किस वस्तु की कमी है। इस प्रकार आपने उस प्रकरण को टाल दिया। झाँसी में साधना-मंदिर के उद्घाटन हेतु श्री कालका प्रसाद अग्रवाल एडवोकेट ने आपके भक्त रामगोपाल शास्त्री से कहा-दतिया के श्री स्वामीजी से मंदिर का उद्घाटन करने की सिफ़ारिश कर दो। शास्त्री ने स्पष्ट मना करा दिया कि-श्री महाराज उद्घाटनों आदि में नहीं जाते हैं, बेकार में दतिया जाने से, कोई लाभ नहीं है। इसके बावज़ूद कालका प्रसाद ने शास्त्री से कहा कि हमें साधुओं को मनाना आता है, आप फ़िक्र न करें और शास्त्री को मनाकर दतिया ले गए। वहाँ शास्त्री जी ने प्रभु को साष्टांग प्रणाम करके निवेदन किया-हे अशरण शरण दाता ! कालका प्रसाद साधना मंदिर झाँसी का उद्घाटन आपके करकमलों द्वारा कराना चाहते हैं। हे चिद्विलास ! आपने कहा-हम इस प्रकार के काम करने के लिए यहाँ नहीं बैठे है और कहीं आते जाते नहीं हैं। इस उत्तर को सुनकर कलाका प्रसाद वहीं पर बिलख-बिलख कर रोने लगे, यह देखकर श्री प्रभु ने अतिशीघ्र कहा-चलेंगे-चलेंगे, रोओ मत।

आपका हृदय उनको रोता देखकर एकदम द्रवित हो उठा था तथा आप उद्घाटन हेतु झाँसी पधारे। एक बार हिन्दुस्तान कमर्शियल बैंक के हेड कैशियर भण्डारी, ब्रांच एजेन्ट महेशनाथ के साथ श्री प्रभु के दर्शनों को आए। जैसे ही चरणों में प्रणाम किया, सदाशिव ने पूछा-तुम कौन हो ? भण्डारी ने उत्तर दिया-हे प्रभो ! यही नहीं ज्ञात है कि मैं कौन हूँ ? यही ज्ञात हो जाय तो स्वामीजी महाराज फिर क्या बात हैं। मैं तो एक साधारण संसारी जीव हूँ। श्री स्वामीजी ने कहा-क्या मेरे सीधे-साधे प्रश्न का यही उत्तर है ? तब भण्डारी ने नम्रतापूर्वक अपना नाम व व्यवसाय आदि बताया। कुछ दिनों बाद शिवरात्रि के एक दिन पूर्व भण्डारी को बुलाया और भगवन् आपने कहा-कल तुमको मुसलमान बनाऊँगा। फिर आगे कहा-जिसका मुसल्लम है ईमान उसको कहते हैं मुसलमान। और शिवरात्रि को मंत्र प्रदान किया तथा माला को स्पर्श करके मंदिर में बैठकर भजन करने का आदेश दिया। कुछ समय बाद भण्डारी को स्वप्न में माँ पीताम्बरा के दर्शन हुए। भक्त भण्डारी ने अपना स्वप्न श्री गुरुदेव को भी सुनाया। सब कुछ सुनकर हे मुक्तिदाता ! सत्यनारायण आपने कहा-माँ की कृपा तुमको प्राप्त हो गई है। ऐसे बहुत कम भाग्यशाली पुरुष होते हैं, जिनको माँ की कृपा प्राप्त होती है। निरन्तर ध्यान जप करते रहना। सब कुछ माँ को अर्पण कर दो। इस प्रकार शत-शत लोगों को प्रत्यक्ष रूप में माँ की कृपा आपके मार्गदर्शन से ही प्राप्त हुई है। हे जगदीश्वर! आपने जगदम्बा भवानी के विषय में लिखाया है - जो पराशक्ति समस्त जगत् को चैतन्य प्रदान करके स्वरूप प्रदर्शित करने के योग्य बनाती है, सत् चित्त आनन्द जिसका स्वरूप है ब्रह्मा, विष्णु, महेश भी जिसकी आशा करते हैं, जो दयामयी है, अपनी सभी संतानों पर जिसकी अपार असीम कृपा हो रही हो, जिसकी सहायता के बिना शिव भी शव के तुल्य हैं, उसकी भक्ति संसार के आवागमन से मुक्त होने के लिए सभी व्यक्तियों को करना चाहिए। ऐसी

जगन्नमाता की भक्ति जो नहीं करता, वास्तव में उसका बड़ा भारी दुर्भाग्य हैं, क्योंकि ऐश्वर्य, मुक्ति, ज्ञान, श्रेयस आदि फलों की दाता वही हैं। एक दिन एक भक्त ने प्रश्न किया-प्रभु, हमें भगवान् के जो नाम सबसे बढ़िया हो वह बता दीजिए। उत्तर में परम विनोदी उपदेष्टा ने कहा-अच्छा तो तुम हमें पहले भगवान् का जो सबसे ख़राब नाम हो वह बतला दो। इस उत्तर से सर्वत्र विनोद की लहर फैल गयी। आपने कहा-जो भी भगवान् का नाम है वह सर्व सुन्दर है। उसमें तारतम्य कैसा ? शालिग्राम की बटिया में बड़े-छोटे का विचार नहीं करना चाहिए। प्रकाश मोहन दिल्ली में अपने बड़े भाई के साथ एक छोटे से मकान में रहते थे। वे दोनों भाई अविवाहित थे। उस समय अखिल भारतीय साधु सम्मेलन १६४३ में यमुना नदी के किनारे हुआ। जिसमें लाखों साधुओं ने भाग लिया। प्रकाश जी ने सोचा कि - हो सकता है मेरे मालिक अन्नदाता गुरुदेव दतिया के स्वामीजी भी इस सम्मेलन में आए हों। इस विचार से प्रकाश मोहन भीड़ में उनको ढूँढ़ने गए। वहाँ पहुँचकर वे आश्चर्य से स्तब्ध रह गए। हे कामेश्वर ! सर्वज्ञ ! आप स्वयं उनके सामने आकर खड़े हो गए। प्रकाश आपके चरणों पर गिर पड़ा और कहने लगा-श्री महाराज ! मैंने आपको याद किया था कि आप भी अवश्य आए होंगें। श्री स्वामी जी ने भी उत्तर दिया, "प्रकाश जी, आपने हमें याद किया तो हमने भी आपको याद किया और हम आ गए। प्रकाश आग्रह करके आपको अपने घर पर ले आया। इनके पास एक पुरानी चारपाई के अतिरिक्त तख़्त या कोई दूसरा पलंग भी नहीं था। उस पुरानी चारपाई पर ही हे प्रभो ! आपने अतिप्रसन्नता पूर्वक विश्राम किया। इन ग़रीब बच्चों ने जो रूखा-सूखा भोजन अपने हाथ से बनाकर आपको अर्पण किया और आपने उसको ही इतनी प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण किया कि प्रकाश और उसके ज्येष्ठ भ्राता इस कृपा को देखकर रोते-रोते बेहाल हो गए। फिर प्रकाश जी को जब वे बच्चे थे, अपनी माँ द्वारा सुनायी एक कविता भरी कहानी याद आ गई - "दुर्योधन बहु पाक बनायी, प्रीत बिना मोको नहीं भायी। विदुर भगत

उसको ही इतनी प्रसन्नतापूर्वक ग्रहण किया कि प्रकाश और उसके ज्येष्ठ भ्राता इस कृपा को
देखकर रोते-रोते बेहाल हो गए। फिर प्रकाश जी को जब वे बच्चे थे, अपनी माँ द्वारा सुनायी एक

कविता भरी कहानी याद आ गई - "दुर्योधन बहु पाक बनायी, प्रीत बिना मोको नहीं भायी। विदुर भगत की प्रीत जो जानी, बासी साग बहुत रुचि खानी।।" **कहते हैं-एक बुढ़िया ने हज के लिए बड़ी कठिनाइयों से पैसे इकट्ठे किए। रास्ते में उसने हज ना करके एक ज़रूरतमन्द भूखे को वह धन दे दिया। खुदा के दरबार में उस वर्ष हज करने वालों में उस बुढ़िया का ही हज क़बूल हुआ।** हे लीलामय प्रभु ! आपकी मधुर लीलाओं का रहस्य जानने में कौन समर्थ हुआ है। हमेशा की तरह बाबू मेहतर आश्रम में झाड़ू लगाने आया। उसकी गोद में एक सात आठ वर्ष का बच्चा था। उसको जहाँ वह हमेशा बैठाता था वहीं बैठा दिया और आश्रम की सफ़ाई करके खुद भी आकर दूर से ही श्री प्रभु के दर्शनों के लिए बच्चे के पास चुपचाप बैठ गया। वह समय आपका बगिया में स्नान करने का था लेकिन आप बाहर बरामदे में बैठे हुए थे। आज क्या बात है ? स्नान का समय बीते काफ़ी समय हो गया है, उसी समय एक भक्त बहुत-सा लड्डू, पेड़ा, मिठाई लेकर आया और श्री चरणों में अर्पण किया। आप वह प्रसाद लोगों को अपने हाथ से देने लगे। हे देव पुरातन ! आपने बाबू मेहतर के बच्चे को आवाज़ दी कि यहाँ आओ और प्रसाद ले जाओ। बाबू मेहतर यह सुनकर आपके पास आ गया और विनम्रता से बोला-सरकार ! अन्नदाता ! बच्चे का एक पाँव ख़राब है, वह चल नहीं सकता, आप प्रसाद मुझे दे दें, मैं उसे दे दूँगा। यह सुनकर आपने उस बालक की ओर देखा तथा बहुत तेज़ और कड़ककर उस बच्चे से कहा-खड़े हो जाओ। बच्चे ने भयभीत होकर खड़े होने की कोशिश की लेकिन गिर पड़ा। श्री प्रभु ने पुनः उसी गंभीर वाणी में बच्चे को खड़ा होने का आदेश दिया, तीसरी बार आपने फिर कहा तो भयभीत बच्चा एकदम खड़ा हो गया और धीरे-धीरे चलकर आपके पास तक आ गया तथा हमेशा के लिए पोलियो नामक बीमारी से मुक्त हो गया। इस कृपा को बहुत से लोगों ने देखा। उस ग़रीब के लिए आपकी करुण दया देखकर

तथा बालक को चलते हुए देखकर हज़ारों हज़ार तरह से जय-जयकार करने लगे। हे महाप्रभु ! आपकी बात को समझना, सीमित बुद्धि के बाहर की बात है। हे लम्बोदर ! आपके चरणों में निरन्तर प्रार्थना है कि बुद्धि और ज्ञान दें ताकि भक्त समुदाय अपने को कृतार्थ कर सके। आप दोनों के उपकार में सदा रत रहे, मानों दीन ही आपके भगवान् थे। अब तो - मस्जिद के जेरसाये एक घर बना लिया है, ये बन्दा ये कमीना हम सायाये खुदा है। आपकी शिष्या, श्रीमती रेणु शर्मा, नागपुर से आपके दर्शनार्थ आईं और आप को प्रणाम कर बैठी ही थी कि एक अत्यन्त कृशकाय वृद्धा श्वेत वस्त्र पहने और ललाट तक ओढ़नी ओढ़कर वहाँ आईं। उसने आते ही आप से प्रसाद देने के लिए निवेदन किया। प्रभु ने उस वृद्धा को प्रसाद दिया। प्रसाद लेकर वह मुड़कर वापस जाने लगी। वह कुछ ही क़दम चली होगी कि श्री मुख से निकला, "भगवती धूमावती प्रतिदिन एक बार यहाँ से प्रसाद लेने आती हैं।" उसी समय रेणु देवी ने पूछा-हे सर्वसाक्षी ! अभी आप कह रहे थे कि धूमावती माता प्रसाद लेने आती हैं, अगर उनके आने का समय आप बताएँ तो मैं उस समय आकर उनके दर्शन करूँ। हे पंचानन ! हे औलिया अवधूत ! आपने कहा इसके आने का कोई समय नहीं है, अचानक रेणुदेवी के मस्तिष्क में बिजली-सी कौंधी कि यह बुढ़िया भगवती धूमावती ही तो नहीं थी और शीघ्रता से पलटकर पीछे की ओर देखा तो कोई भी नहीं दिखा। रेणुदेवी ने आपसे पुनः कहा-हे प्रभो ! कहीं यह बुढ़िया ही तो भगवती धूमावती नहीं थी। आपने बहुत रहस्यमय वाणी में कहा-हो सकता है वो ही हों। हे शक्तिमान निरंजन पुरुष ! इसमें कोई आश्चर्य नहीं है कि वे भगवती धूमावती ही हों। क्योंकि समस्त शक्तियों को धारण करने वाले परमशिव आप ही हैं। दशों महाविद्याएँ आपके प्रसन्न हुए बिना साधकों को फल देने में असमर्थ होती हैं। हे शिवरूप सदगुरु निजगुरु ! सर्वार्थ सिद्धि प्रदान करने वाले ! हम सब आपके चरण कमलों की बारम्बार

दशों महाविद्याएं आपके प्रसन्न हुए बिना साधकों को फल देने में असमर्थ होती है। हे शिवरूप
सदगुरु निजगुरु ! सर्वार्थ सिद्धि प्रदान करने वाले ! हम सब आपके चरण कमलों की बारम्बार

वन्दना करते हैं। हे पतिताधाम मानव पावक महेश्वर परमात्मा ! अनन्त काल से महा अन्धकार के गर्त में डूब गए हम लोगों पर शीघ्र ही प्रसन्न हों, जिससे भगवती जगदम्बा हम महापातकों को अपनी गोद में स्थान दे दें और हम सब पवित्र हो जाएं। आप अपने लगनशील भक्त के विषय में किसी को भी कोई भ्रान्ति नहीं होने देते। सबकी शंका का समाधान स्वयं ही कष्ट उठाकर तुरन्त कर देते हैं। नागपुर (महाराष्ट्र) के देवसी कोठारी आपके परम भक्तों में से हैं। वे आपके दर्शनों को दतिया आते हैं। उनकी वृद्धा माताजी ममता वश कहती थीं कि मेरा देवसी अकेला ही यहाँ से इतनी दूर न जाने कहाँ जाता है और इसको कितने कष्ट उठाने पड़ते हैं, किसके पास जाता है ? जब कोठारी नागपुर के दतिया को रवाना होते तो उनकी पूज्य माता जी ऐसे ही चिन्ता में डूब जाती और उनके लौटने तक उसी स्थिति में रहती। एक रात्रि को जब कोठारी की वृद्धा माँ गहरी निद्रा में सो रही थीं तो आप ने स्वप्न में उन्हें दर्शन दिए। वे आपकी मुखाकृति को पहचानती थीं क्योंकि उन्होने श्री प्रभु के अनेक फोटो देखे थे। उनके स्वप्न में आने वाले श्री स्वामीजी हनुमान जी की भाँति वीरासन से खड़े होकर क्रोधवश पूर्ण शरीर को हिलाते हुए वृद्धा माँ से कह रहे हैं-बुढ़िया ! तेरा बेटा मेरा भी बेटा है। वह मेरे ही पास आता है। तेरी ही तरह मैं भी उसकी देखभाल करता हूँ। तुझे कोई चिन्ता नहीं करनी चाहिए। प्रभु का ऐसा आदेश सुनकर फिर कोठारी की माता जी ने कभी भी चिन्ता नहीं की। इस प्रकार आप 'चिन्ता हरण' बन गए। इसी प्रकार देवसी कोठारी की पत्नी को भी रात्रि काल में स्वप्न में आकर दर्शन दिए थे। उन्होने देखा कि श्री माई के मंदिर के दरवाज़े के सामने श्री स्वामी जी महाराज खड़े हैं और कोठारी की पत्नी उनको प्रणाम कर रही हैं। यह स्वप्न देखकर एक दिन जब वे कोठारी जी के साथ दतिया गई तो श्री स्वामीजी के दर्शन

कर कहने लगी। ये तो वे ही महात्मा हैं जिन्होने मुझे नागपुर में दर्शन दिए थे और फिर उन्होने श्री माई के बरामदे और मंदिर को पहचानते हुए कहा कि यही वह दरवाजा है जहाँ ये महात्मा जी खड़े थे। हे प्रभो ! आप अपने भक्तों के प्रति और उनके संशयों को छिन्न करने के लिए इतना कष्ट उठाते हैं, दूर से दूर स्थान पर भी पहुँच कर यह कार्य करते हैं। हे महानाद ! आप अपने भक्तों को तत्काल सद्‌बुद्धि देने वाले गणेशरूप हैं। आपके स्वरूप को हर कोई समझ नहीं सकता। आप स्वरूपवान भी हैं और स्वरूपातीत भी हैं। श्री स्वामीजी नाम आपके दोनों ही स्वरूपों का द्योतक है और भजनीय है। हे जनार्दन केशव ! आपका सर्वशक्तिमान स्वरूप एवं शक्ति अथाह है। आपकी वक्र भृकुटि देखकर महाकाल भी भय से थरथराने लगता है, जैसे नृसिंह भगवान् ने भक्त प्रह्लाद को गोद में बैठा लिया था, इसी प्रकार आपने काले रंग का एक पाँच छः वर्ष का बालक मैली-कुचैली फटी कमीज़ पहने था जिसकी नाक बह रही थी, उसे अपनी गोद में बैठाकर आप स्नेह से उसके सिर पर हाथ फेर रहे थे और लोगों को बता रहे थे कि यह छोटेलाल है, इसको पहले मिर्गी के दौरे आते थे। जबसे यह यहाँ दवा लेने आने लगा है इसकी मिर्गी ठीक होती जा रही है। अब यह बड़े लाल हो गया है। हे रत्नाकर ! आपके भण्डार में रत्नों की क्या कमी। लेकिन जिस रत्न को आपने गोदी में बैठा लिया है, वह छोटेलाल से बड़े लाल ही नहीं वरन् आपके गले के हार का दमकता रत्न बन गया। हे गरीब नवाज़ ! उच्च पदवी पर आरूढ़ योगियों को देवी सायुज्य प्रदान करती है। अन्धकार में पतन से बचाती है। उसका परमधाम गुप्त हृदय-प्रदेश है। हे प्रभु रत्नगर्भ ! वही परमधाम अनायास इस बच्चे को बख़्श दिया। कमल के समान नेत्र वाले जनार्दन ! हे अशरण शरण ! आप ही हमारे शरणदाता हैं। आप हम सब पर प्रसन्न हों। संसार

जनार्दन ! हे अशरण शरण ! आप ही हमारे शरणदाता हैं। आप हम सब पर प्रसन्न हो। संसार

में देखा जाता है, धन का अभिलाषी धनिक का संग प्राप्त कर धन प्राप्त करने की कला जान जाता है। श्री महाराज की घटनाओं को प्रेरणावश लिखकर इस दासानुदास ने अपने हृदय, बुद्धि, मन, अंतःकरण को पवित्र करने की भावना को व्यक्त करने का साहस किया है। सब ही प्रकार से अयोग्य आपके श्री चरण रज का यह दास है। बीज का रोपना और काटना मनुष्य का काम है, परन्तु समय पर वर्षा होना, बुआई का सुन्दर परिणाम निकलना, बीज में अंकुर उत्पन्न होना, यह सब आपके ही काम हैं। आपकी कृपा की महिमा कुछ और ही है। गोबर लीपने पर भूमि की शुद्धि होती है, राख के मलने पर धातु के पात्रों की शुद्धि होती है ऐसे ही सन्त का क्षण भर का ही सत्सङ्ग जीव को पवित्र कर देता है। सन्त की शरण में जाने का परिणाम पुनीत ही होता है। झाँसी के अमीर घराने का सागर नाम का लड़का बुरी संगत में पड़ गया और उसे शराब पीने की लत लग गयी। चौबीसों घंटे वह शराब के नशे में रहने लगा। परिवार वाले बड़े परेशान व दुःखी थे, गृहस्थी भी चौपट हो गयी। शराबी का विवेक नष्ट हो जाता है, प्रमाद बढ़ जाता है। शराबी को सोने के पलंग में और गंदी नाली में भेद नहीं दिखता। वह आश्रम में भी शराब ले आता और पीता, जो सन्तों की महिमा नहीं जानते और उनसे द्वेष करते हैं, वे कहते कि यह स्वामी तो धनवान् लोगों का है। यह सब सुनकर श्री महाराज जी कुछ ध्यान नहीं देते। एक दिन लोगों ने आप से कहा-उसको आश्रम में नहीं आने देना चाहिए। आप नहीं निकालें तो हम लोगों को आप आज्ञा दे दें। हम उसे कभी आश्रम पर नहीं आने दें। लेकिन जब ज़्यादा शिकायतें लोग करने लगे, तो हे चिदानन्द ! आपने कहा-आग लग जाय तो उसे पानी से बुझाना चाहिए। आदत से मजबूर हो गया है, वह यहाँ माता की शरण में आता है। तुम लोगों का क्या बिगाड़ता है। कोई राग की आग में जल रहा है, कोई द्वेष की तो कोई मोह की आग में जल रहा है, इसमें क्रोध रूपी घी मत डालो।

दया रूपी अमृत डालना चाहिये। "साहिल के तमाशाई हर डूबने वाले पर, अफ़सोस तो करते हैं पै इमदाद नहीं करते।" और – "कुदरत से न देखें अहले साहिल अहले तूफ़ान को, कभी ऐसा भी होता है कि साहिल डूब जाते हैं।" **अर्थात् हे किनारेवालो! तूफ़ान में फँसकर डूबने वाले को हिकारत की नज़र से न देखो क्योंकि कभी ऐसा भी होता है कि किनारे ही डूब जाते हैं। ऐसे ही दतिया निवासी तुलसी नाम का एक बहुत सुन्दर तरुण भी ख़ूब शराब पीकर आश्रम में आता था। वह महाराज जी का परम भक्त था। कई बार महाराज जी ने उसे समझाया-इस गंदी आदत को छोड़ दो, इससे यही लोक नहीं बल्कि परलोक भी बिगड़ता है। अरे ! मेरी बात समझो। सागर अमीर है, उसके परिवार में खाने-पीने का बन्दोबस्त हो जाता है लेकिन तुम्हारे पास तो धन भी नहीं है। ग़रीबों को तो बहुत सावधानी से गृहस्थी चलाना चाहिए। इस प्रकार बार-बार समझाने पर भी तुलसीदास ने शराब नहीं छोड़ी। एक दिन महाराज जी ने उससे कहा तुम मेरी बात नहीं मानते हो तो मुझे छोड़ दो या शराब छोड़ दो। दोनों बातें एक साथ नहीं चलेगी। घर जाकर विचार करना और पन्द्रह दिन में मुझे इसका उत्तर देना। पन्द्रहवें दिन भोलानाथ सक्सेना आश्रम की ओर आ रहे थे। रास्ते में तुलसी का घर पड़ा वह सुबह दरवाज़े के बाहर बैठा दाँतुन कर रहा था। भोलानाथ ने कहा-आज पन्द्रहवाँ दिन है, मैं आश्रम जा रहा हूँ, तुम भी मेरे साथ चलो। जब आदमी का दुर्दैव होता है तो उसकी बुद्धि का विनाश हो जाता है। तुलसीदास ने कहा-कि महाराज जी को तुम मेरा यह उत्तर बता देना कि मैं शराब नहीं छोड़ सकता और आपको भी नहीं छोड़ सकता। उसी दिन शाम को उस तरुण शराबी की मृत्यु हो गयी। महाराज ने एक दिन सागर को भी बुलाकर पूछा-तुम इतनी शराब क्यों पीते हो? तुलसी कितनी शराब पीता था वह उससे मर गया। उसका परिवार भी बड़े**

शराब क्यों पीते हो? तुलसी कितनी शराब पीता था वह उससे मर गया। उसका परिवार भी बड़े

कष्ट में आ गया। जिस प्रकार भगवान् सूर्यदेव की शरण लेने पर शीत, भय, तम नष्ट हो जाते हैं, उसी प्रकार साधु की सेवा करने वाला भी सुखी होता है। सागर ने उत्तर दिया-प्रभो ! बेबस हो गया हूँ, आदत पड़ गई है, छूटती नहीं है, आपकी शरण में आया हूँ, आपका ही सहारा है। आप ही सहारा दें, आप ही पतितों का उद्धार करने वाले भगवान् हैं। महाराज जी ने उसे समझाया-यदि शरीर पर साँप गिर जाए तो उसे तुरन्त फेंक देना चाहिए। वह किस रंग का है यदि यह देखने लगोगे तो वह काट ही लेगा। इसलिए विषय रूपी सर्प को तुरन्त फेंक देना चाहिए। हे गंगाधर ! इस विषय में अपने भक्तों को आपने एक कथानक भी सुनाया कि-सुरा और लक्ष्मी दोनों बहनें हैं। क्योंकि दोनों का प्रादुर्भाव समुद्रमंथन के समय हुआ। अतः समुद्र उनका पिता है। दोनों बहन होते हुए भी विरोधी स्वभाव स्वरूप उनमें झगड़ा रहता है। प्रादुर्भाव के समय भी जब दोनों में झगड़ा होने लगा तो फ़ैसला कराने के लिए विष्णु आए। झगड़ा समाप्त करने के लिए सुरा ने प्रस्ताव रखा कि झगड़ा केवल एक शर्त पर ही समाप्त हो सकता है कि जिस घर में मैं (सुरा) पहुँचेगी वहाँ से लक्ष्मी को भागना होगा। उसका यह सुझाव मान लिया गया और तभी से जिस घर में शराब का प्रवेश हो जाता है, वहाँ से लक्ष्मी भागने लगती है। धन का अहंकार नहीं करना चाहिए अनेक प्रकार से श्री भगवान् ने उसे समझाया। लेकिन उसके बाद भी उसकी शराब नहीं छूटी। जैसे दुष्ट व्यक्ति अपनी दुष्टता नहीं छोड़ता वैसे ही सन्त कभी करुणा रहित नहीं होता। दुष्ट लोग तो तमाशा ही देखा करते हैं। आखिर एक दिन उसका भाग्य भी चेता। वह दतिया जाकर श्री प्रभु के चरणों में गिर पड़ा तथा कसकर पाँव पकड़ लिया और कहा कि - हे नित्यात्मा ! महाराज मैं तो आपके द्वार का कूकर-शूकर हूँ। इस आशा से आपके द्वार पर पड़ा रहता हूँ कि आते जाते कभी तो मालिक की नज़र पड़ेगी, कभी तो कृपा का टुकड़ा मिलेगा। मुझे भी कृपा की भीख मिले। श्री

भूतभावन महाराज जी यह सुनकर द्रवित हो गए और उन्होने उसे आज्ञा दी कि - जाओ माता बैठी हैं उनसे प्रार्थना करो। अपनी शरण में आए जीव की पुकार सुनती हैं, चाहे वह कैसा भी पापी क्यों न हो। गंगाजल का स्पर्श होते ही मैल कहाँ रहेगा। उसकी पुकार की सुनवायी हो गई और कुछ दिनों बाद उसे शराब से घृणा हो गई। हे विश्वाराध्य ! आपकी महानता का अनुमान लगाना, आपके कार्य-कलापों और बातों का रहस्य समझना असंभव है, क्योंकि सर्वतंत्र स्वतंत्र, तत्त्व का अनुमान नहीं लगाया जा सकता। हे सत्यनारायण ! आपने देश व समाज के कल्याण के लिए अवतार ग्रहण किया था। हे मर्यादा पुरुषोत्तम ! एवं अशरण शरण ! यह सारी सृष्टि भी आपकी ही कृति है और आप केवल मात्र रचनाकार हैं। हम लोग जैसे भी हैं, हमें आप निभाएँ। इस "श्री स्वामी कथासार" का नित्य पाठ करने और सुनने वाले भक्तों की मनोवांछित कामनाओं की पूर्ति होकर अपार आनन्द की प्राप्ति होती है। श्री स्वामीजी महाराज उसकी कुशलक्षेम वहन करते हैं। श्री स्वामीजी महाराज की जय।

यह अध्याय श्री पीताम्बरा जी को अर्पण है।

।। इति विंशोऽध्याय समाप्त।।

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

एकविंशोऽध्याय

श्री गणेशाय नमः। हे प्रभो पद्मनाभन ! आपके दरबार की महिमा का बखान करना मामूली बात नहीं है। हाथ की पाँचों उँगलियाँ बराबर नहीं रहती, ऐसा व्यवहार में कहा जाता है। लेकिन दरबार की महिमा न्यारी ही है। पाँचों उँगलियाँ एक जैसी ही हैं। अन्न ग्रहण करते समय, अन्न केवल हाथ में पकड़ते समय उँगलियों की तरफ़ देखने पर वे एक परमार्थ के समान दिखती हैं। हे मानसहंस ! हे दीन बन्धु ! दरबार में परमार्थ की भूख लगने के कारण हरेक भक्त के हाथ में जितना आ सका हो उतना और अपनी पसंद की साधना का ग्रास था, इसलिए प्रत्येक की उँगलियाँ समान थी। बम्बई में महासागर कई दिनों तक नित्यप्रति आपके चरणारविन्दों को धो-धोकर पीता रहा। उसकी तृप्ती हो जाने पर विश्व को अपने ज्ञान से आलोकित करने वाले महापुरुष ने महासागर से विदा ली। हे राज राजेश्वर अकाल पुरुष ! बीमारी का तो आपने बहाना लिया था, इस बहाने आपसे न जाने कितनों का कल्याण किया। मधुमेह के उपचार हेतु डॉ.द्वारा बतायी गई डाओनिल की गोली सेवक मोती मास्टर ने दे दी है। श्री प्रभु आज कुछ अस्वस्थ एवं उदास दिखाई देते हैं। सारा वातावरण ही उदास दिखाई दे रहा है। भक्तों के आग्रह करने पर

श्री प्रभु आपने भोजन नहीं किया और मूढ़े पर ही बैठे रहे। शाम को भी डाओनिल की गोली यथासमय दे दी गई। मध्यान्ह में क़रीब तीसरे प्रहर आप बीच के बरामदे में विराजे थे। अचानक प्रभु खड़े हुए और बाहर निकल कर शयन कक्ष में तख़्त पर लेट गए। जब श्री प्रभु शयन कक्ष में गए तो कई भक्तों ने देखा कि उनके श्री चरण अटपटे से इधर-उधर पड़ रहे हैं। यह उनकी अस्वस्थता का द्योतक था। कुछ ही देर में देखा कि गुरुदेव हुंकार के साथ कराह रहे हैं। यह देखकर भक्त बदनसिंह उठकर शयन कक्ष में गए और दशा कुछ चिन्तनीय देखकर अन्य सेवकों को बुलाने लगे। उन दिनों डॉ.योगेश मिश्र भी जयपुर से पधारे हुए थे। उनको भी साधकावास से बुलाया गया। वैद्यराज रामनारायण शर्मा और श्री सूर्यदेव भी आ गए। अब श्री प्रभु मूर्च्छित अवस्था में हो गए। वैद्य जी ने देखकर कहा चीनी की शरीर में कमी हो गई है, इसलिए जब तक कोई चिकित्सक आए श्री महाराज को मिश्री युक्त जल दे दिया जाय और ऐसा ही कर दिया गया। भगवती का चरणतीर्थ भी उसी अचेतावस्था में ही उनके मुँह में डाल दिया गया। दतिया नगर से सिविल सर्जन भी आए, परन्तु तब तक श्री प्रभु की मूर्च्छा जा चुकी थी और वे तख़्त पर ही उठकर बैठ गए। सभी सेवकों ने प्रभु को प्रणाम किया। सब लोगों ने श्री चरणों में निवेदन किया कि अस्वस्थता अनुभव होने पर वे अवश्य ही प्रकट कर दिया करें, हम शिष्य लोग तो अज्ञानी हैं और कुछ नहीं समझ पाते। आपने कहा-हमको इस शरीर की अस्वस्थता के विषय में किसी से कुछ कहने का अभ्यास नहीं है। रात भर बेचैनी रही। उपचार दो-तीन दिन तक जारी रहा; इसके बाद स्थिति सामान्य हो गई। एक दिन पण्डित रामनारायण वैद्य जी, पं.सूर्यदेव शर्मा तथा कुछ अन्य सेवकों ने श्री प्रभु से स्वास्थ्य निरीक्षण हेतु बम्बई चलने के लिए निवेदन किया, किन्तु आपने

कहा-अब हम ठीक हैं। श्री पीताम्बरा माई की कृपा से और भी ठीक हो जाएंगे। फिर शरीर के अन्दर की ओर इशारा करते हुए कहा-इसने शरीर की कभी परवाह नहीं की है। आपके ही भक्त वैनीमाधव शास्त्री 'अश्विनी कुमार' (तत्कालीन राज्यपाल मध्य प्रदेश के आयुर्वेद चिकित्सक) और इन्दौर के वैद्य रामनारायण शास्त्री की औषधि कुछ सप्ताहों तक चलती रहीं। इसी मध्य आपकी अस्वस्थता का समाचार सुनकर एक दिन जगत्गुरु शंकराचार्य, श्री स्वरूपानन्द जी श्री स्वामीजी के दर्शनों को आए। उन्होने श्री महाराज जी से निवेदन किया-हे महाराज ! आप संकल्प लीजिए, आपके लिए कोई कार्य कठिन नहीं है। हम लोगों को अभी आपके मार्गदर्शन की बहुत अवश्यकता है। आपके पश्चात् हमें इस धरा पर कोई ऐसा दिखाई नहीं देता जो अंधेरे में भटके हुओं को प्रकाश की ओर ले जा सके। यह सुनकर प्रभु ने कहा-संकल्प शरीर जैसे नाशवान वस्तुओं के लिए नहीं लिया जाता। इस शरीर के भोगों को तो इस शरीर द्वारा अवश्य ही भोग लेना चाहिए। हम जिस काम के लिए यहाँ बैठे थे, वह काम पूरा हो गया है। गुरु का सत्य स्वरूप शरीर नहीं है। वह तो इस शरीर में रहने वाली ज्ञान आदि शक्तियाँ है जो अविनाशी हैं और सदैव शिष्य का मार्गदर्शन करती रहती हैं। इस नश्वर शरीर के लिए क्या दुःख ? जगत्गुरु शंकराचार्य श्री स्वरूपानन्द जी महाराज जी के निकट कुछ देर और बैठे और उन्होने अपनी कुछ शंकाओं का समाधान किया। फिर उनके द्वारा नरसिंहपुर गोटेगाँव में बनाए जा रहे भगवती त्रिपुर सुन्दरी के विषय में पूजा और तीर्थ पात्रों के विषय में जानकारी ली और श्री प्रभु को प्रणाम कर वे प्रस्थान कर गए। कुछ दिनों बाद साँस की शिकायत हुई। दिन में १०-१५ बार साँस उखड़ने लगी। एलोपेथिक और आयुर्वेदिक औषधियों का कोई लाभ नहीं हुआ। दतिया के सिविल सर्जन अमरसिंह परिहार ने श्री प्रभु से दिल्ली जाकर स्वास्थ्य परीक्षण के लिए कहा। श्री महाराज ने डॉ.के निवेदन पर दिल्ली चलने को अपनी

स्वीकृति दे दी। श्री प्रभु अपने भक्तों के साथ कार द्वारा दिल्ली रवाना हुए। धौलपुर में कुछ देर महाराज जी के सेवक श्री भगतराम के यहाँ रुके। हे कृष्ण गोविन्द ! आपके धौलपुर पधारने की सूचना बिजली की तरह फैल गयी। सबको दर्शन देते हुए दिल्ली पहुँच गए। अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान के डॉक्टरों ने तय किया कि आपके गुर्दे काम कम कर रहे हैं। अस्तु आपको डायलेसिस पर रखना चाहिए। सप्ताह में एक बार डायलेसिस होने लगा और इस प्रकार मशीन से शरीर का ख़ून साफ़ करने लगे। श्री प्रभु के दिल्ली आने की ख़बर फैल चुकी थी, अस्तु भक्तगण अस्पताल में दर्शन के लिए आने लगे। बीच-बीच में आप कहा करते बीमारी भी कुछ सिखा जाती है। हम लोग यहाँ एकान्त में आ गए हैं, मौक़ा लगा है, इसलिए सीख लेना चाहिए। सायँकाल ५ से ६ बजे तक कार द्वारा भ्रमण भी होने लगा। जहाँ भी जाते दर्शनार्थियों की भीड़ लग जाती। हे राज राजेश्वर ! आप जहाँ भी रहेंगे जन-समूह आपके साथ रहेगा और ऐसा ही होता था। आप दीन-दुःखी और ग़रीबों के सदैव हितैषी हैं। अपने सेवकों को निरन्तर अपने ध्यान की परिधि में रखते हैं। अखिल भारतीय आयुर्विज्ञान संस्थान, दिल्ली तीर्थ स्थल बना हुआ है। रोगियों से कहीं अधिक भीड़ दर्शनार्थियों की होती है। सम्पूर्ण देश से शिष्य लोग अपने जीवनदाता के दर्शनों को आ रहे हैं। उधर प्रभु के दाढ़ी और सिर के केश काफ़ी बड़े हो गए हैं। प्रत्येक तीन माह पश्चात् होने वाले क्षौर कर्म का समय पूर्व में ही निकल चुका है। सेवक प्रभु से कोई नाई बुलवाने के लिए आज्ञा माँग रहे हैं। परन्तु गणनायक मौन हैं। कई दिन आज्ञा माँगी गई परन्तु आप सदैव की भाँति मौन धारण किए रहे। कोई नहीं समझ सका कि इस विषय में मौन साधना का क्या तात्पर्य है। तभी एक प्रातः दर्शनार्थियों की पंक्ति में एक दुबला-पतला व्यक्ति हाथ बाँधे पीछे खड़ा अपने नम्बर

की प्रतीक्षा कर रहा है। दूर से ही प्रभु की दृष्टि उस पर पड़ी और सर्वात्मा ऊँचे स्वर में बोले-तुम आ गए और अपना सामान भी साथ लाए हो ? उस व्यक्ति ने दूर से ही उत्तर दिया-जी महाराज ! और सामान भी लाया हूँ। उसका नम्बर आने पर उस व्यक्ति ने प्रभु को प्रणाम किया तो प्रभु ने कहा-अच्छा ! सुबह अपना काम करना। इस परिसंवाद को सुनने वाले दर्शनार्थी आश्चर्य में पड़ गए। जो सेवक उस व्यक्ति को जानते थे, उसे वहाँ उपस्थित देखकर असमंजस में पड़ गए। वह व्यक्ति दतिया निवासी दुर्गाप्रसाद सेन नाई था जो सदैव ही श्रीनाथ का क्षौर कर्म किया करता था। अब अंतिम बार होने वाले इस कर्म को भी वे अपने उसी हज्जाम से कराना चाहते थे और इसीलिए उन्होने अन्य किसी नाई को लाने की आज्ञा नहीं दी। हे वासुदेव ! अगले प्रातः आपने अपना क्षौर कर्म दुर्गाप्रसाद सेन के हाथों ही सम्पन्न कराया और उसका जीवन धन्य हो गया। उसने जब प्रारंभ से ही आपके केश सँवारे, उसके बाद उस धर्मात्मा ने अपना पुश्तैनी धंधा ही बंद कर दिया, सिर्फ़ आपके ही बाल वर्ष में चार बार बनाता। जीविका के लिए शिक्षक के पद पर उसकी नियुक्ति हो गई। हे नरहरि ! आपने इस भक्त का कितना ख़्याल रखा। आपकी इस कृपा का वर्णन करने में सरस्वती भी थक गई है। हे नन्दिकेश्वर ! जिसने एक बार भी कहा, हे प्रभो ! मैं तुम्हारा हूँ, मुझे अपनी शरण मे ले लीजिए, उसको निश्चय ही आप अभयदान प्रदान करते हैं। उरई से माणिकचन्द्र शर्मा तथा गोपालदास दर्शनों के लिए आए। श्रीगुरु आपने कहा-तुम आ गए बैठो और अपनी गोद्दी में खींच लिया। रेवाराम दर्शन के लिए आए, जैसे ही प्रणाम किया, श्री प्रभु ने पूछा-मास्टर ! तुम इतने दिनों बाद क्यों आए। मास्टर ने उत्तर दिया-महाराज मेरी पूजा की ड्यूटी थी। श्री प्रभु ने उनको बहुत सारे फल खाने को दिए और कहा-यहाँ बैठकर खाओ। कहाँ तक लिखा जाय ? ऐसा लगता था कि अस्पताल में कोई मेला लग गया हो। एक दिन बाबा

रामदास आए और जैसे ही प्रणाम किया, श्री प्रभु ने पूछा-कौन है ? किसी ने कहा बाबाजी हैं। हे श्यामसुन्दर ! आपने बाबाजी से कहा-तुम यहाँ क्यों आए हो तुम्हें तो स्थान पर ही रहना चाहिए था, माता की पूजा आदि देखनी थी। हे प्रभु आपको माई की पूजा आदि का कितना ध्यान रहता, अस्वस्थता में भी आप कितना ध्यान रखते थे। इसी बीच राजमाता विजयाराजे सिंधिया ने एक डायलिसिस मशीन ग्वालियर मेडिकल कॉलेज को दान स्वरूप दे दी और ग्वालियर मेडिकल कॉलेज में डायलिसिस यूनिट की स्थापना हो गई। इधर झाँसी के वैद्य जी पंडित रामनारायण ने झाँसी मेडिकल कॉलेज में एक डायलेसिस मशीन दान दे दी। इस व्यवस्था के पीछे यह उद्देश्य था कि श्री प्रभु दतिया से ग्वालियर झाँसी जाकर डायलिसिस करा लिया करेंगे। कई बार श्रीमुख से यह कहते सुना अब हमारा कार्य पूरा हो गया है। कोई विद्वान दर्शन करने आता था तो उन्हें तुरन्त बुलाकर अपने चरणों में बिठा लेते थे। चाहे वे किसी भी अवस्था में हों। डॉ.प्रभुदयाल अग्निहोत्री अपनी अमेरिका यात्रा के पूर्व श्री प्रभु के दर्शनार्थ आए। थोड़ी देर तक शास्त्र चर्चा हुई, प्रसाद स्वरूप कुछ फल आदि दिए फिर कहा-अग्निहोत्री जी ! आप विदेश जा रहे हैं, भारतीय संस्कृति का प्रचार करना। मई महिने की ८ ता. को ज्योतिर्मठ के जगत्गुरु शंकराचार्य, श्री स्वरूपानन्द जी महाराज श्री प्रभु के दर्शनार्थ पधारे। आते ही कुशल क्षेम पूछा फिर सेवकों की ओर संकेत कर कहा-श्री महाराज आप तो सब लोगों को सेवा का मौक़ा दे रहे हैं। आप चाहें तो स्वयं को आप स्वस्थ कर लें। राज राजेश्वर मुस्कराकर बोले-इस शरीर के रख-रखाव के लिए चिंता नहीं की गई। इधर कभी सोचा हीं नहीं। स्वरूपानन्द जी ने कहा-हे स्वामी ! आपकी कृपा और लीलाओं का वर्णन करने में मैं असमर्थ हूँ। शास्त्रों में लिखा है-जो स्वयं ही ब्रह्म हैं, वह नाम रूप

से परे होता है। मुझे याद है कि नरसिंहपुर में भगवती के मंदिर की प्राणप्रतिष्ठा, यंत्र की स्थापना, पूजा पद्धति आदि की विस्तृत जानकारी के लिए जब मैं दतिया आया था, उस समय प्रभु ! आप बहुत अस्वस्थ थे। तब भी आपने मुझे डेढ़ घंटे का समय दिया था। सच्चे सन्त लोक संग्रह का ही कार्य करते हैं। संतों की महिमा का गुणगान करते हुए और श्री प्रभु को प्रणाम करके स्वरूपानन्द जी महाराज चले गए। इधर महाराज जी ने एक लीला और की। आपके परम भक्त मेजर दुस्सु जो आपकी कृपा से जीभ के नीचे के ततुवे को कटाने से बच गये थे, उन्होने आपसे निवेदन किया-हे स्वामी ! दिल्ली में काली माता का एक बड़ा सुन्दर मंदिर है। सायंकाल भ्रमण के समय वहीं चलें। कुछ दिनों से मुझे अपने ह्दय में बार-बार आवाज़ सुनायी देती है-मेरे स्वामी को काली मंदिर लाओ, काली मंदिर लाओ। हे जगदीश्वर! मैनें यह बात आपको अभी तक नहीं बताई थी क्योंकि आपको डॉक्टरों ने आराम करने के लिए कहा है। शास्त्रों में लिखा हुआ है-कि गुरु से कोई बात नहीं छुपाना चाहिए। श्री गुरु महाराज यह सुनकर बड़े प्रसन्न हुए और उन्होने भक्त की प्रार्थना स्वीकार कर ली। संध्या समय भक्तगणों सहित काली मंदिर पहुँचे। अभी वह दरवाज़े पर ही पहुँचे थे कि पुजारी जो अन्दर आरती कर रहा था एकाएक चिल्लाता हुआ भाग कर आया, वह पुजारी बड़े ज़ोर-ज़ोर से चिल्ला रहा था - सिद्ध आया, सिद्ध आया" और आपके चरणों में गिर पड़ा। वह आपको देखता हुआ और आपकी परिक्रमा कर बोला- हे महाराज ! आपने बहुत इन्तिज़ार कराया, फिर अन्य सेवक व भक्तों की ओर मुड़कर बोला-तुम लोग जानते हो ये कौन हैं, हम जानते हैं। हम कामरूप देस का कालीभक्त, हमको हमारी देवी ने बताया-सिद्ध आया-सिद्ध आया और ऐसा ज़ोर-ज़ोर से बोलता रहा। फिर उसने हे प्रभो ! दयानंद ! आपकी आरती की।

इस प्रकार काली मन्दिर के पुजारी पर कृपा कर वापस अस्पताल को पधार गए। उसी दिन संध्या को काली मन्दिर से वापस लौटने के बाद आप इतने प्रसन्न थे कि आपके मुखारविन्द को देखने से ऐसा लगता था कि सैकड़ों सूर्य की किरणें एक साथ, जिनमें प्रखरता नहीं सौम्यता थी, निकल रही हैं। आप भाँति-भाँति से अपने प्रिय भक्तों से विनोदपूर्ण चर्चाएँ करने लगे। आपने अपने नर्मदा तट की यात्रा का वर्णन करते हुए कहा- कि एक साधु बैठा हुआ गुनगुना रहा था- "दिल न फटा जो दुनिया से, तो कान फड़ाना क्या मतलब। दिल जो फटा इस दुनिया से, तो कान फड़ाना क्या मतलब।।" **विरक्तता इस दुनिया से होनी चाहिए जो कान फड़ाने से नहीं होती है। यदि विरक्तता आ जाए तो कान फड़ाने से कोई प्रयोजन नहीं है। इसी दौरान आचार्य भागवतानंद, श्री करपात्री जी महाराज, पं. कमलापति त्रिपाठी, उपराष्ट्रपति श्री बी.डी.जत्ति, राजा दिनेशसिंह, अटलबिहारी बाजपेयी आदि-आदि ने भी श्री प्रभु दर्शन का लाभ प्राप्त किया। मई माह के दूसरे सप्ताह में संस्थान से डिस्चार्ज होकर हवाई जहाज़ द्वारा श्री प्रभु ग्वालियर प्रातः पहुँचे। विमानतल के पास एकत्रित जन-समूह श्री प्रभु के दर्शनार्थ हर्षोल्लास के साथ माई और महाराज की जय बोल रहा था। हे तपोधन ! अपार भक्त समूह ने आप श्री के दर्शन किए। कार द्वारा दतिया आश्रम पहुँचे। वहाँ भी अपार जन समूह बड़ी उत्सुकता से श्री प्रभु के दर्शन हेतु खड़ा था। सभी पण्डितों ने स्वस्ति वाचन से महाराज जी का स्वागत किया। हे नारायण! हे गोविन्द! स्वस्ति वाचन से आप इतने आनन्दित हुए कि जब तक पण्डितों ने स्वस्ति वाचन पूरा नहीं कर लिया, तब तक आप कार में ही विराजमान रहे। आते ही आपने माता पीताम्बरा के दर्शनों की इच्छा की, मन्दिर खोला गया उसी समय बिजली चली गई, किसी सेवक ने कहा-प्रभु ! बत्ती चली गई है, जगदीश्वर ने**

तुरन्त उत्तर दिया-हमें उस बत्ती से क्या करना है। दर्शन तो दूसरी लाइट से करेंगे। मन्दिर में

तुरन्त उत्तर दिया-हमें उस बत्ती से क्या करना है। दर्शन तो दूसरी लाइट से करेंगे। मन्दिर में माई के सामने पद्मासनस्थ होकर माता की ओर देखा। उस समय माता की दिव्यता देखते ही बनती थी। महाराज जी ने माई की ओर देखा तथा माई ने महाराज जी की ओर। अपने श्रीमुख से माई की जय बोली, सभी ने उनके बोल का अनुसरण किया। उस समय एक विचित्र हर्ष का वातावरण था जो देखते ही बनता था। आज आश्रम पर पहले की भाँति ही रौनक़ थी। श्री प्रभु व्हील चेयर पर विराजकर आश्रम में घूमने निकले। रास्ते में बाबूलाल गुप्त से श्री प्रभु ने पूछा-कहो बाबू क्या हाल है। बाबूलाल बोले-हे देव ! आपकी कृपा से हम लोग कृत्य-कृत्य हुए तथा हमारे सभी मनोरथ सफल हुए हैं। बाबा रामदास जी से कहा-कहो रामदास कैसे हो ? पूजा पाठ ठीक चल रहा है। रामदास जी ने कहा प्रभो ! श्री गुरु का आदेश पालन ही हमारे जीवन का एक मात्र कर्तव्य है। हे सच्चे सन्त! आप ही हमारी आत्मा हैं, आप ही परमात्मा हैं। हमारा धन्य भाग्य जो आपके चरणों में हमें शरण मिली। फिर धूमा माई और परशुराम जी के दर्शन कर वापस बगिया में आ गए। बड़ी भीड़ थी। सेवकों से श्री प्रभु आपने कहा-स्थान बन गया है, सब मिलकर रहना, पूजा-पाठ करते रहना। प्रातः काल की चाय लेकर सदैव की भाँति बरामदे में विराज गए और फिर सेवक मोतीलाल से कहा-मास्टर! दिल्ली से जो पुस्तकें लेकर आए थे उन्हें ले आओ। पुस्तकें आने पर अन्य सेवकों की ओर दृष्टि फेरते हुए कहा-देखो ! हम दिल्ली ऐसे ही नहीं गए थे। कैसी कैसी अभूतपूर्व पुस्तकें आ गई हैं। आगे बोले- क्या तुम लोग जानते हो कि अच्छी पुस्तकें बहुत मूल्यवान होती हैं ? इनको दूसरों को देने वाला मूर्ख होता है और यदि दी हुई पुस्तक वापस आ जाए तो वापस करने वाला महामूर्ख होता है। रात्रि समय सेवकों से विनोद भी करते रहे तथा बगिया में

ही लेट गए। निर्धारित समय पर डायलेलिस के लिए ग्वालियर जाना था। आपके शिष्य बदनसिंह बड़े उदास मन से श्री चरणों में बैठे हैं। प्रभु ने उनकी ओर देखकर अपना अन्तिम संदेश दिया। ठाकुर ! तुम्हें यहाँ से बहुत मिला है। कभी इसका अभिमान मत करना। तुमको यहाँ से इतना अधिक इसलिए मिला है कि तुम्हारा धर्म ही यही है। मथुरा-वृन्दावन इत्यादि स्थानों पर तुम्हारे लिये कुछ नहीं है। इसलिए तुमको जो बताया गया है उसको करते रहना, छोड़ना नहीं। यह सुनकर बदनसिंह ने प्रभु चरणों पर अपना सिर रख दिया और फबक फबक कर रोने लगा। तभी प्रभु ने पुनः बदनसिंह के सिर को अपने घुटनों से लगाकर कहा-तुम्हें रोना नहीं चाहिए। अपने आसन पर मैंने अपनी चरण पादुकाएँ तुम्हारे हाथों से रखाई हैं। तुम्हें याद होगा कि जिस दिन पहले ही पहल ये पादुकाएँ आसन पर रखाई थीं तो वृजनन्दन शास्त्री तुम पर नाराज हुए थे और उन चरण पादुकाओं को उठाकर छिपा दिया था। तब मालूम हो जाने पर हमने वृजनन्दन को डाँटा था और दुबारा चरण पादुकाओं को मँगवा कर आसन पर तुम्हारे ही हाथों से रखवाया। ये चरण पादुकाएँ ही तुम्हें सहारा देंगी और कल्याण करेंगी। ऐसा कहते हुए आपने बदनसिंह को अपने सन्देश के रूप में आशीर्वाद दिया। प्रभु की ऐसी कृपा जिन भक्तों पर भी हुई वे सब घटनाएँ इस ''श्री स्वामी कथासार'' का अंग बन गई हैं। ऐसे कृपा पात्र भक्तों के वंश अनन्त पीढ़ियों तक धन्य भाग्य होते रहेंगे। आनेवाली नस्लें तुम पर नाज़ करेंगी ऐ हम असरो। जब उनको बतलाओगे तुमने महाराज को देखा था।। बैद्यनाथ दवाइयों की कम्पनी के सञ्चालक रामनारायण शर्मा वैद्य ने प्रभु की सेवा के लिए प्रभु से विनती कर एक गणेश नामक कुर्मी को नियुक्त कर दिया। उसने आश्रम पर केवल एक दिन कार्य किया और दूसरे दिन सर्वज्ञ प्रभु ने उसको आश्रम से हटा दिया। उसके बाद

लिए प्रभु से विनती कर एक गणेश नामक कुमी को नियुक्त कर दिया। ...
एक दिन कार्य किया और दूसरे दिन सर्वज्ञ प्रभु ने उसको आश्रम से हटा दिया। उसके बाद

राजस्थान प्रदेश में कोटपुतली नगर के निकट कांसली नामक ग्राम के रहने वाले हनुमान नामक एक यादव तरूण को आपकी सेवा में आश्रम पर लाया गया। हनुमान अत्यन्त धर्मनिष्ठ और सेवा भाव से ओत-प्रोत था। कुछ ही समय में श्री स्वामीजी महाराज हनुमान के सेवाकार्य से बहुत प्रसन्न हो गए और उसके अन्तर में छिपे अध्यात्म को जानते हुए उसको मन्त्रदीक्षा दे दी। मन्त्र प्राप्त कर उसने अत्यन्त श्रृद्धा और निष्ठापूर्वक प्रभु की सेवा के अतिरिक्त जप भी प्रारंभ कर दिया। आप ने हनुमान को कुछ रहस्यात्मक निर्देश भी दिए जिनसे वह एक महीने सेवा व जप करके कहीं गुप्तवास को चला गया और बहुत दिनों तक इन्तिज़ार के बावज़ूद भी लौटकर आश्रम नहीं आया। जब प्रभु से उस हनुमान के विषय में कोई चर्चा होती तो वे इतना ही कहते, अब वह यहाँ नहीं आएगा। उसके न आने के रहस्य को कोई नहीं जान सका। उस रहस्य को केवल श्री चरण ही जानते थे। फिर इस घटना के लगभग बारह वर्ष बाद वह अपनी जन्मभूमि की ओर आया। उस समय वह प्रसिद्ध महात्मा हो गया था और उसके साथ कुछ और साधु मण्डली भी थी। वह अपनी जन्मभूमि आकर ग्राम से बाहर बने एक चौबारे पर ही अपने साथियों सहित रूक गया। गाँव के लोगों ने यह भली-भाँति पहचान कर कि वह हनुमान यादव है, उससे गाँव में ही ठहरने की प्रार्थना की। परन्तु वह गाँव में अन्दर जाने को तैयार नहीं हुआ क्योंकि उसके गुरुदेव द्वारा गाँव के अन्दर प्रवेश करने की आज्ञा नहीं दी गई थी। हनुमान के कुछ अन्य सगे भाई भी थे। वे तथा अन्य परिवारी हनुमान के आगमन से अत्यन्त प्रसन्न हुए। हनुमान ने अपने भाइयों से कहा कि वह अपने हिस्से की ज़मीन को बेचकर एक भण्डारा करना चाहता है। उसके भाइयों ने कहा कि वह अपने ही हिस्से की नहीं बल्कि उनके हिस्से की भी ज़मीन बेचकर भण्डारा कर सकता है। यह बड़ी प्रसन्नता की बात थी। उसके भाइयों ने सहर्ष उसके हिस्से को बिकवाकर एक अत्यन्त शानदार

भण्डारा करा दिया। भण्डारे के पश्चात् वह पुनः अज्ञातवास को चला गया। भण्डारे के पश्चात्
चमत्कार यह हुआ कि उसके भाईयों की ज़मीन में प्रतिवर्ष बहुत अच्छी फसल होने लगी और आज
उसके सभी भाई धनपति हो गए। इस घटना के पश्चात् लोगों की समझ में आई कि हनुमान के
पुनः दतिया आश्रम पर न आने का कारण क्या था। हे कारण के कारण श्री स्वामीजी
महाराज ! आप अन्तर्यामी हैं और प्रत्येक के भाग्योदय के समय को जानने वाले हैं। समय आने
पर अनेक बहानों से आप अपने भक्तों को प्राप्त होकर उनका कल्याण कर देते हैं। आज फिर
डायलेसिस के लिए ग्वालियर प्रस्थान करना था, इसलिए निवेदन किया गया, दर्शनार्थियों की
बहुत भीड़ थी। गवालियर जाने की तैयारी कर ली गई। अपने अंतिम उपदेश में हे विश्वगुरु !
आपने सबसे यही कहा-सब मिलकर रहना, पूजा-पाठ नियमित करते रहना। सूर्यदेव जी से बोले-
चलो भाई, अब चलाचली का समय है। माई की पूजा होती रहे, इसका ध्यान रखना। माई की पूजा
दीक्षित पुजारियों द्वारा पद्धति के अनुसार होती रहे तो माई हज़ार वर्ष तक रहेंगी। इसका पूरा
ध्यान रखना। किन्तु ग्वालियर में डायलेसिस ठीक नहीं हुआ। श्री प्रभु के हाथ में लगा शंट पूरी
तरह बन्द हो गया था। बम्बई से स्थायी फिस्चुला के लिए विशेषज्ञ, डॉ.सुरेश त्रिवेदी, प्रमुख किडनी
यूनिट बाम्बे अस्पताल, और डॉ.देवेन्द्र सक्सेना आए। उन्होने श्री प्रभु को देखकर निर्णय लिया कि
उन्हें फिस्चुला के लिए बम्बई चलना चाहिए। श्री प्रभु ने सेवकों के इस निवेदन को ठुकराया नहीं
और यह कहते हुए कि यह शरीर तो पञ्चायती सम्पत्ति है, अपनी सहमती दे दी। बम्बई जाने के
लिए व्हाया दिल्ली प्रस्थान किया गया और श्री प्रभु विमान द्वारा दिल्ली से बम्बई पहुँच गए। सागर
सदैव से महान् पुरुषों के चरणों को धोकर पीता रहा है। त्रेता में उसने भगवान् राम का चरणामृत

पिया सेतु बंध रामेश्वरम् पर। द्वापर में उसने भगवान् कृष्ण का चरणामृत लिया द्वारकापुरी में। अब वह कलयुग में अवतरित करुणावतार राष्ट्रगुरु श्री स्वामीजी महाराज के चरणामृत-पान के लिए लालायित हुआ। राष्ट्र-रक्षा अनुष्ठान के समय राष्ट्र ने जिनको राष्ट्रगुरु की उपाधि से अलंकृत किया था - वे ही राष्ट्रगुरु अचानक महासागर की कामना की पूर्ति के लिए मई सन् १६७६ ई. के अंतिम सप्ताह में बम्बई महानगरी में पहुँच गए। महासागर कई दिनों तक नित्य प्रति उनके चरणारविन्दों को धो-धोकर पीता रहा। श्री प्रभु ने मोती मास्टर से कहा-हम लोग बम्बई आ गए हैं, बहुत दूर है। यहाँ हम इसके पहले सन् १६२६ में आए थे। आज सबेरे अन्य औषधियों के अलावा श्री प्रभु को ग्लुकोज दिया जा रहा था कि अचानक ख़ूब ज़ोर से साँस उखड़ी। साँस का उपचार किया गया थोड़ा अन्तर आया। पैर में लगे शंट को डॉक्टरों ने देखा तो पाया कि वह शंट भी बंद हो गया है। हाथवाला शंट तो पहले से ही ख़राब हो गया था। अब डायलेसिस की समस्या हो गई कि यह कैसे किया जाय। वहाँ के विशेषज्ञ डॉ.मणि, डॉ.सुरेन्द्र मिश्रा ने पैरीटोनियल डायलेसिस का सुझाव दिया। जब श्री प्रभु को डायलेसिस यूनिट ले जाया जा रहा था तब उस अकाल महापुरुष ने सेवकों और भक्तों की ओर संकेत कर अंतिम संदेश दिया कि देखो-हो सकता है कि इस भौतिक शरीर से हमारा अलगाव हो जाय, हम सूक्ष्म शरीर में सब लोगों को देखते रहेंगे और सबके साथ रहेंगे, कोई भी घबराना नहीं।" डॉक्टरों की कोशिश के बावज़ूद डायलेसिस नहीं हो सका। लीला नटवर, भविष्य को जानने वाले अखिलेश्वर ने प्राणों को ब्रह्माण्ड में चढ़ाने की प्रक्रिया प्रारंभ की, बैखरी को पुनः परा में परिवर्तित किया तो उनका बोलना धीरे-धीरे बंद हो गया। ऐसा लगता मानो प्रगाढ़ निद्रा में हों। दूसरे दिन रक्तचाप घटकर ८० हो गया। डॉक्टरों ने उसी दिन (हीमोडायलिसिस) रखने के लिए सोच लिया था, किन्तु अचानक रक्तचाप कम हो गया ८० पर

पहुँच गया। यह बात लगभग दिन के १ बजे की है। हृदयगति बिल्कुल मन्द पड़ गयी थी। उसी समय तुलसीदल मिला हुआ एक कटोरी गंगाजल उनके श्रीमुख में डाल दिया गया। उनका योग पूर्ण हुआ, प्राण ब्रह्माण्ड में स्थिर हो गए और उनकी हृदयगति बिल्कुल बंद हो गई। उन्होने प्राणों को बह्मरंध्र में रोककर समाधि ले ली। यह स्थिति देखकर डॉक्टरों ने अपने अस्त्र ढीले कर दिए और ब्रह्मलीन होने की घोषणा कर दी। वह दिन के एक बजकर पाँच मिनट का समय था। १ बजकर ५ मिनट पर उसी समय दतिया में आश्रम पर पूज्य योगेश्वर सूक्ष्म शरीर से बम्बई में शरीर धारण करते हुए भी दिखाई दिये उनका स्वरूप ठीक वैसा ही था जैसा स्वस्थता के समय था। इस स्वरूप को शंकर नाम के एक भक्त ने बस स्टैण्ड को जाने वाली सड़क से आश्रम की दीवाल के पास देखा। महाराज जी हाथ में कमण्डलु लिये दीवाल के पास घूम रहे हैं। उसके मुख से यकायक निकल गया कि स्वामीजी बम्बई गए हैं स्वामीजी तो यहाँ आश्रम पर हैं। वह भक्त आश्रम पर आकर महाराज जी के दर्शनों के लिए उन्हें ढूंढने लगा जब उसे पता लगा कि श्री प्रभु अभी बम्बई से वापस नहीं आए हैं तो वह भौंचक्का रह गया और उसने जो देखा था सब लोगों को कह सुनाया। बाद में महानिर्वाण का बम्बई से टेलीफोन आया। टेलीफोन उस समय पूज्य महाराज जी की बीमारी का हाल जानने के लिए आश्रम पर भी लगवा दिया गया था। आल इंडिया रेडियो दिल्ली और भोपाल से भी उनके महानिर्वाण होने का समाचार सुनाया गया था। दूसरे दिन प्रातः पाँच बजे महाराष्ट्र सरकार के विशेष विमान द्वारा श्री प्रभु अपने सेवकों को साथ लेकर समाधिस्थ अवस्था में बम्बई से ग्वालियर आ गए। यहाँ एकत्रित जनसमूह अपनी आँखों में अश्रु लिए गर्दन नीचे झुकाए शोकाकुल खड़ा था। श्री प्रभु के दर्शनार्थ आज सब लोग शोकाकुल और

समाधिस्थ अवस्था में बम्बई से ग्वालियर आ गए। यहाँ एकत्रित जनसमूह अपनी आँखों में अश्रु लिए गर्दन नीचे झुकाए शोकाकुल खड़ा था। श्री प्रभु के दर्शनार्थ आज सब लोग शोकाकुल और

रुदन अवस्था में हैं। प्रभुपाद वातानुकूलित स्वर्ण सिंहासन पर प्रतिष्ठित द्रुतगति पूर्वक भक्त मण्डली सहित जगदम्बा के पास दोपहर दतिया आश्रम पहुँच गए। श्री महाराज का मुख मण्डल दर्शनार्थ खोल कर रखा था। वे एकदम शान्त थे। भक्त समुदाय बहुत था। ऐसा लगता था कि श्री सद्गुरुजी समाधि से अब उठने ही वाले हैं। चारों ओर अश्रुधारा प्रवाहित थी। प्रभु को माई के सामने कुसुमाच्छादित सुन्दर मंच पर भक्तों के दर्शनार्थ एवं श्रद्धांजलि अर्पण करने हेतु लाया गया। समाधि देने के पूर्व श्री प्रभु को स्नान हेतु बगिया में ले आए। स्नान कराकर लँगोट आदि वस्त्र बदले। उसी समय एक धीमी ध्वनि हुयी, देखा तो सिर के मध्य भाग में माचिस की तीली में लगे लोशन के बराबर छिद्र हो गया था। एवं कोरा वस्त्र जो पहनाया गया था उस पर भी एक काफ़ी बड़ा पवित्र मल चिन्ह हो गया और इसी समय प्राण त्याग किए। वे ठीक २८ घंटे तक प्राणों को रोक कर समाधिस्थ रहे। पुनः उनको नये वस्त्र पहनाए गए। पुष्प माला और चन्दन आदि से आभूषित कर श्री गुरुदेव को पुनः जगदम्बा श्री बगलामुखी के सम्मुख लाया गया। भगवती ने बड़े ही प्रेम पूरित नयनों से अपने तपःपूत को देखा। ऐसा लगा उसने भी वियोग में दो आँसू टपकाए। तत्पश्चात् प्रभु को समाधिस्थल पर लाया गया जहाँ स्वतः ही उनका पद्मासन लग गया। तब सविधि अन्त्येष्टि संस्कार कर प्रभुपाद के पार्थिव शरीर को समाधिस्थ कर दिया गया। इस प्रकार वह महान् आत्मा पुनः महाविन्दु में ही विलीन हो गई। गीता में भगवान् ने कहा है - 'अभ्युत्थानम धर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम्।' इस वचन के अनुसार ऐसी महान आत्माएँ, महावतार, संसार में धर्म की रक्षा और सत्य के प्रकाश के लिए युग-युग में आया करती हैं। इस धरा पर अपनी जीवन लीला को एक अमर इतिहास के रूप में छोड़ जाती हैं। जिससे आगे आने वाली पीढ़ियाँ प्रेरणा

प्राप्त कर अपने जीवन को धन्य करती रहती हैं। श्री पीताम्बरा भगवती के अद्‌भुत रस में यह सारा परिसर डुबा हुआ है और श्री स्वामीजी के तपोबल से भव्य दिव्य कल्याणकारी शक्ति के साथ तद्रूप होकर मौन हुआ है। तद्रूपता की अर्थात् एकान्त की विलक्षण चरम सीमा अर्थात् मौन। गुरोऽस्तु मौनं व्याख्यानम्, शिष्यस्तु च्छिन्न संशयः। "श्री स्वामी कथासार" के इस अध्याय को श्रद्धापूर्वक जो नित्य पाठ और श्रवण करेगा वह सदगति प्राप्त करेगा इसमें संशय नहीं है।

यह अध्याय भगवती श्री पीताम्बरा को अर्पित है।

।। इति एकविंशोऽध्याय समाप्त।।

।। श्री गणेशाय नमः।।

श्री स्वामी कथासार

महानिर्वाण के बाद

श्री गणेशाय नमः। हृदय पटल वह स्वच्छ दर्पण है जहाँ अवतारी महापुरुष के अन्तर्धान होने के बाद उनकी स्मृतियाँ अंकित रह जाती हैं जिन्हें बार-बार देखने की उत्कण्ठा जागृत होती है। वायुपुराण शैवागम सम्मत महेश्वर के लक्षण बतलाता है-"सर्वज्ञता तृप्तिरनाधि बोधः स्वतंत्राः नित्यमलुप्त शक्तिः। अनन्तशक्तिश्च विभोर्विधिज्ञा षडाहुरङ्गानि महेश्वरस्य।।" हे स्वामी जी महाराज ! आप अपने स्थूल शरीर में कोई सामान्य ऋषि नहीं थे। आप तो साक्षात् महेश्वर ही थे वायुपुराण में कहे गए महेश्वर के सम्पूर्ण लक्षण आप में परिलक्षित थे। हाँ आप सामान्य दीखते अवश्य थे क्योंकि आपकी सामान्यता, सरलता और सर्वसुलभता के भीतर बड़ी असाधारणता, गंभीरता और महर्षिता का आवास था। निराडम्बरता आपके सब उपाधियों से परिमुक्त होने की परिचायक थी और सहस्र प्रवाहित समवेदना थी। हे वेद स्वरूप ! धर्म, दर्शन, तंत्र, योग और भक्ति शास्त्रों के विलक्षण प्रतिभावान मनीषी होने पर भी आपने निष्णातता को कभी चौराहों पर प्रदर्शित नहीं किया और न वैदिक संहिताओं, कल्पसूत्रों तथा अन्य आङ्गिक साहित्य तथा उपनिषदों के मर्मवेदी विद्वान होकर भी प्रभु के अपने वैदुषी या गंभीर स्वाध्याय से किसी को चमत्कृत करने की ही चेष्टा की। हे देशिक प्रवर ! अनेक सम्प्रदायों के आगमों, पूजोपचार विधानों

तथा गूढ़ साधनाओं के सिद्ध तत्त्वदर्शी होकर भी आपने कभी अपनी उपलब्धि या सिद्धि को प्रकाशित नहीं किया। शंकरपुरी की दीर्घ सरस्वतीसाधना के परिणाम स्वरूप होने वाले आपके विद्या के वैद्युत स्फुरण ने किसी के तेज़ को अभिमत करने की इच्छा नहीं की। सबको सदैव समान समझा। आप सभी को समान परामर्श देते, जप करो जप। तज्जपस्तदर्थभावनम्। यही दवा थी। यही नुस्ख़ा जिससे आप हर आर्त हर पीड़ित की चिकित्सा करते और 'श्रद्धावांल्लभतेमुक्तिम्', के अनुसार जो आपकी इस भिषज को मन से स्वीकार करता, उसका सेवन करता, वह वेदना से मुक्ति पाता। उसके कष्ट कटते, दुर्व्यसन छूटते, उसमें सद्वृत्तियों का उदय होता और धीरे-धीरे उसका व्यक्तित्व ही परिवर्तित हो जाता। ऐसे परिवर्तित व्यक्तित्व के बहुत से लोग आज सानन्द धरा पर विचरण कर रहे हैं। हे शान्त, मौन मसीहा ! आपके पास कोई द्विभाव, दुराव या भेदभाव नहीं था। वह दोहरा स्वरूप या मानदण्ड जो सम्पर्क में आने वालों को अन्तरङ्ग और बहिरङ्ग की श्रेणियों में बाँटता है और उनको पल-पल उनकी हीनता का बोध कराता चलता है। हे प्रभो ! हे अरिमर्दन ! आपने अपने भगवती माता के स्वरूप में कहा था-'त्रैलोक्यस्य हितार्थाय वधिष्यामि महासुरम्।' तीनों लोकों के हित के लिए मैं महा असुरों का वध करूँगी। 'इत्थं यदा-यदा बाधा दानवोत्था भविष्यति, तदा तदावतीर्याहं करिष्यास्यरिसंक्षयम्।' जब-जब संसार में दानवी बाधा उपस्थित होगी, तब-तब मैं अवतार लेकर शत्रुओं का संहार करूँगी। आपने बताया है कि संसार में फैलने वाली महामारी, रोग पीड़ाएँ और मनुष्यों के अन्तर में रहने वाले मल, वासनाएँ और दोष इत्यादि ही दैत्य और दानवी बाधाएँ हैं। इसलिए हे प्रभो ! इन सब रिपुओं से संसार को मुक्त करने के लिए ही आपने श्री पीताम्बरा पीठाधीश्वर राष्ट्रगुरु श्री स्वामीजी महाराज के रूप में इस

वसुन्धरा के अंक में अवतार ग्रहण किया। अपना कार्य पूर्ण कर, कार्य को आगे बढ़ने के लिए अपने भक्तों और शिष्यों को दिशा प्रदान करके आप अन्तर्ध्यान हो गए। आपकी स्मृतियाँ शेष रह गई जो आपके शिष्यों के अन्तःकरण पर छप गई हैं। आप अपनी जो आभा छोड़ गए हैं, उस आभा को देखकर सबका यह विश्वास है कि सर्वत्र आप ही व्याप्त हैं। इसलिए किसी को विश्वास नहीं होता कि आप अन्तर्ध्यान हो गए हैं और विश्वास हो भी क्यों ? क्योंकि अपने भक्तों का आर्तनाद सुनकर आज भी आप मूर्तिमान हो जाते हैं और सबका मार्ग दर्शन कर रहे हैं। हे प्रभो ! मनुष्य त्रुटियों का पुतला है। दानवी बाधाएँ उसके दिमाग़ी संतुलन को बिगाड़ने की कोशिश करती रहती हैं। कभी-कभी आपके परम भक्त भी इन बाधाओं के चक्कर में फँसकर विश्वास को डगमगाने लगते हैं तो आप स्वयं ही उनकी सहायता कर उनका धर्म भ्रष्ट होने से बचा लेते हैं। ऐसी ही घटना आपके प्रयाण के पश्चात् आपके परम भक्त धौलपुर निवासी भगत वैद्य की है। वे कहने लगे कि अब दतिया में क्या रखा है ? परम प्रभु तो चले गए। दतिया में अब जाने की कोई ज़रूरत नहीं है। एक दिन भगत जी और उनके बहनोई एक बस द्वारा ग्वालियर से धौलपुर की यात्रा कर रहे थे। बस जब चम्बल नदी के पास आई तो सड़क के दोनों और नदी के कटाव के कारण बड़े-बड़े कछार (गड्ढें) बने थे, ड्राइवर की ग़लती से उन गड्ढों में बस सौ फुट नीचे गिर गई। चारों ओर बड़ी करुणामय चीख पुकार होने लगी। इस दुर्घटना में ४० सवारियों की वहीं मृत्यु हो गई उन व्यक्तियों में भगत जी के बहनोई भी थे। जब बस गड्ढे में गिर रही थी, तो डरकर भगत जी ने आँखें बन्द कर ली। उन्होने देखा कि महाराज जी हाथ में त्रिशूल लिए हुए खड़े हैं और बोले- कोई चिन्ता मत करो, डरो मत। तुम्हारा भार मैंने ले लिया और तभी भगत जी को बड़े ज़ोरों का झटका लगा। उनकी कुछ हड्डियाँ टूटी और वे बस में फँस गए। वहाँ बड़ा दारुण दृश्य छा गया था।

धौलपुर के ही श्री स्वामीजी के एक अन्य भक्त प्रद्युम्न सिंह जैन जो उस समय राजस्थान सरकार में मंत्री थे, उन्हें दोपहर में सोते हुए स्वप्न देखा कि महाराज जी उन्हें उठा रहे हैं-और कह रहे हैं उठो भाई, भगत जी की बस दुर्घटना ग्रस्त हो गई है, उसकी सहायता करो। यह स्वप्न देखकर तुरन्त ही उन्होने भगत जी के घर टेलीफोन किया और अपना स्वप्न बताया। फिर वहाँ के कलेक्टर को फोन किया तो कलेक्टर ने कहा-हमारे पास तो दुर्घटना की कोई सूचना अभी नहीं आई है, हम अभी पता करते हैं। थोड़ी देर में ही दुर्घटना और उनके बहनोई की मृत्यु की सूचना आ गई। पूरे शहर में इतने लोगों के मर जाने से हा-हा-कार मच गया। भगतराम जी के छोटे भाई भगत जी वैद्य को अस्पताल ले गए। अर्द्ध चेतनावस्था में भगत जी देखते रहे कि श्री प्रभु हर समय साथ हैं। इन्होने उसी स्थिति में देखा कि महाराज जी डॉक्टरों को प्रेरणा दे रहे हैं कि अमुक दवाई दो, यह दवाई दो, वह दवाई दो और डॉक्टर वैसा ही कर रहे हैं। जब उनको पूरा होश आ गया तो धीरे-धीरे बताने लगे-मेरे प्रभु आए और मुझे मोटर से बाहर फेंक दिया। अभी भी यहाँ खड़े हैं। तथा कह रहे हैं, "ओ भगत, जगत् को ठगत" जो ज़रूरी भोग है वह तो भोगना ही पड़ेगा, लेकिन चिन्ता मत करो तुम्हारी जीवन रक्षा हो जाएगी। हे दीनानाथ ! हे भक्तवत्सल ! भगत जी पर नहीं वरन् आपने सब घायलों पर कृपा की। ठीक होने के बाद भगत कुटुम्ब-परिवार सहित दतिया आए और 'मणिपुरधाम' में आपके विग्रह के आगे रोते हुए बार-बार क्षमा माँगते रहे कि हे परमसिद्ध सच्चे सन्त ! मुझसे बड़ी भूल हुई, जो मैं यह कहता था कि दतिया में क्या रखा है। उन्होने रामायण की इस चौपाई को कहा-'प्रभु की कृपा भयौ सब काजू। जनम हमारौ सुफल भयौ आजू।।' छतरपुर के शिवनारायण खरे नाम के एक सज्जन वकालत का धंधा करते हैं। पहले वह दतिया में रहते थे और रोज़ महाराज जी के दर्शन करने आते थे। बाद में बड़े होने पर छतरपुर रोज़ी रोटी कमाने

थे और रोज़ महाराज जी के दर्शन करने आते थे। बाद में बड़े होने पर छतरपुर रोज़ी रोटी कमाने

के लिए चले गए और वकालत करने लगे। आप की इन पर बचपन से ही कृपा थी। वकील खरे की पत्नी भी महाराज जी की अनन्य भक्ति करती। एक दिन खरे ने स्वप्न में देखा कि महाराज जी कह रहे हैं-तुम्हारे इलाक़े में बहुत ग़रीब लोग रहते हैं, वे तरह-तरह की बीमारियों से ग्रस्त हैं, तुम दतिया से ज्योतिष्मती दवा ले जाओ और इन ग़रीब बीमारों को दो, ताकि लोग स्वस्थ हो जाएँ तथा ये अध्यात्म मार्ग में भी आ जाएँ। वकील खरे को स्वप्न पर विश्वास नहीं हुआ। लेकिन कुछ समय बाद इनको महाराज जी ने पुनः स्वप्न में आकर कहा-घबराओ मत और दवाई दो। खरे ने सोचा कि मैं पढ़ा लिखा वकील हूँ और ज़िला कांग्रेस का अध्यक्ष भी हूँ, दवाई देने से अगर फ़ायदा नहीं हुआ तो लोग मेरी हँसी उड़ाएँगे। वह झाँसी अपने रिश्तेदार रामकृष्ण वर्मा के पास इस विषय में परामर्श लेने आए। वर्मा ने कहा-स्वप्न पर अविश्वास मत करो तथा प्रभु की आज्ञा का पालन करो। फिर भी ये डरते रहे। एक दिन इनके एक पड़ौसी को तीन दिन से हिचकियाँ आ रही थी, घरवाले परेशान हो गए, सब इलाज कर लिया, लेकिन उसकी हिचकियाँ बन्द नहीं हुयी। खरे वकील ने पड़ौसी से कहा हमारे गुरु महाराज ने एक दवाई बताई है, क्या इसको वह दवाई दे दूँ। बेचारे परिवार वालों ने कहा- ज़रूर दीजिए। वकील खरे ने डरते-डरते एक बताशे के ऊपर दवाई डालकर उस मरीज को दे दी। इसके बाद मरीज़ को दूसरी हिचकी नहीं आयी। यह देखकर श्री खरे को स्वप्न पर विश्वास हो गया। इससे उत्साहित होकर उन्होंने ग़रीब बीमार लोगों को निःशुल्क प्रसाद रूप में ज्योतिष्मती दवा की एक बूँद बताशे में रखकर अपने हाथ से खिलाना शुरू कर दिया और निश्चयपूर्वक देखा कि बीमार ठीक होने लगे। धीरे-धीरे बीमारों की संख्या बढ़ती चली गई। हज़ारों-हज़ार असाध्य रोगियों को अपने पावन श्री प्रभु का नाम लेकर ज्योतिष्मती प्रदान की और वे सब स्वस्थ और निरोग होते रहे। महानिर्वाण के बाद भी आपकी कृपा

लीलाएँ चल रही हैं। जिस स्थान पर पहुँचकर सब विज्ञानों की पूर्णाहुति हो जाती है, हे महान् सन्त ! आपका विज्ञान वहां से शुरू होता है। अवतारी रूप में शरीर धारण करके तो आप सबका कल्याण करते हीं रहे, परन्तु महानिर्वाण के बाद भी जो भक्त आपको पुकारता है आप उस पर कृपा की वर्षा कर देते हैं। समाधि स्थान पर श्री अमृतेश्वर महादेव की स्थापना का कार्य पूर्ण होने के पश्चात् एक मंदिर का निर्माण कर श्री सद्‌गुरु विग्रह की प्रतिष्ठा का स्वर झंकृत होने लगा। इस मंदिर में सामान्यता नहीं कुछ विलक्षणता आना अवश्यम्भावी था। इस मंदिर का नामकरण 'मणिपुरधाम' नाम से किया गया। निर्माण का कार्य तीन चरणों में व्यवस्थित किया गया, यथा-सभा मण्डप, मंदिर कक्ष एवं शिखर। सभा मण्डप जिसकी छत ६५' बाय ४०' क्षेत्र में थी और इस विस्तार के मध्य कहीं भी कोई स्तम्भ आदि प्रस्तावित नहीं था। ऐसे विस्तार वाली छत का निर्माण असाधारण ही था, परन्तु हे दतिया के सन्त ! आपकी कृपा कटाक्ष से वह विशाल कार्य मात्र तीन दिवस के अन्तराल में ही निर्विघ्न रूप से सम्पन्न हो गया। इस निर्माण के मध्य एक विचित्र घटना देखने में आई। छत की ढलाई के मध्य पश्चिम दिशा का बायीं ओर वाला प्रथम भाग (स्पान) दोषपूर्ण दिखाई देने लगा क्योंकि छत के नीचे लगाया जाने वाला काष्ठ आश्रय (सेन्ट्रिङ्ग) झुक गया और इस प्रकार उस निर्मित खण्ड की क्षतिग्रस्तता की संभावना बहुत बढ़ गई। आपके द्वारा उस विषय में किसी प्रकार का कोई संकेत न दिए जाने के कारण, उस खण्ड के तुरन्त पुनर्निर्माण की बात नहीं सोची गई। लगभग छः सप्ताह तक जल उपचार (तराई) करने के उपरान्त काष्ठाश्रय को हटाया गया तो हे प्रभो ! सामान्यतः अविश्वसनीय आश्चर्य देखा गया कि वह निर्माण खण्ड किसी स्थान पर भी तनिक भी झुका हुआ नहीं था। यह आपकी ही कृपा थी कि काष्ठाश्रय झुकने के बावजूद भी निर्माण में कोई झुकाव नहीं आया। तत्पश्चात् शिखर निर्माण की बारी आई।

आपकी ही कृपा से मोतीलाल मास्टर को प्रेरणा मिली कि 'मणिपुरधाम' का शिखर गुरुमण्डल यंत्राकार रूप का होना चाहिए। अब समस्या यह थी वह अद्वितीय प्रकार क्या हो और यह बात प्रमाणित भी कैसे हो ? निर्माण मण्डल के सदस्यों में आपने ही प्रेरणा दी कि शिखर को गुरुमण्डल का स्वरूप दिया जाय और यही ध्वनि सबके अन्तर में एकमत से प्रतिध्वनित होने लगी। अन्ततोगत्वा गुरुमण्डल का शिखर बनाने का ही निर्णय लिया गया और उनकी कृपा से अद्वितीय प्रकार का ही बना। काश्मीर से लेकर कामाक्षा तक कहीं भी इस प्रकार का शिखर नहीं था, मध्य प्रदेश, बङ्गप्रदेश, महाराष्ट्र, केरल और उड़ीसा आदि मध्य एवं पश्चिमी और पूर्वी प्रदेशों में भी नहीं था। इस विषय में दक्षिणी भारत का ज्ञान नहीं था। इसलिए सर्वसम्मत से इसका पता लगाने नागपुर निवासी प्रदीप मुदाफले को दक्षिण भारत भेजा गया। और एक शास्त्री को वाराणसी भी भेजा गया। प्रदीप मुदाफले ने नेल्लोर, हैदराबाद, मद्रास, मदुराई, रामेश्वरम्, तेनकाशी, कोर्टालम, कन्याकुमारी, तन्जोर, कुम्भकोणम, गुरुक्षेत्र (अलालमगुड़ी) और काञ्ची आदि स्थानों पर अनेक विद्वानों से परामर्श किया। सभी का मत था कि इस प्रकार का शिखर संसार में कहीं भी नहीं है। अन्त में प्रदीप मुदाफले ने काञ्चीपीठ के शंकराचार्य स्वामी जयेन्द्र सरस्वती से इस विषय में चर्चा की तो उन्होने भी इस गुरुमण्डल शिखर को सहर्ष मान्यता देते हुए कहा-विश्व में यह शिखर अद्वितीय होगा। ऐसा शिखर विश्व में ही नहीं बना है। जो महान् रहस्य अनादिकाल से गुरुपरम्परा में ही प्राप्त होता था, जो सर्वसुलभ नहीं था। वह रहस्य आप की कृपा से सर्वसुलभ हो गया और प्रकट रूप में सब को दर्शन का सौभाग्य प्राप्त हुआ। श्री पीताम्बरा पीठ आश्रम पर जब 'मणिपुरधाम' का निर्माण हो रहा था तो सभी लोग उसका निर्माण कर रहे ठेकेदार को बेईमान कहते थे, परन्तु वह आपका अत्यन्त भावुक और श्रद्धावान् भक्त भी था। जिस समय वह आपकी

वन्दना करता तो आत्मविभोर हो उठता। सागर नाम का एक कार्यकर्त्ता भक्त उस ठेकेदार की बेईमानी की सभी के मुख से चर्चाएँ सुन-सुनकर एक दिन उत्तेजित हो उठा और उस ठेकेदार से कहने लगा-भाई तुम अपना हिसाब मुझे चेक कराओ। वह ठेकेदार बड़े आत्मविश्वास के साथ बोला-आइए चैक कर लीजिए। वह भक्त खाते की जाँच करने के लिए जैसे ही चला, उसके एक ही क़दम आगे रखते ही किसी अज्ञात शक्ति ने अपने हाथ का पंजा उस भक्त की छाती पर बलपूर्वक रख दिया। इससे वह भक्त पीछे की ओर खिसक कर वहीं बनी एक मुंडेर पर बैठ गया। उसके कानों में यह स्पष्ट आवाज़ आयी कि तू क्या कर रहा है ? तू कौन है और क्या तू जानता नहीं कि काम कौन करवा रहा है ? हे प्रभो ! उस भक्त ने आपका वह पञ्जा अच्छी तरह पहचान लिया था। इसलिए वह स्तब्ध रह गया और उल्टे उस ठेकेदार से कहने लगा-मैंने हिसाब देख लिया, माफ करना, मैं तो ऐसे ही कह रहा था। आपने उसको सद्बुद्धि प्रदान की। हे सद्गुरु समर्थ ! आपकी ही कृपा से इस शिखर का भी निर्माण पूर्ण हो गया और उस निर्माण में आने वाली कठिनाइयों को आपने स्वयं दूर किया और गुरुमण्डल के श्रुति द्वारा दिए जाने वाले ज्ञान के रहस्य को साकार रूप में प्रकट करा दिया। हे प्रभो ! आपके भक्त झाँसी निवासी रामकृष्ण वर्मा के पुत्र संतोष कुमार का मोतियाबिन्द के कारण एक नेत्र पूर्णरूप से ख़राब हो गया, दूसरी आँख में भी रोशनी का आना असाध्य था। पीताम्बरापीठन्यास मण्डल के सदस्य हरिराम साँवला की दादी की भी नेत्रज्योति लगभग समाप्त हो गई थी, किन्तु आपकी कृपा से इन दोनों ने ही पुनः नेत्रज्योति प्राप्त की। मिश्रा नाम से जाना जाने वाला एक खाद्य निरीक्षक, दतिया नगर में रहता था। उसके छः वर्ष आयु की केवल एक मात्र पुत्री थी। उस बालिका को अचानक पोलियो का रोग हो गया। अपनी दशा पर वह बालिका दिन-रात रोती रहती थी। जो भी देखता, उसकी दशा पर तरस खाता

था। मिश्रा की आर्थिक दशा अच्छी नहीं थी। उनके पास जो कुछ धन था वह भी अपनी पुत्री की चिकित्सा में व्यय कर दिया। परन्तु उस बालिका का रोग ठीक नहीं हुआ उस खाद्य निरीक्षक की पत्नी समझदार नहीं थी, अत्यन्त कलहप्रिया थी जिससे बेचारा मिश्रा और अधिक दुःखी रहता था। एक दिन उसकी पत्नी ने मिश्रा से क्रोधपूर्वक कहा कि इस लड़की को लेकर कहीं चले जाओ और जब तक वह ठीक न हो जाय तुम दोनों ही घर आकर मुँह मत दिखाना। अब मिश्रा लाचार था, वह क्लेश के कारण घर भी नहीं रह सकता था। इसलिए उसने सोचा-जो लोग यथाशक्ति दूसरों का हित करते हैं, उन्हें धन्य माना जाना चाहिए। वे लोक के पालक और पवित्र हैं। इसलिए इधर-उधर भटकने के बजाय श्री पीताम्बरामाई की शरण में चलना चाहिए। वे ही मदद करेंगी। ऐसा सोचकर मिश्रा अपनी पुत्री को लेकर वनखण्डी आश्रम आ गया। बालिका को लाकर जगदम्बा के मंदिर के सामने रख दिया और रोते हुए इस प्रकार प्रार्थना करने लगा-हे माता ! श्री स्वामीजी कहते थे कि तुम अपनी जाति वालों की बात जल्दी सुनती हो। वे यह भी कहा करते थे कि जाओ माई से निवेदन करो वह सबकी सुनती है। इसलिए हे माँ ! मैं तेरी शरण में आया हूँ। तुम में और श्री महाराज जी में कोई भेद नहीं है। उन्हीं की बात का अनुसरण कर मैं तेरे दरबार में आया हूँ। यह बालिका तेरे जाति की है और पोलियो रोग से ग्रसित है। इसके दुःख को तू अच्छी तरह जानती है। इस बालिका को शीघ्र रोगमुक्त कर दो अन्यथा मैं इसको घर नहीं ले जाऊँगा और स्वयं भी आत्महत्या कर लूँगा। इस प्रकार प्रार्थना करता हुआ और बालिका को मंदिर के सामने पड़ी हुई छोड़कर मिश्रा, श्री महाराज की समाधि पर सिर रखकर विनती करने लगा। बहुत समय तक वह समाधि स्थल पर ही अमृतेश्वर से प्रार्थना करता रहा। उस समय पीठ पर बहुत से साधक उपस्थित रहकर भजन कर रहे थे और इस तमाशे को देख रहे थे। मिश्रा की करुण पुकार

सुनकर सभी साधकों की लौ प्रभु से लग गई और सभी लोग चाहने लगे कि उसकी सहायता होनी ही चाहिए। तभी नवनीत हृदय अमृतेश्वर ने मिश्रा के हृदय में कहा-तेरी प्रार्थना माई ने सुन ली है, जा अब अपनी पुत्री को देख। तभी वह खाद्य निरीक्षक उठकर अपनी पुत्री के पास पहुँचे तो देखा कि वह रोगमुक्त होकर खड़ी होकर चल रही है और माई के सामने पहुँचकर प्रणाम करने लगी। सभी उपस्थित बन्धुओं ने इस महान् चमत्कार को देखा। ऐसे ही एक बार टीकमगढ़ में एक भ्रष्ट तांत्रिक कहीं से आ गया। वह निषिद्ध सिद्धियों को प्राप्त करने में लगा रहता और उसने कुछ जीव आत्माएँ सिद्ध भी कर ली थी। अपनी गन्दी सिद्धियों से वह लोगों को धोखे में रखता, छोटी-मोटी बीमारियाँ ठीक कर देता था। वह जिस कमरे में रहता उसी में टट्टी पेशाब करता और बाहर नहीं निकलता था। लोग उसे बड़ा सच्चा साधू समझते थे। एक दिन विजयगढ़ (अलीगढ़ उ.प्र.) के निवासी जो टीकमगढ़ में शिक्षक थे, ब्राह्मण दम्पति उसके दर्शन करने आए। उनमें स्त्री बहुत सुन्दर थी। उस भ्रष्ट व ढोंगी साधू ने उसके पति को दूर हटाकर उससे कहा कि - हम एक सिद्धि करना चाहते हैं जिसमें हम तुम्हारा उपयोग करना चाहेंगे। तुम हमारा साथ दो तो हम तुमको मालामाल कर देंगे। यह सुनकर पतिव्रता स्त्री बहुत नाराज़ हो गयी। तो उस अधम साधू ने कहा कि तुम हमारी बात नहीं मान रही हो, मैं तुमको देख लूंगा और उस स्त्री के पीछे उसने कुछ पिशाच लगा दिए, जो उसे परेशान करने लगे। वह स्त्री आधी पागल होकर चिल्लाती-हाय कोई मुझे मार रहा है, मत मारो। सबकी पुकार सुनने वाले हे सच्चे देवता ! आपके किसी भक्त ने उनको सलाह दी कि वे दतिया आकर आपकी समाधि पर प्रार्थना करें। बेचारा पति किसी तरह से अपनी पत्नी को लेकर दतिया आ गया और दो तीन दिन आश्रम में रहकर समाधि पर प्रार्थना करता रहा। प्रथम दिन ही उसकी पत्नी चिल्लाने लगी-गन्दा साधू भाग रहा है और महाराज जी

से अपनी पत्नी को लेकर दतिया आ गया और दो तीन दिन आश्रम में रहकर समाधि पर प्रार्थना करता रहा। प्रथम दिन ही उसकी पत्नी चिल्लाने लगी-गन्दा साधू भाग रहा है और महाराज जी

त्रिशूल लेकर उसे मारने दौड़ रहे हैं। तीन दिन बाद वह टीकमगढ़ वाला भ्रष्ट तांत्रिक आश्रम पर आया, पति-पत्नी के पैरों को पकड़कर माफ़ी माँगने लगा और आपकी समाधि के सामने साष्टांग होकर माफ़ी माँगते हुए उसने प्रतिज्ञा की- कि अब वह ये गन्दी साधनाएँ कभी नहीं करेगा। हे स्वामी ! आपकी कृपा से वह स्त्री एकदम ठीक हो गई और बड़ी हर्षित होकर पूजा करके अपने घर वापस चली गई। हे प्रभो! हे दीनानाथ ! महानिर्वाण के बाद भी त्रिपुरारि आपकी लीला यथावत चल रही है, कौन इसका वर्णन कर सकता है। आपने कृपा कर सोते में ही ५१ शक्तिपीठों के दर्शन अपने कई भक्तों को कराए। बहुत से भक्तों को आप एक सुनहरे, तेज़मान, अतिसुन्दर पुष्पक पर बैठकर दर्शन देते हैं, तो किसी-किसी भक्त को आप परम् दिव्य स्वर्ण-सिंहासन पर बैठे हुए दर्शन देते हैं। जिस भक्त की जैसी आवश्यकता और श्रद्धा होती है उसी रूप में आप उसे दर्शन देकर कृपा करते हैं। एक साधक बाबू गुप्त जिन्होंने भगवान् बटुक भैरव, कालभैरव एवं महाकालभैरव के मंत्र श्रीमुख की अमृतमयी वाणी से प्राप्त किए थे। आश्रम में बीच की दालान में जहाँ महाराज कभी-कभी मूढ़े पर विराजमान होते थे वहीं पर वह तीनों मंत्रों के जपने के बारे में यह सोचने लगा कि मेरे लिए कौन-सा मंत्र प्रमुख व आवश्यक है तीनों मंत्रों को क्रम से जपना प्रारंभ किया। पहले श्री बटुक भैरव का फिर कालभैरव का तत्पश्चात् महाकाल भैरव का मंत्र जपा। जैसे ही महाकाल भैरव का मंत्र जपना प्रारंभ किया पूज्य महाराज की अदृश्य अमृतमयी वाणी तुरन्त सुनाई दी। "बस ! बस ! यही ठीक है" साधक ने यह आवाज़ सुनते ही आनन्द विभोर होकर अपने को कृत्य-कृत्य समझा। सब शंकाएँ समाप्त हो गई। यही साधक जिसको कई मंत्र जपने को बताए गए थे। वह इस असमजंस में पड़ा कि पूज्य महाराज जी होते तो मैं उनसे पूछ लेता कि सब से अधिक किस मंत्र को जपना चाहिए। वह वनखण्डेश्वर महादेव के पास (जिनके ऊपर ईशान शिव

हैं) बैठकर जप करने लगा उसके कान में प्रत्यक्ष अमृतमयी महाराज जी की वाणी सुनाई दी जिसमें उसको वह मंत्र ही अधिक जपने के लिए निर्देश था। वह अपना मंत्र जप करते-करते नींद की झपकी लेने लगा। उसने स्वप्न में देखा कि वनखण्डेश्वर महादेव के विग्रह से पञ्चाक्षर मंत्र की ध्वनि निकल रही है। उसको प्रातः काल श्री मोतीलाल मास्टर ने स्वयं आकर पञ्चाक्षरी मंत्र वाला स्तोत्र भी दिया। इससे उसके हृदय में उस मंत्र के प्रति और श्रद्धा विश्वास की दृढ़ता आ गई। श्रद्धा व विश्वास की आवश्यकता है और आवश्यकता है निर्मल मन की। यथा–निर्मल मन जन सो मोहि पावा। मोहि कपट छल छिद्र न भावा।। मुरैना के दुर्गाप्रसाद गोपाल का मस्तिष्क बराबर तीन साल तक ख़राब रहा। उसके माता-पिता ने जितना बन सका बहुत से जानकार सयानों को, झाड़ फूँक करने वालों को, उतारा करने वालों को, मंत्र पढ़कर पानी पिलाने वालों को, गण्डा तावीज बनाने वालों को दिखाया। इलाज के लिए जितने डॉक्टर व वैद्य उनको उपलब्ध हो सके, उनके इलाज भी बराबर चालू रखे। राजस्थान में आगरा से जयपुर जाने वाले रास्ते में मेहदीपुर के बाबा जी का एक स्थान महुआ के पास है वहाँ भी उसको ले गए एक माह लगातार वहाँ भी रखा। परन्तु कोई फ़ायदा नज़र नहीं आया। इतने पर भी लोग उनको बातें सुनाते। ठीक तरह से इलाज नहीं करा रहे हो पैसा प्यारा है, नौकरी प्यारी है, लड़का प्यारा नहीं है। देखों कैसी हालत हो गई है। हड्डी-हड्डी रह गई है। श्री प्रभु के अन्तर्ध्यान होने के बाद जयपुर से एक दिन डॉ.योगेश मिश्रा दतिया पधारे। उनको भी दिखाया तो वह बोले इसे तो कोई भारी तपस्वी या योगी ही ठीक कर सकता है। फिर भी इस लड़के को जयपुर ले आना मैं इसका इलाज सवाई मानसिंह हॉस्पिटल के विशेषज्ञ डॉक्टरों द्वारा कराऊँगा। इतने आश्वासन मिलने पर उस लड़के का पिता जयपुर श्री मिश्रा जी के पास इलाज हेतु लड़के को साथ लेकर पहुँचा तो डॉ.मिश्रा

सवाई मानसिंह हॉस्पिटल के विशेषज्ञ डॉक्टरों द्वारा कराऊँगा। इतने आश्वासन मिलने पर उस लड़के का पिता जयपुर श्री मिश्रा जी के पास इलाज हेतु लड़के को साथ लेकर पहुँचा तो डॉ.मिश्रा

जी ने कहा पहले इसे मानसिक रोग के अस्पताल में ले जाकर दिखाओ। उन्होने फोन उठाकर मेन्टल हॉस्पिटल के बड़े डॉक्टर से बातचीत करके एक पर्चा लिखकर दे दिया और कहा वहाँ जाकर यह पर्चा डॉक्टर साहब को दे देना। मेन्टल हॉस्पिटल जाकर वह पर्चा दिखाते ही उन्होने तुरन्त लड़के को कुछ बातें पूछकर भर्ती कर लिया। जिस दिन वह भर्ती हुआ उसी रात को लड़के के पिता ने अस्पताल में ही रात में स्वप्न में देखा कि आप आश्रम की बगिया में विराजमान हैं। पं.बृजनन्दन जी शास्त्री श्री प्रभु से किसी विशेष विषय पर चर्चा कर रहे हैं बातचीत करते-करते बड़ी देर हो गई। लड़के का पिता मन में कहने लगा कि श्री शास्त्री जी की बातचीत ख़त्म ही नहीं हो रही है। बीच में बोल भी नहीं सकते। थोड़ी देर में बातचीत करके पं.बृजनन्दन जी शास्त्री अपनी जगह से हटे तो लड़के के पिता पर आपकी दृष्टि पड़ी पूछा "कहो क्या हाल है।" लड़के के पिता ने कहा श्री चरणों की कृपा से सब ठीक है एक बात पूछनी है। श्री प्रभु ने पूछा-"कहो क्या बात पूछनी है" लड़के के पिता ने कहा-महाराज जी यदि किसी को भूत लग जाय तो क्या करना चाहिये ? महाराज जी ने तुरन्त फिर पूछा-"किसको भूत लग गया।" लड़के के पिता ने निवेदन किया आपके नाती को (यानी "लड़के को" कहने का मतलब यह था) सच्चे सन्त ने कहा-अब तक तुमने क्यों नहीं बताया ? फिर कहा कि अच्छा अमुक उपचार कर देना ठीक हो जाएगा। घबराओ नहीं। इतना कहना था कि लड़के के पिता की नींद खुल गई वह उठकर बैठ गया। श्री चरणों की कृपा का चिन्तन व अनुभव करते ही धीरे-धीरे रोने लगा। दूसरे लोग न देख लें कि यह व्यक्ति क्यों रो रहा है, ज़ोर से भी न रो सका। बिलखने भी नहीं देती, हमें मजबूरियां अपनी। मोहब्बत करने वालों का बिलखना किसने देखा है। जब वह लड़का प्रातःकाल सोकर जागा तो बिल्कुल स्वस्थ था। हे महामृत्युञ्जय ! जिस पर भी आपकी कृपा कटाक्ष का ज़रा भी संचार हो गया वह देहावसान के

बाद पुनः जीवित भी हो जाता है ऐसी ही एक घटना झाँसी के दातों के डॉक्टर मणिपुरधाम निवासी श्री लाल गोपाल सारस्वत के सुपुत्र श्री रामगोपाल सारस्वत के बारे में घटित हुई। हार्ट के मरीज़ है। उनके दिल पर कभी भी घबराहट का दौरा पड़ जाने का उन्हें सदैव ही डर बना रहता। अतः वह शौच जाते समय भी अपनी धर्मपत्नी को बाहर खड़ा रखते। शौचालय में कुछ लोहे के सरिए उन्होंने लगवा रखे थे जिनको पकड़कर शौचालय में बैठते तथा दरवाज़ा भीतर से बन्द न करके थोड़ा सा खुला रखते इसलिए कि कहीं अनहोनी घटना होने पर उनकी पत्नी उनकी सहायता कर सके। दैव योग से एक दिन शौचालय में डॉ.सारस्वत को कुछ ऐसा दौरा पड़ा कि आगे की तरफ़ झुक के देहपात होकर प्राणान्त हो गया और सूक्ष्म शरीर शौचालय के बाहर आकर खड़ा हो गया। वह सूक्ष्म शरीर इस बात का इंतिज़ार करने लगा कि मुझको यमदूत के बजाय मेरे गुरुदेव लेने आ रहे होंगें ? तब हे दयामय ! आपकी अपूर्व अमृतरूपी दया की वर्षा हुई। डॉ. के सूक्ष्म शरीर ने सुना कि महाराज कह रहे हैं कि क्या "तूने इतनी तपस्या या आराधना की है जो मैं तुझे लेने आऊं ?" इतने शब्दों के सुनने के बाद वह सूक्ष्म शरीर पुनः स्थूल शरीर में प्रवेश कर गया तथा ज़ोर से कराहने की आवाज़ उनकी पत्नी ने सुनी तो पत्नी ने शीघ्र ही दरवाज़ा खोला। उनको अपनी बाहों में समेटकर उठाया। थोड़ी ही देर में पुनः स्थूल शरीर भी पहले जैसी हालत में आकर होश में आ गया। फिर सहारा देकर उनको साथ में भीतर ले गई। वहाँ शुद्ध होकर सब बातें अपनी पत्नी को बतलाई तभी से श्री गुरुमहाराज के अनन्य भक्त होकर पहले से और अधिक जप भजन में समय बिताने लगे व स्थान की सेवा में भी रुचि लेने लगे। हे महाकाल ! आपने डॉक्टर को ही नहीं सारे संसार को संदेश दिया कि जप करो, तपस्या करो, सब कार्य भक्ति सहित करो, जिससे स्वयं परमात्मा जीवन के अंतिम क्षणों में तुम्हारे पास आकर भव बन्धनों से मुक्त कर दें। हे

भगवन् ! आपकी महिमा का वर्णन कर अब हम थक कर विराम लेना चाहते हैं। उसका यही कारण है कि अब हम आगे परिश्रम नहीं कर सकते अर्थात् हम अधिक वर्णन करने में अशक्त हैं। विराम लेने का यह कारण कदापि नहीं है कि आपके गुण केवल इतने ही हैं। यथा-"महिमानं यदुत्कीर्त्य तव संह्रियते वचः। श्रमेण तदशक्त्या वा न जुष्णनामियत्तपयाः।।" आपकी महिमा अपरिमित है। उसको शेष, महेश इत्यादि न तो कोई जान सका है और न जान सकता है, फिर वर्णन का तो कहना ही क्या ? पूर्णातिपूर्णब्रह्म ! यदि सहस्रों सरस्वती भी एक साथ आपकी महिमा का युगों तक वर्णन करती रहे तब भी वह अपूर्ण ही रहेगा। फिर हम संसारी पुरुषों की तो गणना ही कहाँ ? हे प्रभो! आपका वास्तविक स्वरूप तो निराकार, निरञ्जन, निर्विकार, अव्यय, अविनाशी, निर्गुण और नित्य है जिसको सगुण की सीमा में बाँधना एक धृष्ठता ही है। यद्यपि यह सब कुछ आपने ही कराया है परन्तु दासानुदास भी उस धृष्ठता के दोष से मुक्त नहीं हो सकता। आपसे इस दोष से मुक्त होने के लिए क्षमा याचना करता है। आपके दरबार की रीति के अनुसार शरण में आए को अभयदान मिलता है अतः दासानुदास भी निश्चय ही दोष मुक्त होगा। हे करुणानिधान ! आपकी लीलाओं के अथाह 'समुद्र' में से एक बूँद के तुल्य कतिपय कथाओं के सार को "श्री स्वामी कथासार" कृति में लोक कल्याणर्थ भर कर अब समाप्त किया जाता है। हे परब्रह्म ! सदैव सब का कल्याण होता रहे। आपकी ही कृपा से लिखा गया यह 'कथासार' आपके ही चरणारविन्दों में समर्पित है। श्री स्वामीजी महाराज की जय। ॐ शांति शांति शांति।

।। इति श्री स्वामी कथासार समाप्तः।।

: माता बगलामुखी की आरती :

जय पीताम्बरधारिणि जय सुखदे वरदे, मातर्जय सुखदे वरदे।
भक्तजनानां क्लेशं, भक्तजनानां क्लेशं सततं दूर करे।। जय देवी जय देवी १।।
असुरैः पीड़ितदेवास्तव शरणं प्राप्ताः, मातस्तवशरणं प्राप्ताः।
धृत्वा कौर्मशरीरं, धृत्वा कौर्मशरीरं दूरीकृतदुःखम्।। जय० २।।
मुनिजनवन्दितचरणै जय विमले बगले, मातर्जय विमले बगले।
संसारार्णवभीतिं, संसारार्णवभीतिं नित्यं शान्तकरे।। जय० ३।।
नारदसनकमुनीन्द्रैर्ध्यातं पदकमलं, मातर्ध्यातं पदकमलम्।
हरिहरद्रुहिणसुरेन्द्रैः, हरिहरद्रुहिणसुरेन्द्रैः सेवितपदयुगलम्।। जय० ४।।
काञ्चनपीठनिविष्टे मुद्गरपाशयुते, मातर्मुदगरपाशयुते।
जिह्वावज्रसुशोभित, जिह्वावज्रसुशोभित पीतांशूकलसिते।। जय० ५।।
बिन्दुत्रिकोणषडस्त्रैरष्टदलोपरि ते, मातरष्टदलोपरि ते।
षोडशदलगतपीठं, षोडशदलगतपीठं भूपुरबृत्तयुत्तम्।। जय० ६।।
इत्थं साधकवृन्दश्चिन्तयते रूपं, मातश्चिन्तयते रूपं।
शत्रुविनाशकबीजं, शत्रुविनाशकबीजं धृत्वा हृत्कमले।। जय० ७।।
अणिमादिकबहुसिद्धिं लभते सौख्ययुतां, मातर्लभते सौख्ययुताम्।
भोगान् भुक्त्वा सर्वान् भोगान् भुक्त्वा सर्वान् गच्छति विष्णुपदम्।। जय० ८।।
पूजाकाले कोऽपि आर्तिक्यं पठते, मातरार्तिक्यं पठते।
धनधान्यादिसमृद्धो, धनधान्यादिसमृद्धः सान्निध्यं लभते।। जय० ९।।

धनधान्यादिसमृद्धो, धनधान्यादिसमृद्धः सान्निध्य लभते।। जय० ६।।

आरती

आरती अकुल बिहारी की-देव, वनखण्डी चारी की
चरण रज अंजन सुखकारी
महा अज्ञान तिमिर हारी
दृष्टिगत दोष दलन कारी
दिव्यता, मुदिता संचारी
जयति सुख-सिन्धु, दीन के बन्धु, तत्व मय बिन्दु,
इन्दु-सी प्रभा प्रसारी की, आरती अकुल बिहारी की
चरण नख दिव्य प्रभाकारी
कोटि तप कलुष विलयकारी
अलौकिक जीवन संचारी
अज्ञता पशुता संहारी
जयति सुखधाम, पूर्ण निष्काम, मनः विश्राम-
धाम, विज्ञान प्रचारी की, आरती अकुल बिहारी की
दिव्य काषायाम्बर धारी
सौम्य, तेजस्वी, मन हारी
परम उल्लास मूर्ति भारी
भव्य आभा मंगल-कारी
सुनामानाम, अतुल गुण ग्राम, परम अभिराम
काम सुन्दर तनु धारी की, आरती अकुल बिहारी की

वाणि, ह्ल्लेखा, श्रीसुखधाम
ह स क्ष म ल व र यूं पूर्ण प्रकाम
पादुका अर्चन तर्पण धाम
ग्रहण मम करें अनन्त प्रणाम
जयति शिव रूप, कोटि जगभूप, स्वरूप-अनूप
रूप कलि कलुष विदारी की, आरती अकुल बिहारी की।

पुष्पांजलि व प्रदक्षिणादि

हाथ में पुष्प लेकर निम्न मंत्रों को पढ़े- ॐ यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्म्माणिप्रथमा-न्यासन्। तेहनाकम्महिमानः सचन्त यत्र पूर्व्वे साध्याः सन्ति देवाः। ॐ राजाधिराजाय प्रसह्य साहिने। नमो वयं वैश्रवणाय कुर्महे। स मे कामान् कामकामाय मह्यं। कामेश्वरो वैश्रवणो ददातु। कुबेराय वैश्रवणाय महाराजाय नमः ॐ स्वस्ति साम्राज्यं भौज्यं स्वाराज्यं वैराज्यं पारमेष्ठयं राज्यं महाराज्य-माधिपत्यमयं समन्तपर्यायीस्यात्सार्वभौमः सर्वायुष आन्तादापरार्धात्। पृथिव्यै समुद्रपर्यन्ताया एकरा-डिति तदप्येष श्लोकोऽभिगीता मरुतः परिवेष्टातारो मरुत्तस्यावसनगृहे, अविक्षितस्य कामप्रेर्विश्वेदेवाः सभासद इति। ॐ विश्वतश्चक्षुरत विश्वतो-मुखो विश्वतो बाहुरुतविश्वतस्पात्। सम्बाहुभ्यान्धमति सम्पतत्रैद्यार्थाभूमी जनयन्देव एकः। नानाविधानि पुष्पाणि यथाकालोद् भवानि च। पुष्पांजलिं मया दत्तं गृहाण बगलामुखि।। पुष्पाञ्जलि अर्पण कर योनिमुद्रा से नमस्कार कर प्रदक्षिणा करे -

ॐ सप्तास्यासन् इत्यादि यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च। तानि-तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे।

से नमस्कार कर प्रदक्षिणा करे -

ॐ सप्तास्यासन् इत्यादि यानि कानि च पापानि जन्मान्तरकृतानि च। तानि-तानि प्रणश्यन्ति प्रदक्षिण पदे पदे।

स्वाम्यष्टकम्

माला कराग्रेऽस्ति श्रुतिर्मुखाग्रे, वेदैश्च तन्त्रैश्च विभूषितोऽसि।
तन्त्रोक्त-मार्गेण च प्राप्य सिद्धिं, लोकोपकार्यें प्रकटी-करोऽसि।।१।।
कण्ठेऽस्ति वासः खलु शारदायाः, लक्ष्मी सदा ते चरणाश्रयास्ति।
पादान् गृहीतुं न शशाक कीर्तिः, दूरात् त्वदीयांश्च गुणान्-गृणाति।।२।।
वित्तेषणायाः न बुभुक्षितोऽसि, लोकेषणायाः न पिपासुरेव।
सिद्धिर्त्वदीया परिचारिकास्ति, छायेव पृष्ठे तु सदाविभाति।।३।।
सिद्धि-प्रदाने खलु सिद्ध-हस्तः, मुक्ति-प्रदाने खलु मुक्त-हस्तः।
कार्पण्य-दोषेन न दूषितोऽसि, सिद्धि-प्रदात्री हृदि ते स्थिताऽस्ति।।४।।
वेदेषु विद्यासु कलासु चैव, तन्त्रेषु मन्त्रेषु न को त्वदन्यः।
ज्ञानस्य सिंधुञ्च विलोड्य सम्यक्, आनंद-सिन्धौ विनिमज्जितोऽसि।।५।।
सिद्धोऽसि शुद्धोऽसि दयान्वितोऽसि, ज्ञाने च योगे च समाहितोऽसि।
ज्ञानाग्निना कर्म विदग्ध्य सम्यक्, लोकोपकारस्य व्रतं वृणोऽसि।।६।।
लोकोत्तरीयं चरितं महान्तं, ज्ञातुं न ज्ञानेन समर्थितोऽसि।
पीयूष-पानस्य सुखं च प्राप्य, त्वं मर्त्य-लोकेऽप्यमृतात्मकोऽसि।।७।।
जीर्णं तनुर्मे मलिनं मनो मे, बुद्धिर्विरुद्धा विषयोन्मुखी च।
त्रैदोष-ग्रस्तोहमसाध्य-रोगी, रोगाद् विमुक्त्यै शरणं प्रपद्ये।।८।।

० इति श्री कालू पण्डितेन विरचितम् स्वाम्यष्टकम् ०

।। गुरुस्तवराजः ।।

।। श्री गणेशाय नमः ।।

ब्रह्मस्थानसरोजमध्यविलसच्छीतांशुपीठस्थितं
स्फूर्ज्जत्सूर्यरुचिं वराभयकरं कर्पूरकुन्दोज्ज्वलम्।
श्वेतस्रग्वसनानुलेपनयुतं विद्युद्रुचा कान्तया
संश्लिष्टार्द्धतनुं प्रसन्नवदनं वन्दे गुरुं सादरम्।।१।।

मोहध्वान्तमदान्धताग्रहवतां चक्षूषि चोन्मीलयन्
यश्चक्रे रुचिराणि तानि दयया ज्ञानाञ्जनाभ्यञ्जनैः।
व्याप्तं यन्महसा जगत्त्रयमिदं तत्त्वप्रबोधोदये
तं वन्दे शिवरूपिणं निजगुरुं सर्वार्थसिद्धिप्रदम्।।२।।

मातङ्गी भुवनेश्वरी च बगला धूमावती भैरवी
तारा छिन्नशिरोधरा भगवती श्यामा रमा सुन्दरी।
दांतुं न प्रभवन्ति वाञ्छितफलं यस्य प्रसादं बिना
तं वन्दे शिवरूपिणं निजगुरुं सर्वार्थसिद्धिप्रदम्।।३।।

काशी द्वारवती प्रयागमथुराऽयोध्या गयाऽवन्तिका
माया पुष्कर-काञ्चिकोत्कलगिरिः श्रीशैलविन्ध्यादयः।
नैते तारयितुं भवन्ति कुशला यस्य प्रसादं बिना
तं वन्दे शिवरूपिणं निजगुरुं सर्वार्थसिद्धिप्रदम्।।४।।

तं वन्दे शिवरूपिणं निजगुरुं सर्वार्थसिद्धिप्रदम्।।४।।

रेवासिन्धुसरस्वतीत्रिपगाः सूर्यात्मजा कौशिकी
गङ्गासागरसङ्गमोऽद्रितनया लौहित्यशोणादयः।
नालं प्रोक्तफलप्रदानविषये यस्य प्रसादं विना
तं वन्दे शिवरूपिणं निजगुरुं सर्वार्थसिद्धिप्रदम्।।५।।

सत्कीर्त्तिर्विमलं यशः सुकविता पाण्डित्यमारोग्यता
वादे वाक्पटुता कुले चतुरता गाम्भीर्यमक्षोभ्यता।
प्रागल्भ्यं प्रभुता गुणे निपुणता यस्य प्रसादात् भवेत्
तं वन्दे शिवरूपिणं निजगुरु सर्वार्थसिद्धिप्रदम्।।६।।

लोकेशो हरिरम्बिका स्मरहरो माता पिताऽभ्यागता
आचार्यः कुलपूजितो यतिवरो वृद्धस्तथा भिक्षुकः।
नैते यस्य तुलां व्रजन्ति कलया कारुण्यवारांनिधेस्
तं वन्दे शिवरूपिणं निजगुरुं सर्वार्थ सिद्धिप्रदम्।।७।।

ध्यानं दैवतपूजनं गुरुतपोदानाग्निहोत्रादयः
पाठो होमनिषेवणं पितृमखाह्याभ्यागताच्र्चा वलिः।
एते व्यर्थफला भवन्ति सततं यस्य प्रसादं विना
तं वन्दे शिवरूपिणं निजगुरुं सर्वार्थसिद्धिप्रदम्।।८।।

पूर्वाशाभिमुखः कृताञ्जलिपुटः श्लोकाष्टकं यः पठेत्
पौरश्चर्यविधिं विनाऽपि लभते मन्त्रस्य सिद्धिं पराम्।

नो विघ्नैः परिभूयते प्रतिदिनं प्राप्नोति पूजाफलम्
देहान्ते परमं पदं निविशते यद्योगिनां दुर्लभम्।।६।।

इति श्रीवामकेश्वरतन्त्रे पार्वतीशिवसंवादे श्रीगुरुस्तवराजः संपूर्णः।।

।। बगलाष्टोत्तरशतनाम स्तोत्रम्।।

ब्रह्मास्त्ररूपिणी देवी माता श्रीबगलामुखी।
चिच्छक्तिर्ज्ञानरूपा च ब्रह्मानन्दप्रदायिनी।।१।।

महाविद्या महालक्ष्मी श्रीमत्त्रिपुरसुन्दरी।
भुवनेशी जगन्माता पार्वती सर्वमङ्गला।।२।।

ललिता भैरवी शान्ता अन्नपूर्णा कुलेश्वरी।
वाराही छिन्नमस्ता च तारा काली सरस्वती।।३।।

जगत्पूज्या महामाया कामेशी भगमालिनी।
दक्षपुत्री शिवांकस्था शिवरूपा शिवप्रिया।।४।।

सर्वसम्पत्करी देवी सर्वलोकवशङ्करी।
वेदविद्या महापूज्या भक्ताद्वेषी भयङ्करी।।५।।

सर्वसम्पत्करी देवी सर्वलोकवशङ्करी।
वेदविद्या महापूज्या भक्ताद्वेषी भयङ्करी।।५।।

स्तम्भरूपा स्तम्भिनी च दुष्टस्तम्भनकारिणी।
भक्तप्रिया महाभोगा श्रीविद्या ललिताम्बिका।।६।।
मेनापुत्री शिवनन्दा मातङ्गी भुवनेश्वरी।
नारसिंही नरेन्द्रा च नृपाराध्या नरोत्तमा।।७।।
नागिनी नागपुत्री च नगराजसुता उमा।
पीताम्बा पीतपुष्पा च पीतवस्त्रप्रिया शुभा।।८।।
पीतगन्धप्रिया रामा पीतरत्नार्चिता शिवा।
अर्द्धचन्द्रधरी देवी गदामुद्गरधारिणी।।९।।
सावित्री त्रिपदा शुद्धा सद्योरागविवर्धिनी।
विष्णुरूपा जगन्मोहा ब्रह्मरूपा हरिप्रिया।।१०।।
रुद्ररूपा रुद्रशक्तिश्चिन्मयी भक्तवत्सला।
लोकमाता शिवा सन्ध्या शिवपूजनतत्परा।।११।।
धनाध्यक्षा धनेशी च धर्मदा धनदा धना।
चण्डदर्पहरी देवी शुम्भासुरनिवर्हिणी।।१२।।
राजराजेश्वरी देवी महिषासुरमर्दिनी।
मधुकैटभहन्त्री च रक्तबीजविनाशिनी।।१३।।
धूम्राक्षदैत्यहन्त्री च भण्डासुरविनाशिनी।
रेणुपुत्री महामाया भ्रामरी भ्रमराम्बिका।।१४।।

ज्वालामुखी भद्रकाली बगला शत्रुनाशिनी।
इन्द्राणी इन्द्रपूज्या च गुहमाता गुणेश्वरी।।१५।।
वज्रपाशधरा देवी जिह्वामुद्गरधारिणी।
भक्तानन्दकरी देवी बगला परमेश्वरी।।१६।।
अष्टोत्तरशतं नाम्नां बगलायास्तु यः पठेत्।
रिपुबाधाविनिर्मुक्तः लक्ष्मीस्थैर्यमवाप्नुयात्।।१७।।
भूतप्रेतपिशाचाश्च ग्रहपीडानिवारणम्।
राजानो वशमायांति सर्वैश्वर्यं च विन्दति।।१८।।
नानाविद्यां च लभते राज्यं प्राप्नोति निश्चितम्।
भुक्तिमुक्तिमवाप्नोति साक्षात् शिवसमो भवेत्।।१९।।

।। इति रुद्रयामले सर्व सिद्धिप्रद बगलाष्टोत्तरशतनाम स्तोत्रम्।।

गुरु पादुका पञ्चक स्तोत्रम्

आदि कादि किल आदि तारकं वर्ण मण्डल मण्डलसिद्धिदम्।
अन्तरुल्लसित हक्षालाक्षार लक्ष्यन्तिपशवः कथं शिवे।।१।।
ब्रह्मरंध्र सरसीरुहोदरे नित्यलग्नमवदातमद्भुतम्।
कुंडली विवर काण्डमण्डितं द्वादशार्ण सरसीरुहं भजे।।२।।
तस्य कन्दलित कर्णिकापुटे क्लृप्त रेखामकथादि रेखाया।
कोण लक्षितं हलक्ष मण्डली भावलक्ष्यमवलालयं भजे।।३।।
तत पुटे पटुतडित्कडारिमस्पर्द्ध मानमणि पाटल प्रभम्।
चिन्तयामि हृदि चिन्मयं वपुर्विन्दुनादमणि पीठ मण्डलम्।।४।।
ऊर्ध्वमस्य हुतभुक् शिखासखं तद्विलास परिवृंहणास्पदम्।
विश्वघास्मरमहोत्सवत्कटं व्यामृषामि युगमादि हंसयोः।।५।।
तत्रानाथ चरणारविन्दयोः कुंकुमासव झरीमरन्दयोः।
द्वन्द्वमिन्दुमकरन्दशीतलं मानसं स्मरति मंगलास्पदम्।।६।।
निषक्तमणिपादुका नियमिताघ कोलाहलस्फुरत्किशलयारुणं नखसमुल्लसच्चन्द्रकम्।
परामृत सरोवरोदित सरोजसद्रोचिषं भजामि। शिरसि स्थितं गुरुपदारविन्दद्वयम्।।७।।
पादुका पञ्चक स्तोत्रं पञ्चवक्त्राद्विनिर्गतम्।
षडाम्नायफलं प्राप्तं प्रपञ्चे चातिदुर्लभम्।।

।। सत्यंवद् धर्मं चर।।

इति शिव पञ्चववत्राद्विनिर्गतं पादुका पञ्चक स्तोत्रं समाप्तम्

श्री स्वामिस्तवः

गुं गुरुभ्यो नमः

श्री गणेशाय नमः। श्री पीताम्बरायै नमः।

अथ श्री स्वामिस्तवः प्रारभ्यते, सर्वाभीष्ट सिद्धयर्थे जपे/पाठे विनियोगः।

पीठस्था ये सिद्धास्सन्ति, शुद्धा बुद्धा मुक्तास्सन्ति।
सर्वैर्विज्ञैर्ये विज्ञाताः, विज्ञातेप्यज्ञाताः सन्ति।।१।।
वेदज्ञास्तन्त्रज्ञा एते, धर्मज्ञास्तत्वज्ञा सन्ति।
योगज्ञा यागज्ञश्चैव, लोकेऽस्मिन्लोकज्ञास्सन्ति।।२।।
वेदानां ये व्याख्यातारः, मन्त्राणां दृष्टारः सन्ति।
सर्वा विद्या वै शास्त्राणि, जिह्वाग्रे तेषां नृत्यन्ति।।३।।
वैदुष्यं तेषां विख्यातम्, सिद्धत्वं प्रत्यक्षं भांति।
औदार्ये कारुण्ये वाऽपि, गाम्भीर्येशीर्षस्थाः सन्ति।।४।।
बालानां सारल्यं तेषु, मातृणां कारुण्यञ्चस्ति।
देवानां देवत्वं तेषु, सर्वैः सम्यक् ज्ञातं चास्ति।।५।।
संसारे सिद्धः श्रूयन्ते, प्राज्ञानां बाहुल्य दृष्टम्।
सिद्धत्वं विद्वत्वं भिन्नम्, भिन्ने सत्यस्मिन् संयुक्तम्।।६।।
शक्त्या ये सम्पन्नाः सन्ति, सर्वं कर्तुं शक्ताः सन्ति।
अस्माकं सौभाग्या भावात्, तत्सर्वं प्रच्छन्नं चास्ति।।७।।

प्रातः सायं रात्री काले, मातुर्जापं ये कुर्वन्ति।
निद्रा त्यक्ता सिद्धिर्लब्ध्वा, अन्तर्लीनाः सन्तः सन्ति।।८।।
प्रातः सायं ये चायान्ति मन्त्राणां जाप्यं कुर्वन्ति।
पादानां सानिध्यं लब्ध्वा, आत्मानं धन्यं कुर्वन्ति।।६।।
धर्मोद्धारः राष्ट्रोद्धारः, आत्मोद्धारः तेषां मन्त्रः।
मन्त्राणामेतत् तात्पर्यम्, अस्माभिर्कि ज्ञातं हन्तः।।१०।।
आत्मैकत्वं ब्रह्मैकत्वं अस्मान् नियं ये शिक्षन्ति।
संसारं निस्सारं दृष्टवा, मर्त्यानां मोक्षं कुर्वन्ति।।११।।
संसारोऽयं माया कार्यः, तस्यात्यन्तोच्छेदः कार्यः।
आत्मा श्रोतव्यो मन्तव्यः, तस्मादात्मानं पश्यन्ति।।१२।।
बालानां सान्निध्यं लब्ध्वा, तेऽत्यन्तं हृष्टा जायन्ते।
मिष्टान्नं तेंभ्यो दत्वा ते, स्वीये चित्ते संमोदन्ते।।१३।।
बालानां शुद्धत्वं प्राप्यम् शुद्धत्वे ब्रह्मात्वं चोक्तम्।
तस्मादेतेषां शुद्धत्वम् सर्वैः सम्प्राप्यं तैरुक्तम्।।१४।।
आकृत्यां तेषां दिव्यत्वम् दिव्यत्वे देवत्वम् दृष्टम्।
वाण्याः सारल्यं सत्यत्वम्, वाणीयं कि वक्तुं योग्या।।१५।।
सर्वान् कष्टान् ये कृन्तन्ति, सर्वान् दोषान् ये क्षाम्यन्ति।
सर्वेषा रक्षां कुर्वन्ति, सर्वेषा सौख्यं वाञ्छन्ति।।१६।।
पुत्रान् पौत्रान् ये याचन्ते, राज्ये लाभं ये कांक्षन्ते।
रोगात्मुक्तिर्ये वांच्छन्ति, सर्वेभ्यः सर्वं यच्छन्ति।।१७।।

श्री स्वामी

दुःखानां शीघ्म् हर्तारः, सौख्यानां क्षिप्रं दातारः,।
अन्तर्लोकानां जेतारः, ऊर्ध्वस्थानां ये भेत्तारः।।१८।।
सर्वंज्ञेयानां ज्ञातारः, शास्त्राणां ये चाध्येतारः,।
ज्योतिष्मत्या ये दातारः, गुह्यादगुह्यस्यये ज्ञातारः।।१६।।
जापै सिद्धेर्ये कर्त्तारः, भुक्तेर्मुक्तेर्ये दातारः,।
दिव्यात् दिव्यं देव्यारूपम्, दिव्यैर्नेत्रैये दृष्टारः।।२०।।
देवस्थानं, पीठस्थानं, यज्ञस्थानं ग्रन्थस्थानम्।
एतेषां निर्मातारः सर्वेषां कल्याणं कुर्युः।।२१।।
मनः संकल्प सिद्धयर्थ स्तवनं पठितं मया।
सप्त वारं पठेन्नित्यं, सिद्धिर्भवति निश्चिता।।

- इति कालू पण्डित प्रणीत श्रीस्वामीस्तवः समाप्त -

कथा सार

श्री गुरु वन्दना

भवसागर-तारण कारण हे, रविनन्दन बन्धन खण्डन हे!
शरणागत किंकर भीत मने, गुरुदेव दया कर दीन जने!
हृदि-कन्दर तामस-भास्कर हे, तुम विष्णु प्रजापति शंकर हे!
परब्रह्म परात्पर वेद भणे, गुरुदेव, दया कर दीन जने!
मन-वारण-कारण अंकुश हे, नर त्राण करे हरि-चाक्षुष हे!
गुणगान-परायण देवगणे, गुरुदेव दया कर दीन जने!
कुल-कुण्डलिनी तुम भंजक हे, हृदि-ग्रन्थि विदारण-कारण हे!
महिमा तब गोचर शुद्ध मने, गुरुदेव दया कर दीन जने!
अभिमान-प्रभाव-विमर्दक हे, अति दीन जने तुम रक्षक हे!
मन कम्पित वंचित भक्ति धने, गुरुदेव दया कर दीन जने!
रिपूसूदन मंगल-नायक हे, सुखशांति-वराभय दायक हे!
त्राय ताप हरे तव नाम गुणे, गुरुदेव दया कर दीन जने!
तव नाम सदा सुख-साधक हे, पतिताधम-मानव-पावक हे!
मम मानस चंचल रात्रि-दिने, गुरुदेव दया कर दीन जने!
जय सद्‌गुरु! ईश्वर प्रापक हे, भव-रोग-विकार विनाशक हे!
मन लीन रहे तब श्री-चरणे, गुरुदेव, दया कर दीन जने।

श्री गुरुध्यानम्

अखंडमंडलाकारं व्याप्तं येन चराचरम्।
तत्पदं दर्शितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।
अज्ञानतिमिरांधस्य ज्ञानाऽजनशलाकया।
चक्षुरुन्मीलितं येन तस्मै श्रीगुरवे नमः।।
ब्रह्मानंदं परमसुखदं केवलं ज्ञानमूर्तिम्।
द्वंद्वातीतं गगनसदृशं तत्वमस्यादिलक्ष्यम्।।
एकं नित्यं विमलमचलं सर्वधीसाक्षिभूतम्।
भावातीतं त्रिगुणरहितं सद्गुरु तं नमामि।।
आनंदमानंदकरं प्रसन्नं, ज्ञान स्वरूपं निजबोधरूपम्।
योगीन्द्रमीड्यं भवरोगवैद्य श्रीमद्गुरुं नित्यमहं नमामि।।
ध्यानमूलं गुरोर्मूर्तिः पूजामूलं गुरोः पदम्।
मंत्रमूलं गुरोर्वाक्यं मोक्षमूलं गुरोः कृपा।।
नित्यं शुद्धं निराभासं निर्विकारं निरन्जनम्।
नित्यं बोधं चिदानन्दं गुरुं ब्रह्मा नमाम्यहम्।।
गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुः गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुरेकं परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः।।

ॐ तत्सत् ॐ

प्रार्थना

ॐ ज्ञानतोऽज्ञानतो वाप्यन्मनसा क्रियंते विभो।
मम कृत्यमिदं सर्वमिति देव क्षमस्व मे।।१।।
अपराध सहस्त्राणि क्रियंतेऽहर्निशं मया।
दासौयमिति मां मत्वा क्षमस्व परमेश्वरा।।२।।
अपराधो भवत्येव सेवकस्य पदे पदे।
कोपरः सहतां लोके केवलं स्वामिनं बिना।।३।।
भूमौ स्खलितपादानां भूमिरेवावलंवनम्।
त्वयिनातापराधानां त्वमेव शरणं प्रभो।।४।।

क्षमापनं

ॐ आवाहन न जानामि न जानामि विसर्जनम्।
पूजामर्चां न जानामि त्वं गतिः परमेश्वरः।।१।।
मन्त्राहीनं क्रियाहीनं भक्तिहीनं सुरेश्वरः।
यत्पूजितं मया देव परिपूर्णं तदस्तु मे।।२।।
यदक्षार पदभ्रष्टं मात्राहीनं च यद्भवेत्।
तत्सर्वं क्षम्यतां देव प्रसीद परमेश्वर।।३।।

कर्मणा मनसा वाचा नान्यद् गतिर्मम।
अन्तश्चारेण भूतानां द्रष्ट्रीत्वं परमेश्वर।।४।।
अन्यथा शरणं नास्ति त्वमेव शरणं मम।
तस्मात्कारुण्य भावेन क्षमस्व परमेश्वर।।५।।
मातर्योनि सहस्रेषु येषु येषु ब्रजाम्यहम्।
तेषु तेष्वचला भक्ति रस्तु मे सदात्वयि।।६।।
गतं पापं गतं दुःखं गतं दारिद्रयमेव च।
आगता सुख सम्पत्तिः पुण्या च तव दर्शनात्।।७।।
देवो दाता च भोक्ता च देवरूपमिदं जगत्।
देव जपति सर्वत्र यो देवः सोहमेव हि।।८।।
क्षमस्व देव देवेश क्षम्यते भुवनेश्वर।
तव पादांबुजे नित्य निश्चला भक्तिरस्तु मे।।६।।
त्वमेव माता च पिता त्वमेव, त्वमेव बन्धुश्चसखा त्वमेव।
त्वमेव विद्या द्रविणं त्वमेव, त्वमेव सर्वंमम देव देव।।

प्रकाशक : श्री पीताम्बरा संस्कृत परिषद्, दतिया (म.प्र.)
मुद्रक : शिवशक्ति प्रेस प्रा. लि., ग्वालियर रोड, झाँसी
द्वितियावृत्ति : ३०००

अमृतेश्वर महादेव

मंदिर परिसर का अन्य भाग

मंदिर परिसर का अन्य भाग
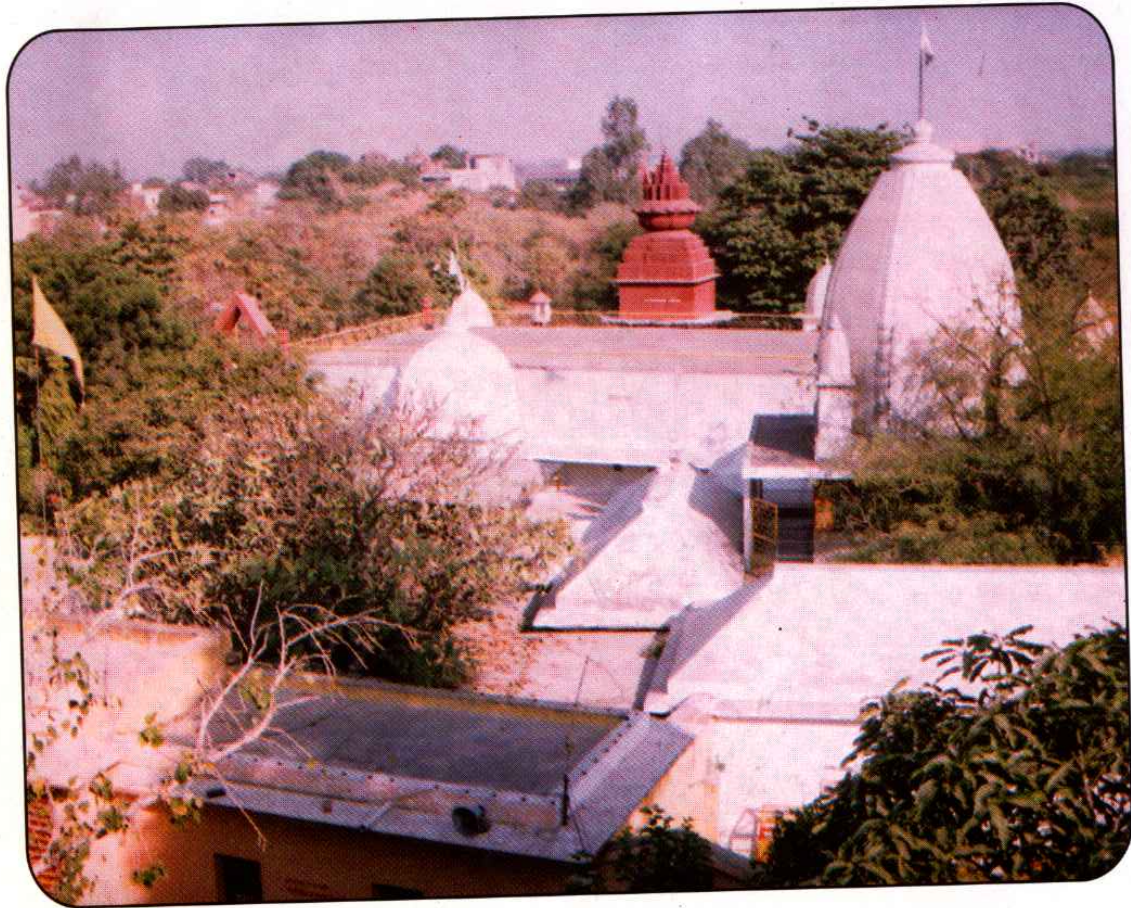
मंदिर परिसर का एक भाग
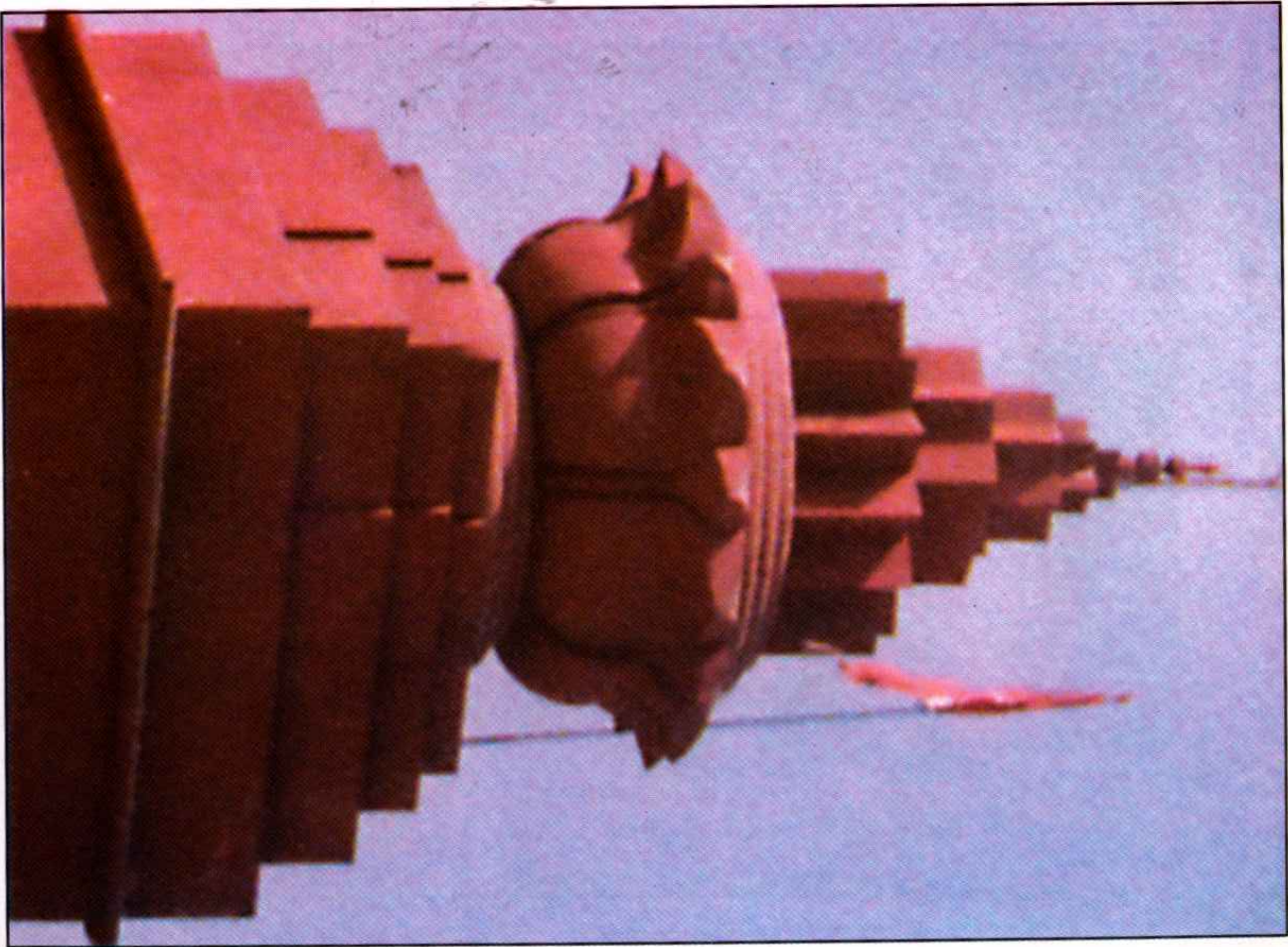
गुरुमण्डलम् (मेरुपृष्ठ)

यज्ञशाला

श्री हरिद्रा सरोवर

महाभारत कालीन प्राचीन श्री वनखंडेश्वरनाथ महादेव

अमृतेश्वर महादेव (श्री स्वामीजी का समाधिस्थल) एवम् पिछे
"मणिपुरधाम" श्री स्वामी मंदिरम्

यज्ञशाला

संत शिरोमणी महान संत अनन्त श्री पूज्यपाद श्री स्वामीजी का विग्रह